श्री सौधर्म बृहत्तपागच्छिय श्रीमद्वाचनाचार्य

मुनी श्री धनविजयजीमहाराज विरचित

पदार्थ सुधा सिंधु तरंगका पंचम वर्ग

त्रिक-चतुष्क-प्राचीन-अर्वाचीन-स्तुतिभी-

श्रीदेववंदनानिर्णयपताका

अपरनाम

भावस्तवे द्रव्यस्तव कर्तृक जैनशास्त्र विरुद्ध

पीतांबर नविन पंथी श्री सुरत संघ

अगत्य ठेराव खंडन.

तेने मरुधर देशना सायला नगर निवासी

श्री संघ समस्तने छपवाके प्रसिद्ध किया।

धर्मघात्

युनियन मुद्रायंत्र कम्पनी लिमीटेडमें मुद्रित किया।

संवत १९६०   सने १९०४.

पदार्थ सुधा सिंधु तरंगका पंचमवर्ग.

श्री देववंदन निर्णय पताका.

उपोद्घात.

॥ श्री अर्हनमः सत्यधर्मो जयति ॥

स्वस्तिश्री जैन धर्मावलंबी सर्व देशनगरीके समस्त श्वेतांबर श्रीसंघको विदित होवेकि इस पंचमकाल हुंडावसर्पिणी योगसें मत वादियोने अपनी अपनी मनमानी प्ररूपणा प्रवर्त्तना करके अकलंक सर्व दोष रहित श्री सर्वज्ञ प्रणित परम पवित्र पूर्वापर अविरुद्ध श्री जैन धर्मकी पूर्वापर विरुद्ध प्ररूपणा करके चालणी प्राय कर दियाहै तोभी संतोष न करते अपना अपना मत पोषणेकों परस्पर राग द्वेष वादविवाद करके श्री जैन धर्मकों निंदित करा रहेहै तिसकी मिसाल यहहैकि हाल थोडे दिनोसें श्री सुरत सहरसें "जाहेर खबरपत्र" और "सुरत जैन संघका अगत्य ठेराव" यह नामका चोपानिया छपके देशाग्रहोमें प्रसिद्ध होनेसें तीन स्तुति के मतपक्षी लोक तो चार स्तुतिका मत खोटा शास्त्र विरुद्ध कहके चार थुइ करने वालोकी निंदा करतेहै, अरु चार थुइ के मतपक्षी लोक तीन थुइका नवीन पंथ शास्त्र विरुद्ध खोटा कहके तीन स्तुति करने वालोकी निंदा करतेहै;

और केइ वखत परस्पर रागद्वेषावेश करके मारामारी पिटापिटी होके एक कहताहै तीन थुइ करनी खोटीहै तब दूसरा कहताहै चार थुइ करनी खोटीहै.

इत्यादि जैनी नाम धारीयोंका परस्पर झगडा देखके केतनेक स्वमतके भद्र (भोले) जीवतो जैन धर्मकी श्रद्धासें डमडोल हो रहेहै और अन्य दर्शनके लोक तो उज्वल मुख करके परस्पर कहतेहैकि देखो भाइ जैनी लोक अपने वेदादिक शास्त्रोंकों परस्पर विरुद्ध कहके अपनी वैश्नवादि मतकों मिथ्या कहतेहै परंतु इनका सर्वज्ञ वीतरागका मतकी वहार तो देखो ! इत्यादि स्वमत परमतका लोकोके मुखसें करी हुइ धर्म निंद्यासें विमुख ऐसे मरूधर देशके श्री सायला प्रमुख नगर ग्रामोंके कितनेक अपक्षपाती श्री संघ समुदायने श्री सौधर्म बृहत्तपागच्छिय वाचनाचार्य मुनिश्री धनविजयजी महाराजकों विनंती पूर्वक पृच्छा कियीकि महाराज साहेबजी श्री सुरत वंदरसें तीन चार थुइका झगडा छपके आया इन दोनुमें सच्च जूठ क्याहै और चैत्यवंदन अर्थात् देववंदनमें पूर्वापर परंपरासें तीनथुइकी देववंदना चली आतीहै कि चारथुइकी? अरू चारथुइकी देववंदना सामायिक पौषधादिकमें करनेकी हैकि तीन थुइकी? इन बातोंका निर्णय एक दूसरेकी पक्षपात रहित आप दया करके हमकों करदिजीये जिस्कों छपवाके प्रसिद्ध करनेसें अपक्षपाती भव्यजीवो असत्यकों छोडके सत्यकों ग्रहण करेंगे तिस्का आपकों वहोत लाभ होगा, ऐसा श्री संघका अपक्षपात आशय सूचक वचन सुनके

वाचनाचार्यजीने उत्तरदान दियाकि-हमने-तो "श्री चतुर्थ स्तुति निर्णय शंकोद्धार" पुस्तकमें (२७९) सूत्र पंचांगी तथा ग्रंथोकि साक्षीसें तीन और चार स्तुति जिस जिस स्थानोमें करनेकी तिस्का निवेडा प्रथमसेंही कर दियाहै. परंतु एकांत तीन स्तुति मान्य करनेवाले मत पक्षी लोक तो चतुर्थ स्तुतिकों एकांत उत्थापके दुर्लभ बोधि कर्म उपार्जन कर रहेहे और एकांत चार स्तुति के मान्य करनेवाले लोक तीन स्तुतिका नवीन पंथ शास्त्र विरूद्ध कहके दुर्लभ बोधि कर्म उपार्जन कर रहेहै कारण के चार स्तुति देववंदनाके थापक तो पूर्वधर गीतार्थोकी आचरणा उत्थापन करतेहै और तीन स्तुति देववंदनाके थापक बहुश्रुत गीतार्थोकी आचरणा उत्थापन करतेहै यह दोनुं एकांत मतपक्षी तो जो कदाचित् इनकों महाविदेह क्षेत्रसें केवली महाराज आयके समजावे तो समजकेभी अपना मतपक्षका पूंछडा छोडणेके नही. वास्ते एकांत मतपक्षीयोंके लिये तो वृथा प्रयास हम करते नही परंतु तुम सरिखे अपक्षपाती समद्रष्टी भव्यजिवोंके हितके लिये "श्री सुरत जैन संघका अगत्य ठहराव और जाहेर खबर सूर्योदयः" इन दोनुंका समालोचन करतेसेंही तुमकों निर्णय हो जायगा कि तीनथुइकी देववंदना तथा चारथुइकी देववंदना पूर्वापर परंपरासें चलीआतीहै इन दोनुको उत्थापन करके, यह दोनुं एकांत मतपक्षी परस्पर झगडके वृथा अत्युतम श्रीजैनधर्मकी निंद्या कराके कांक्षा कर्कस मोहनी कर्म बांध रहहै.

॥ अथ समालोचना निर्णयो ॥

अगत्य ठेरावका चोपानिया पृष्ट दूसरेमें लिखाहै कि— पन्यासजी समक्ष राजेंद्रसूरिजीने शंघ तरफथी मी०चुनिलाल छगनचंद रीतसर पूच्छतां हतां अने तेनो उत्तर राजेंद्रसूरिजी बालता हता, प्रश्न उत्तर प्रत्युत्तर चालतां गीतार्थ पुरुषोए अंगिकार करेलो परंपराथी चालयो आवतो जीतव्यवहार निषेधवा योग्य नथी ए खरूं? आ प्रश्ननां उत्तरमां तेवणे (असठेन समायरियं) इत्यादि गाथा कही वतावी तेनो भावार्थ पोतेज कही संभलाव्यो के असठ (मूर्ख नहीं) एवा पुरुषे सम्यक प्रकारे आचरेलुं अने तेने बहु जनोए संमत करेलुं एवुं असावद्य कृत्य कोइये उत्थापन करवा योग्य नथी, आ गाथानो भावार्थ उपला प्रश्ननेज पुष्टी कर्त्ता होवाथी सुज्ञ जनोनां समज्यामां आव्युं के सैंकडो वर्षथी चालयो आवतो चार थुइ कहेवानो रिवाज एवणे पोतेज सरूमा कबुल कर्या मुजब त्रीस वर्षथी उत्पन्न करेला त्रण थूइनां रिवाज करतां वधारे मान्य छे एटलुंज नही पण ते कदी उत्थापन थइ शकेज नही.

उ० ले० समा० यह उक्त बनाव ऐसा बनाकी कोइ गांव नगरमें गाय भैंस बकरीका दुग्ध जन्म भरसें नजरोंसें देखा नही ऐसे लोकोकी सभा भराके कोइ स्थलमें बेठीथी तिस अवसरमें कोइ भोला संत फिरता फिरता उस स्थलमें आ निकसा तिस्कों कोइ मुर्ख सख्सने प्रश्न कियाकि महाराज दूध कैसा होताहै ? उक्त संतने उत्तर दियाकि भाइ पाणी जैसा पतला और सफेत वर्ण पीव

तेकुच्छ मीठाश लगताहै अरू उसमेंसें मख्खन घी पेदाश होताहै. यह स्वालका जवाब सुनतेही परस्पर सभाके लोक बोलेके भाइयो इसमें क्या पूच्छनाहै सेंकडो वर्षसें अपने दादे पडदादेके मुखसें सुनतेआतेहै कि उक्त लक्षणवाला दूध होताहै तो अपने नगर गांवके सिमाडेमें सेंकडो आकडा थुहर खडेहै तिस्का दूध पीनेका रिवाज करो तिसिसें अपना सर्वका शरीर पुष्ट होगा! और अपने घर घरमें उंटडीयांहे तिनोंके दूध बहोतही होताहै तिस्को जमाव विलोव के घी पेदाश कर देशावरोमें चढादो तो अपने धनवानभी होजावेंगे! ऐसा रिवाज करनेंसें गांव नगरके लोक बहोत दुखी अरू निर्धन होगये; तैसे मो. चुनीलाल छगनचंदका पूच्छनां हुवा और सूरिजीने (असढेन समाइण्णं) इस गाथाका भावार्थ कहके जीत व्यवहार अर्थात् आचरणाका लक्षण बताया तिस्कों सुनतेंही एकपक्षी (सुज्ञजन) सभाजन आचरणांका विवेचन तथा पहिचान किये विगर अपनां मनमानी सठ आचरणा पीतवस्त्रादि तथा एकांत चार थुइकों (आचरणा) रिवाजकों सूरिजीने कबुल किये विगर अपने मनसें कबुल किया कह दिया! और एकांत तीन थुइ माननेका संवत (१२५०) सें आगमिक मतीयोंका चलाया हुवा रिवाजकों (३०) वर्षसें सूरिजीका चलाया हुवा रिवाज कह दिया और कारणविना साधुके अधिकार तथा सामायिक सहित प्रतिक्रमणमें तीनथुइ कहनेका पूर्वधरोकी वारसें हजारो वर्षोका प्रचलित रिवाजसें एकांत नवीन चार थुइ कहनेका रिवाजकों—तीन थुइका

रिवाजसें अधिक मान्य अरु उत्थापन होशकेंहा नहीं ऐसा अपने मनसें मान लिया यह माननां कैसा हुवाकि उक्त दृष्टांत के मूर्ख जनोने गाय भैंसका दूध अरु अर्क थंटडी आदिक दूधको एक सरिखा आचरण किया तैसौ आचरणका माननाहै.

समालोचना निर्णय—(असढेण समाइण्णं) इस गाथाका भावार्थ सूरिजीने यथार्थ किया तो कहने या सुननेवाले दोनोको निर्णय कारकका पूच्छनाहैकि तीन तथा चार थुइको दोनुं देववंदनां (सठ) मुर्ख गीतार्थ आचरितहैकि (असढ) अमुर्ख आचरितहै ? जेकर कहोंगे सठ गीतार्थ आचरितहे तो सठ गीतार्थकी आचरणा तो पीतरूआदि आचरणावत सावद्यही होतीहै और तीन तथा चार थुइका देववंदनकी आचरणा तो पूर्वधर गीतार्थ श्री भद्रबाहु आदि आचार्य तथा जैन शासनमें सूर्य समान श्री हरीभद्र सूरिजी तथा वादि वेताल स्थिरापद्र गच्छैक मंडन श्री शांतिसूरिजी प्रमुख आचार्योने अपने रचित अनेक ग्रंथोसें साधुके अधिकारसें कारण विगर निरंतर तीन थुइके देववंदन अरु पूजादि विशिष्ट कारणमें चार थुइके देववंदन प्रतिपादन करतेहै तिनको (सठ) मुर्ख गीतार्थ किस न्यायसें मानते हो ? जेकर इन आचार्योको आप लोक सठ गीतार्थ मानोगें तो इन आचार्योकी रची हुयी पंचांगीही वर्तमानमें विद्यमानहै वोभी आपके अमान्य होगी ? जेकर विद्यमान पंचांगी आपके अमान्य होगी तो आप जैनके आचार्य या साधु वा श्रावक नही कहे जाओगे, क्योंकि जैनके

आचार्य साधु श्रावक तो उक्त आचार्यादि कृत पंचांगी या तिनके रचे हुये ग्रंथोकोंभी मान्यकर उन्के कथन प्रमाणे धर्म क्रिया कलाप करते करातेहे और तुमतो उन्कों सठ गीतार्थ माननेसें आपही सठ बन गये तो तुमकों कोन बुद्धिमान जैनके आचार्यादि मान्य करेंगे? अर्थात् अपने मनमानी क्रिया करनेसें जैनाभास कहे जाओगे और तीन तथा चार थुइके देववंदन असठ गीतार्थ आचरित कहोंगे तोभी तुमकों पूछनेकाहेकि पूर्वधरादि असठ गीतार्थ आचरितहेकि बहुश्रुत असठ गीतार्थ तथा जघन्य असठ गीतार्थ आचरितहे, जेकर कहोंगे पूर्वधर गीतार्थ आचरितहे तो व्यवहार भाष्यादि पूर्वधर आचार्यादि रचित पंचांगी तथा तिनके रचे हुये ग्रंथोंमें तीन तथा चार थुइके देववंदन करनेका विभाग प्रत्यक्ष जतायाहैकि (तिन्निवा कड्ढए जावथुतीओ ति सिलोइया ताव तथ्थ अणुण्णायं कारणेणं परेणवी) अर्थात् साधु चैत्यवंदन (देववंदन)कों जाय तब श्रुतस्तव अर्थात् पुख्खर वरदी कहने बाद तीसरी तीन श्लोककी थुइ कहे वा अथवा जो स्तुति कैसीक हेकि यावत् प्रणिधानांत तीन श्लोक कहे अर्थात् जयवियरायकी सेवणा आभव मखंडा पीछेकी बारिज्जइ जइवि आदि तीन गाथा कहे अर्थात् तीन थुइकी संपूर्ण चैत्यवंदना (देववंदना) विधि करे तहां तक चैत्य (जिन मंदिर)में रहनेकी साधुकों उत्सर्गमें आज्ञाहे और जो कोइ शांति स्नात्र तथा प्रतिष्ठादि कारण होय तो अधिक रहनेकीभी आज्ञाहै, यहां (कारणेण परेणवि) इस पाठसें पूर्वधर महा-

राजजीने तीनथूइका देववंदनका जाति निर्देशसें चोथी थुइका देववंदन साधुकों कारण परत्व करनेका जताया.

पूर्वपक्षः—(कारणेण परेणावि) इस पाठसें तो पूजा, प्रतिष्ठावि ओच्छवके कारण सबब साधुकों जिन मंदिरमें रहनां पूर्वधरोके वचनोसें सिद्ध होताहै परंतु चारथुइके देववंदन करना तो कारण परत्वभी पूर्वधरोके वारमें सिद्ध नही होताहे कारण के पूर्वधर रचित ग्रंथोमें तीन थुइके देववंदन करनेकी विधि तो प्रतिपादन कियी देखनेमें आतीहे परंतु चार थुइके देववंदन करनेकी विधि तो कारण परत्वभि कोइ पूर्वधरोके ग्रंथोमें देखनेमें आती नही ?

उत्तरपक्ष—पूर्वधर महाराजजीने अतिदेश सूत्रमें कारण परत्व चार थुइके देववंदन कहेहैं.

पूर्वपक्ष—अतिदेश सूत्र तो हमने कानोसंभी नही सुनातो तुमारी देखनमें कहांसें आया ?

उत्तरपक्ष—अतिदेश सूत्र तुमने कानोसें नही सुना तोभी हमनेतो नजरोसें देखे मुजब तुमकों सुनाते हैं सो सकर्ण होके सुनोकि पूज्य श्री कुलमंडनसूरि कृत "विचारामृतसंग्रह" ग्रंथके प्रथम जिन प्रवचन स्वरूप विचारमें श्री आचारांग निर्युक्ति वृत्ति तथा श्री निशीथभाष्य शाक्षीसें अतिदेश सूत्र बतायाहैकि (अतिदेश पूर्वापर सापेक्षार्थाति गहनं) अर्थात पूर्व सूत्रतो अपर आगेका सूत्रार्थकी अपेक्षा करे और आगेका सूत्र पूर्वका सूत्रार्थकि अपेक्षा करे वह अतिदेश सूत्र वा हेतु निर्देश सूत्र कहावे वो अतिदेशसूत्र सर्व सूत्रोमें अंतरभूत (अलब्ध संख्या) अर्थात् संख्या रहितहे. तिन अतिदेश सूत्र साक्षीसें

व्यवहार भाष्यादिक पूर्वधर विरचित् अर्थागम सूत्रमें तीन स्तुतिके देववंदन साधुकों सदा निरंतर करनें और कारण परत्व चारस्तुतिके देववंदन करनां प्रतिपादन किये हैंकि श्री व्यवहार भाष्यमें (दुब्भीगंध परिस्साधि) इत्यादि पूर्व सूत्रमेंतो आशातनाके भयसें जिनमंदिरमें साधुकों बैठनाही मनाकिया. और (तिंनिवा कड्ढइ थुइओ) इस अपर आगेका पाठ सूत्रमें तीन थुइके देववंदन करे तब तक जिन मंदिरमें रहनेकी साधुकों आज्ञा भइ. तो एक धर्म संबंधी कार्य विगर सोना, बेठना, वास करनां, इत्यादि शरीर संबंधी कार्य तो सर्व निषेध हो चुके तो (कारणेण परेणावि) इस अपर आगेका पाठसें जिनमंदिरमें कौन कौन कार्य साधुकों करनेंकि भव्योंकों उपदेश करना, तथा प्रतिष्ठादि स्नात्रोच्छव करना कराना इत्यादि धर्म कार्य करनेकी पूर्वधर महाराजजीने आज्ञा जनाइ हैं.

पूर्वपक्षः—(कारणेण परेणावि) इस सूत्रका अतिदेश पाठसेंतो जिनमंदिरमें उपदेश प्रतिष्ठादि करनां करानें साधुकों सिद्ध होताहे, परंतु चारथुइके देववंदन तो कारण परत्वभि करनां सिद्ध नहीं होताहे, क्योंकि कल्पभाष्य तथा चंदन पयन्नादि पूर्वधरोंके रचित् ग्रंथोंमें तीनथुइके देववंदन करनेकी विधितो प्रतिपादन कियी हुइ देखनेमें आतीहें, परंतु चारथुइके देववंदन विधी तो कारण परत्वभि साधुकों करनी प्रतिपादन किइ देखनेमें आती नहीहे?

उत्तरपक्षः—तुमने उपदेश तथा प्रतिष्ठादि धर्म कार्यके लिये कारण परत्व साधुकों जिनमंदिरमें रहना स्विकार किया तो तीनथुइका अतिदेश वाक्यसें चारथुइका देववंदन करानाभि कारण परत्व स्विकार करनाही पड़ेगा,

कारण के श्री भद्रबाहु स्वामीजी तथा श्री श्यामाचार्यादि पूर्वधरोंके किये प्रतिष्ठाकल्पोमें प्रतिष्ठाकारक आचार्यकों तथा चतुर्विध संघकों चार थुइके देववंदन करनाँ करानाँ विधि पूर्वक प्रतिपादन किये श्रवण होतेहै तथा तिसके लेख बहुश्रुत कृत ग्रंथोमें देखनेमें आतेहै, वास्ते चारथुइके देववंदनभि कारणपरत्व साधुकों करनां पूर्वधरोके वचनोसें सिद्धहै.

पूर्वपक्षः—जो पूर्वधरोकी वारमें कारण परत्वभि चार थुइके देववंदन करतेथे तबतो यह पूर्वधरोकी आचरणा सिद्ध भइ, जो चारथुइके देववंदनकी पूर्वधरोकी आचरणा होतीतो नवांग वृत्तिकारक बहुश्रुत गीतार्थ श्रीमद् अभयदेव सूरिजी श्री पंचाशक वृत्तिमें लिखतेहैकि (चतुर्थ स्तुति किलाऽर्वाचीना) अर्थात् चोथीस्तुति नवीनहै, असा न कहते, क्योंकि पूर्वधरोंकी आचरणाकों नवीन आचरणा नही कही जातीहै, वास्ते यह चतुर्थस्तुति कहनेकी आचरणा पूर्वधरोकी आचरणा मालुम नही देतीहै, फिर तुमनेभि "चतुर्थ स्तुति निर्णय शंकोद्धार" के अग्यारमां परिच्छेदमें लिखाहैकि "चोथीथुइ सहित तनिथुइ की देववंदना पूर्वधर गीतार्थ कृत अर्थागम आचरणासें नही परंतु बहुश्रुत गीतार्थ कृत अर्थागम आचरणासेंहै" अबतुम यहां कारण परत्व पूर्वधरोंकी आचरणा सिद्ध करते होतो यह तुमारा पूर्वापर वचन विरोध होता है.

उत्तरपक्षः—वाहजी वाह! तुमने हमकों पंचाशकवृत्ति अरु हमारा लेख इन दोनुंका आक्षेप निर्णयके लिये अच्छा किया! अब पक्षपात रहित होके दोनु लेखका अभिप्राय समझो कि विद्यमान प्रतिष्ठाकल्प जोकि तुम हम

जिनकों ऐसे प्रतिष्ठादि विधि करते कराते है, तिनोंमे गीतार्थ पुरुष लिखते है कि श्री भद्रबाहु तथा श्री श्यामाचार्यादि पूर्वधर गीतार्थ और श्री हरिभद्रादि बहुश्रुत गीतार्थोंके रचित प्रतिष्ठाकल्पोंकों देखके यह प्रतिष्ठाकल्प रचना कियाहै; अरु तिने प्रतिष्ठाकल्पोंमें चारथुइके देववंदन विधिपूर्वक लिखे देखनेमें आनेहै तो जैसे दूसरी विधि पूर्वधरोंके अनुसार मान्य होतीहै तैसे यह विधिभि सब गीतार्थ मान्य करतेहै क्योंकि "कूयेमें होय तो अवाडेमें आवे" तैसे पूर्वधरोका लेख विना दूसरे गीतार्थ कबहु लिखे नही, वास्ते प्रतिष्ठादि कारण परत्वतो साधु श्रावक दोनोके पूर्वधरोकी वारसें चारथुइके देववंदन करनेकी आचरणा चली आतीथी परंतु पूर्वधरोके पीछे पूर्वधर निकटकालवर्त्ति श्री हरिभद्रादि बहुश्रुत गीतार्थोने द्रव्य क्षेत्रादि विचारणासें श्रावकोके द्रव्य जिनपूजाके अवसरमें चोथीथुइ सहित देववंदन करनेकी आचरणा सरु कियी तबसें भावस्तवके अधिकारी साध्वादिक तो भावस्तवके अवसर अर्थात् चारित्रादिक अनुष्ठान करती वखत चैत्यवंदन विधि करते तब पूर्वधरोकी आचरणा मुजब तीनथुइसें देववंदन विधि करते अरु द्रव्यस्तवके अधिकारी श्रावक द्रव्यस्तवके अवसरमें अर्थात् द्रव्य जिनपूजाके अवसर चारथुइसें देववंदन विधि करते और भावस्तवके अवसर तीनथुइसें देववंदन विधि करते इसी उक्त दोनुं आचरणाका विभाग दर्शानेकों पूज्य श्री हरिभद्राचार्य "ललित विस्तरा वृत्ति"में लिखतेहै कि (इह साधुः श्रावको वा चैत्य ग्रहादावे कांत प्रयतः परित्यक्तान्यकर्त्तव्यः प्रदीर्घतर तदुत्थान गमनेन यथा संभवं

भुवन गुरोः संपादित पूजोपचारः इत्यादि) भावार्थ यहां साधु अथवा श्रावक जिनमंदिरादिकमें एकांत यत्नसें सर्व अंन्य कार्य तजके वहोत दीर्घ तिस्सें भाव करके यथायोग्य जैसी संभवै तैसी तीर्थंकर महाराजकी पूजोपचार (पूजासामग्री) करके अर्थात् साधु योग्य साधुकों और श्रावक योग्य श्रावककों द्रव्यभाव पूजा सामग्री करके यथा संभव विधि आगे कहे मुजब प्रणिपात दंडकादिक कहके चैत्यवंदन (देववंदन) विधि करनी इत्यादि भाव दर्शानेकों पूज्यपादने (यथा संभव) तथा (संपादित पूजोपचारः) यह दो विशेषण चैत्यवंदन विधिमें धारन कियाहै.

पूर्वपक्षः—द्रव्यस्तवके अधिकारी श्रावकों तो एक प्रकारसें तथा अनेक प्रकारसें द्रव्यपूजा (द्रव्य जिनपूजा) सामग्री करके पीछे चैत्यवंदन विधि करनां सो ठीक, परंतु भावस्तवके अधिकारी साध्वादिकोंको द्रव्यस्तव करनेका अधिकारही नही तो द्रव्यपूजा सामग्री करके फेर चैत्यवंदन विधि करनेका संभव कैसे होय, तथा साधु श्रावक दोनोंके चैत्यवंदन विधि करनां यहही भावपूजा है तो फेर उस्की क्या सामग्री करनीहै सो द्रव्यभाव पूजा सामग्री करे पीछे चैत्यवंदन विधि करनेका वहु श्रुत आचार्य महाराज प्रतिपादन करते है ?

उत्तरपक्षः—भावस्तवके अधिकारी साध्वादिकोंकोंभि प्रतिष्ठादि कारण परत्व वासक्षेपादिक (द्रव्यस्तव) अर्थात् द्रव्यपूजा करनेकी आज्ञा प्रतिष्ठाकल्पादिकोंसें पूर्वधरादिक आचार्योंने प्रगट प्रतिपादन कियाहै तो साध्वादिक तो प्रतिष्ठादि कारण परत्व द्रव्यपूजाकी सामग्री अर्थात् प्रतिष्ठादिकमें जो जो विधि विधान करनेका है

तिनकों किये बाद जहां जहां चारथुइसें देववंदन करनेका लिखाहै नहां तहां चारथुइसें देववंदन करे और प्रतिष्ठादि कारण विना निरंतर भावपूजाकी सामग्री जो इरियावही प्रमुख करे, पीछे पूर्वधरोकी आचरणा मुजब तीनथुइकी देववंदना करे. तथा द्रव्यस्तवके अधिकारी श्रावकतो त्रिकाल जिनपूजाकी द्रव्यसामग्री कियेबाद भावपूजाकी सामग्री जो इरियावहि प्रमुख किये पीछे यथावसर देखके बहुश्रुतोकी आचरणा मुजब चारथुइके देववंदन करे, और द्रव्यपूजादिकके कारण विना-अपनां देशविरती चारित्रानुष्ठान जो सामायिक पौषधादिकमें (समणो इव सावओ हवइजम्हा) अर्थात् सामायिकादिकमें श्रावक साधु जैसा होताहै, ऐसा आवश्यक निर्युक्ति प्रमुख पूर्वधरादिकोके वचनोसें साध्वादिक जैसे पूर्वधरोकी आचरणा मुजब तीनथुइके देववंदन करे, तैसे भावपूजाकी सामग्रीजो इरियावहि प्रमुख करके तीनथुइके देववंदन करे, और द्रव्यपूजा जैसे द्रव्यस्नान पूर्वक सामग्रीसें होतीहै तैसे चैत्यवंदनादिक भावपूजा इरियावहि प्रमुख भावस्नान सामग्रीसें होतीहै, वास्ते पूर्वधर गीतार्थोकी दोनुं आचरणा साबूत रखणेके लिये उक्त दोनुं विशेषण वृत्तिकारजीने चैत्यवंदन विधिकी आदिमें प्रतिपादन कियेहै.

पूर्वपक्षः—जो दोनु आचरणा साबूत रखणेकों "ललित विस्तरा चैत्यवंदन सूत्र" वृत्तिकारजीने उक्त दोनुं विशेषण लिखेहै तो वृत्तिकारजी पिछेके आज पर्यंत बहुश्रुतोके ग्रंथोमें दोनुं आचरणाका लेख होना चाहिये, सो तो दिखते नही, वास्ते पूर्वधरोके वर्ताव पीछे जबसें चार थुइके देववंदनकी आचरणा सरु हुइ तबसें "पंचमीकी

संवत्सरी" जैसे "चतुर्थीमें" लीन हुइ, तैसे तीनथुइके दे- ववंदनभि चारथुइके देववंदनमें लीन हो गये मालुम देतेहै ?

उत्तरपक्षः—जो तीन थुइके देववंदन चार थुइमे लीन हो गये होतेतो वृत्तिकारजी उक्त दोनु विशेषण वृथा क्यं धारण करते? सीधा ऐसेही लिख देतेकि साधु श्रावक चै त्यवंदन विधि करेतो प्रणिपात दंडकादि विधि आगे कहं जाती है तिस्मुजब करे, परंतु उक्त विशेषणोसें यहही मा लुम देता हैकि "पंचमी संवत्सरी चतुर्थीवत्" तीन थुइके देववंदन चार थुइके देववंदनमें लीन नही होशके, कारणकि पूर्वधरोकी आचरणा पूर्वधरोके वचनोसें पूर्वधर गीतार्थ महाराजनेही लीन करी होय तो बहुश्रुत गीतार्थ लीन कर शके अन्यथा नही करे, जैसे (अंतरावियसे कप्पइ पूर्वधर महाराजका यह सूत्र वचनसें श्री कालिकाचार्य पू र्वधर महाराजजीने पांचमकी संवत्सरी चोथमें लीन करी तद्पीछे बहुश्रुत गीतार्थोने कारण दोष विचारके लीन करी, तैसे चोथीथुइके देववंदनमें तीनथुइके देववंदन कोइ पूर्वधर महाराजजीने लीन करे होतेतो बहुश्रुत गी तार्थोकी आचारणामें तुमारे कहने म्वाफिक लीन होजाते परंतु (कारण यासे चउथी) इत्यादि पूर्वधर तथा बहु श्रुत गीतार्थोका लेखहै, तिस्मुजब तीन थुइका देववंदन लीन होनेका लेख कोइ पूर्वधर तथा बहुश्रुत गीतार्थोंके ग्रंथोमें निजर नही आताहै, वास्ते तुमारी लीन होनेकी कु युक्ति जूठीहै; और तुमने पूर्वपक्षमें कहाकि वृत्तिकारजी पीछे आज पर्यंत बहुश्रुत गीतार्थोंके ग्रंथोमे दोनु आचर णाका लेख देखनेमें नही आताहै, यह कहना तुमारा ए कांत मतपक्षका है, जरा मतपक्षरूप पडल नजरोसें दूरक

साध्व्यादिकके अधिकारमें तीनथुइकी देववंदना और जिन पूजा अवसरमें चारथुइकी देववंदनाका लेख दर्शाके दोनुं आचरणाका करण मार्गणा दर्शावं कियाहै, तथा आज पर्यंत कालके पूर्व निकट कालवर्ती अंतके बहुश्रुत गीतार्थ न्याय सरस्वती विरुद धारक महोपाध्यायजी श्रीमद् यशो विजयजी भी दोनुं आचरणा करणमार्ग दर्शावके लिये "श्री प्रतिमाशतक स्वोपज्ञ वृत्तिमें" तो साध्व्यादिकके अधिकारकी तीनथुइको देववंदना लिखके दर्शाइ है, और प्रतिक्रमणादि बीजक हेतु स्वाध्यायमें श्रीजिन पूजाके अवसर श्रावकोंको बारमें अधिकार सहित चारथुइके देववंदन करनेका लेख दर्शाया है.

पूर्वपक्षः—एक आदि यावत् चौद पूरवके धारग पारगतो श्रुत स्थिवर तथा पूर्वधर गीतार्थ कहलाते हैं, परंतु बहुश्रुत गीतार्थ किस्कों कहते हो ?

उत्तरपक्षः—पूर्वधरोकी आचरणा मुजब वर्त्तनेवाले और वर्त्तमानके सर्व जैन शास्त्रोके सूत्रार्थ पारग धारग स्वमत परमत शास्त्रोके जाण अनेक नवीन ग्रंथ रचनेकी शक्ति होनेसें तिन्के रचित अनेक ग्रंथ देखनेमें आते होय और मतपक्षी विना भव गच्छवाले उन्के वचन मान्य करे वो बहुश्रुत गीतार्थ कहावे.

पूर्वपक्षः—उत्कृष्ट मध्यम जघन्य गीतार्थ कोन कहलाते है?

उत्तरपक्षः—एकादि यावत् चउद पूर्वितो उत्कृष्ट गीतार्थ अरु उक्त लक्षण के धारनेवाले बहुश्रुत गीतार्थ वो मध्यम गीतार्थ तथा व्याकर्णादि थोडे बहोत जैन शास्त्रोके जाण पूर्वधर तथा बहुश्रुत गीतार्थोकी आचरणाके रसिक मध्गीतार्थ परंपर आचरणाके अनादर करनेवाले अपने ग-

च्छ मतके पक्षपात रहित पूर्वधर तथा बहुश्रुत कृत दोचार ग्रंथोकी व्याख्याके करनेवाले वो जघन्य गीतार्थ कहलाते है.

पूर्वपक्षः—उक्त बहुश्रुतोने त्रिकाल जिन पूजन अव-सर चारथुइके देववंदन करनेकी आचरणा श्रावकोंकों उद्देश करके करी तो देवसूरिजी अपनी रचित "यतिदिन चर्यामें" तथा सिद्धसेनसूरिजी "प्रवचन सारोद्धार वृत्तिमें" आठथुइ चारथुइ के देववंदन साधुको उद्देश के क्यों लिखते है।

उत्तरपक्षः—"यति दिन चर्याकी" अंतकृतिमें "श्रीदेव सूरिणा भणिता उद्धरिता" ऐसा लिखाहै तथा इतिश्रीमें सुविहित शिरोमणी देवसूरि रचिता इसमुजब लिखाहै, परंतु वादि प्रमुख चिन्ह लिखे नहींहै, वास्ते सुविहित शिरोमणी देवसूरितो अनेक भयेहै, यह दिनचर्या (८४०००) स्याद्वाद रत्नाकरके कर्त्ता वादि देवसूरिजी कृत संभवित नहीं होतीहै, जेकर कदाचित् बहुश्रुतकृत संभवित होय तो पूर्वधर तथा बहुश्रुतकृत अनेक ग्रंथोमें कारण परत्व विन चार तथा आठ थुइके देववंदन साधुकों उद्देशके किये नहीं तिस लिये यहां दिनचर्याके उपरोधसें अर्थात् महत्पूजा तथा प्रतिष्ठादिकके दिन तथा नवीन शिष्यादिकके दीक्षा दिनभी साधुवोंकी दिनचर्यामें गिने जातेहै, तिस दिनोंकी अपेक्षासें इस दिनचर्यामें जिनमंदिरमें प्रदक्षिणादि विधि सहित चार तथा आठ थुइके देववंदन साधुकों उद्देशके कियेहै, तथा "प्रवचन सारोद्धार वृत्तिके" कर्त्ता श्रीसिद्धसेन सूरिभी बहुश्रुतोकी पंक्तिमें नही है, क्योंकि पूर्वधर तथा बहुश्रुतोने तो अपनी कृतिके ग्रंथोमें (तिन्निवाकड्ढइ थुइयं जावति—सिलोइया यावत् प्रणिधानांत त्रिश्लोकाःकर्षते अर्थात् गाथाके प्रथम वा शब्दसें पक्षांतर देववंदना जो

मध्यमसें उत्कृष्ट देववंदना सूचन करते है कि तीनस्तुतिके देववंदन कहां तक करनाकी प्रणिधानके अंत तीनश्लोक कहे तहां तक जिनमंदिरमें साधुकों रहनां और उपदेशादिक कारण परत्व अधिकभी रहना, असा लिखते है. और यह सूरिजीतो एकांत त्रीस्तुतिक मतोत्पति पीछे (वि० सं० १२७२) में हुयेहै इनोने इसवृत्तिमें अपना मत रसिकपणासें अपवाद साधुके कारण परत्व करनेकी चोथी थुइको उत्सर्ग कारण विगर कहनेकी स्थापन करनेकी कोशिश कियीहै, यह पूर्वधर तथा बहुश्रुतकृत बहोत ग्रंथोसें विलक्षण लेखलिखाहै कि (तिन्निवा कड्ढइ थुइयो) इस पूर्वधरोकी गाथाका व्याख्यानमें कितनेक बहुश्रुत गीतार्थ तीनथुइसें मध्यम तथा जघन्योत्कृष्ट देववंदनके भेद जतानेके लिये वा शब्दको अग्रहण करके श्रुतस्तवका कायोत्सर्गके नंतर तीसरी स्तुति छंद विशेषण रूप तीनश्लोक प्रमाणे यावत् कहै, तहां तक साधु चैत्यमें रहै, इस मुजब बहुश्रुतोकी तीन थुइसें मध्यम भेदकी व्याख्यामें यह सूरिजी चोथीथुइको मध्यम वंदनामें स्थापनेके लिये युक्ति कियीहै कि तीसरी स्तुतिके स्थानमें सिद्धाणं बुद्धाणंकी तीन गाथा और आगेकी दोगाथा और चोथी थुइ गीतार्थ आचरणासें करे है तहांतक चैत्यमें रहनेकी आज्ञा साधुकों है, अरु उपदेशादिक कारण परत्व आगेभि रहै, यह मनमानी युक्ति जो मत रसिकपणे किइ है तवतो पूर्वधर तथा बहुश्रुतोकी आचरणाके उत्थापकोंकी पंक्तीमें सूरिजी गिनेजायगें, और जो कदाचित् तथा शब्दके प्रथमकी व्याख्या में पूर्वधरोकी आचरणा सूचन करके पीछे तथा शब्दको प्रकारार्थ ग्रहण करके उत्तर-व्याख्यामें बहुश्रुतोकी आच-

रणा जताके सर्वथा चोथी थुइके उत्थापक त्रिस्तुतिक म-तियोंको समझानेके लिये यह थुइ करी होयगी जिनपूजो-पचारकी वचन चैत्यवंदन विधिमें बहुश्रुतोंकी आचरणासें श्रावक चोथीथुइमें देववंदनकरे तहां तक साधुको जिन-मंदिरमें रहनेकी आज्ञाहै और उपदेशादिक कारणसें अधि-कभि रहे, इस आशयसें अपक्षपातो होके यह ग्रन्थ अथवा लेख लिखेहै, तोभी यह सूरिजी बहुश्रुतोंकी पंक्तिमें नही गिने जायगें; किंतु जघन्य गीतार्थोकी पंक्तिमें गिने जायगें. कारण के इन सूरिजीकी करी हुयी एक यह प्रवचन सा-रोद्धारकी वृत्तिही प्रसिद्धहै और कोइ ग्रंथ इनका रचा प्र-सिद्धीमें तथा श्रवणमें नही आताहै.

पूर्वपक्षः—सिद्धसेनसूरि प्रमुख जघन्य गीतार्थोकी पं-क्तिमें गिने जायगें तो जघन्य गीतार्थोंकी कियी हुइ आ-चरणा प्रमाण कियी जातीहै कि नही?

उत्तरपक्षः—पूर्वधर तथा बहुश्रुतोंकी आज्ञा तथा आ-चरणा अनुसार जघन्य गीतार्थ आचरणा करे तो वह प्र-माण कियी जातीहै, परंतु अपने गच्छमतके जोरसें पूर्वधर तथा बहुश्रुतोंकी आचरणा लुप्त करनेको अपने मनमानी आचरणा बहुश्रुतकी करीभी प्रमाण नही करी जातीहै, तो जघन्य गीतार्थकी कियी तो प्रमाण कहांसें होय.

पूर्वपक्षः—जघन्य गीतार्थकी आचरणामें असावद्य आ-चरणाकि भजना होतीहै, वास्ते तिनकी करी आचरणातो प्रमाण नही होतीहै, परंतु बहुश्रुतोंकी करी हुयी आचर-णातो सठ तथा सावद्य होतीही नही तो वहतो प्रमाण क-रने योग्यही है की नही?

उत्तरपक्षः—बहुश्रुतोंकी करी आचरणातो असठ तथा

असावद्यही होतीहै, तो इस आचरणाकों कौन मोक्षार्थी प्रमाण न करे ? अपीतु संसार भीरुतो सबही प्रमाण करे, उनकी आचरणा अप्रमाण करनेसें सबही जैनशास्त्रोका अप्रमाण अनवबोध प्रसंग प्राप्त हो जाय.

पूर्वपक्षः—बहुश्रुत गीतार्थोकी आचरणा प्रमाण करने योग्य है तो कर्मग्रंथादि अनेक ग्रंथोके कर्त्ता प्रसिद्ध बहुश्रुत गीतार्थ श्री देवेंद्रसूरिजी महाराजने वृंदारुवृत्ति नामकी श्रावक पडावश्यक टीकामें चारथुइसें देववंदना करनी लिखीहै, तथा न्याय सरस्वति बिरुद धारक अनेक ग्रंथोके कर्त्ता अंतिम बहुश्रुत गीतार्थ श्रीमद्यशोविजयजी महोपाध्यायजीने प्रतिक्रमण गर्भहेतु स्वाध्यायमें यारे अधिकारसें देववंदन करनेका लिखाहै, तो प्रतिक्रमण पौषधादिकमें भी चारथुइसें देववंदन करना सिद्ध होता है कि नही ?

उत्तरपक्षः—वृंदारुवृत्ति तथा प्रतिक्रमण गर्भ हेतु स्वाध्यायमें लिखनेसेंही कुच्छ सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिकमें चारथुइसें देववंदन करना सिद्ध नही होताहै, कारणकि जो लेख लिखनेसेंही करण मार्गणा लिखमानोंगे तो वृंदारु वृत्यादिकमें तो सम्यग् आचरणा और मिथ्या आचरणा दोनुं लिखी है तो क्या ! सम्यग् आचरणा आचरणकरने वालेकों मिथ्या आचरणाभी करनी सिद्ध होयगी ! नही नही. बुद्धिवानोका लक्ष एकला लेख लिखने पर ही नही रहता है, किंतु तिस लेखका पूर्वापर विचार उपरही ख्याल रहता है—जैसे कोइ साहुकारने अपनां पुत्रकों आपदकालमें सुखी होनेके लिये अपना चोपडामें लेख लिखाकी मैंने जिनमंदिर बनवाया जिस्के इंडेमे (कलशमें) बहोत धन रख्खा है, सो आपद कालमें

मकरसंक्रातीके वीस दिन गये पीछे एक प्रहर दिन चड्ये बाद निकाल लेना, यह लेख तिस्के पुत्रके देखनेमें आया तब पीछे कितनेक कालके बाद आपद कालमें तिसने उपरके लेख मुजब मंदिरका इंडा तोडाडाला तो भीतरसें कुच्छभी धन निकसा नही, इसलिये लोकोमें हांसी हुइ! तब बहोत चिंतातुर होकर बैठाथा, तिस वखत तिस्का मित्रने आकर कहा, यह विना विचारका काम तुमने क्या किया? तब मित्रकों धोरी चोपडेका लेख बताया, तब मित्रने कहा, रे मुर्ख! इस लेखका पूर्वापर विचारतो करना-थाकि छोटासा इंडामें इतना धन कहांसें समाया होगा! वास्ते मकरसंक्रातका वीस अंस गयें पीछे प्रहरदिन चडे बाद जहां इंडाकी छांया पडे उस जगोमें धन है, मित्रके कहनेसें तिसने तिसी मुजब किया, तब धन निकला, और खुशी हुवा, तैसे गीतार्थोंका लेखमेंभी पूर्वापर विचार करे तब तिस लेखका यथार्थ तत्वकी खबर पडे, अन्यथा बहुश्रुतोंके पूर्वापर वचन विरोध करके आशातनाका भागी होके संसारमें भ्रमण करना पडे.

पूर्वपक्षः—वृंदारु वृत्तिमें तो (अधुना चैत्यवंदना साच त्रिधा नव कारेण जहंना) इत्यादि यावत् स्तोत्र प्रणिधान पर्यंत चारथुइसें देववंदना करनेकी लिखीहै, और प्रतिक्रमण हेतु गर्भित स्वाध्यायमें "सफल सकल देवगुरु नते इतिधौरे अधिकारेरे; देववांदी गुरुवांदीये वर खमासमण चारेरे० श्रुत० ॥८॥" यह लिखके दूसरी ढालमें बार अधिकारका नाम जताके लिखाहैकि "भावोरे भावोरे देव वांदतों भविजनारे०॥५॥" यह प्रत्यक्ष लेख लिखेहै, तो अब इनसें कोन विचारना करनी बाकी रही है?

उत्तरपक्षः—इन दोनों लेखमें पूर्वापर विचारना क-रतीं यहही बाकी रही है कि प्रथम तो श्रीचैत्यवंदन म-हाभाष्यादिकके अनुसार उभयकाल अर्थात् प्रतिक्रमणकी आद्यंत चैत्यवंदना उत्कृष्ट जघन्य अर्थात् स्तोत्र प्रणिधान रहित करनेकी तथा त्रिकाल जिनपूजाके अवसर श्राव-कोंके चारथुइके देववंदन करनेकी बहुश्रुतोकी आचरणाहै अरु यहां वृंदारवृत्तिमें तो स्तोत्र प्रणिधान सहित त्रिधा तीन प्रकारकी चैत्यवंदना चारथुइसें करनी लिखीहै, सो यह चैत्यवंदन विधी जिनमंदिरमें करनेकी प्रतिपादक है, क्योंकि तीनो प्रकारकी चैत्यवंदना स्तोत्र प्रणिधान सहि-त जिनमंदिरमें हो शक्तिहै, परंतु प्रतिक्रमणकी आद्यंतमें करनेकी नहीहै. यहां श्रावकोंके षडावश्यक व्याख्यामें चै-त्यवंदन विधी लिखके जताइहे, सो प्रातःकालमें तो आ-वश्यक अर्थात् प्रतिक्रमण कर जिनमंदिरमें जाके स्वस्तिक आदि एक प्रकारादि जिनपूजोपचार करके चारथुइसें देववंदन करे, और संध्या समये धूप पूजा आरति प्रमुख करे, चारथुइसें देववंदन करे, और संध्या समय पीछे पौषधशालामें जाके श्रावक सामाइकादि आवश्यक कृत्य करे, यह उभयकाल विधी जबसें चैत्यवंदन विधीमें बहु-श्रुतोने चोथीथुइ कहनेकी आचरणा करी, तबसेंही इसी मुजय श्रावकोकी वर्त्तना चली आतीथी, तिस वर्त्तना मु-जब चारथुइसें देववंदन करनेकी वृंदार वृत्तिमें स्तोत्र प्रणिधान सहित चैत्यवंदन विधी लिखके जताइ है, इस उ-क्त लेखका प्रगट खुलासा इसही वृंदारवृत्तिके कर्त्ता पूज्य-श्रीदेवेंद्रसूरिजी बहुश्रुत गीतार्थ महाराजने श्रावक दिनकृ-त्य सूत्र वृत्तिमें लिखा है कि (विकाल वेलायां अंतर्मुहूर्त्त

रूपायां-) अर्थात् संध्या समये दोघडी वाकी रहे छते (पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाकृत्वेति शेष पुनर्वंदते जिनोत्तमान् प्रसिद्ध चैत्यवंदन विधिना) अर्थात् पूर्वोक्त विधिसें पूजा करके फेर प्रसिद्ध चैत्यवंदन विधीसें जिनोत्तम देवोंकों वांदे अर्थात् प्रसिद्ध देववंदन विधी करके देव वांदे (तत स्तृतिय पूजानंतरं श्रावकः पौषधशालां गत्वा इत्यादि यावत् समायिकं आवश्यकंच करोति) अर्थात् पीछे तिसरी पूजानंतर श्रावक पौषधशालामें जाके स्थापनादि स्थापके यावत् सामायिक और आवश्यक अर्थात् प्रतिक्रमण करे. अब यहां सुज्ञ जनोंकों पक्षपात रहित विचार करनां चाहिये कि जो सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिककी आद्यंत में चार थुइसें देववंदन करनेका आसयसें वृंदारु वृत्तिमें चैत्यवंदना विधि लिखी होती तो यहां श्राद्ध दिन कृत्य सूत्र वृत्तिमें बहुश्रुत महाराज श्रावकको सामायिक लिये वाद देववंदन करके आवश्यक करे ऐसा कथन करते, परंतु बहु श्रतोंकी परंपरागत यहही आचरणा है कि चारथुइसें चैत्यवंदना विधीतो पूजाके अवसरही श्रावकोंके करणा और चारित्रादिक अनुष्ठान विधीमें साधु तुल्य विधी करनां यहही आसय जतानेकों इसी श्राद्ध दिन कृत्य सूत्रवृत्तिमें साधुके अधिकारमें तो तीनथुइकी देववंदना और श्रावकके अधिकार त्रिकाल पूजानंतर चारथुइकी देववंदना करनी कहीहै; यहां कोइ पूर्वपक्षी कहेगाकी जो चारित्रानुष्ठानमें श्रावककों साधु तुल्य तीनथुइके देववंदना करनेकी होती तो यहां सामायिक लिये वाद तीनथुइसें देववंदन करके फेर आवश्यक करनां ऐसा कथन क्यों नहीं किया? इस तर्कपर उत्तर पक्षीका उत्तर सहित स-

माधान यहहै कि पूर्वधर तथा बहुश्रुतोका किया ग्रंथोमें यह लेखहै कि उत्सर्ग मार्गमें तो साधु श्रावक दोनोंको राइप्रतिक्रमण किये बाद तथा देवसी प्रतिक्रमणकी आद्यमें जिनमंदिरमें जाकेही अपना योग्य अवस्थाका देववंदन करणा और अपवाद मार्गमें कोइ कारण परत्व जिनमंदिरमें वांदनेका योग न हुवा तो साधु तो अपने स्थान स्थापनाजीके आगे तीन थुइकी देववंदना कर प्रतिक्रमण करे और श्रावक पौषधशालामें सामायिक सहित प्रतिक्रमणमें तो तीनथुइकी देववंदना करे, और पूजा प्रतिष्ठादि कारण परत्व जो सामायिक रहित प्रतिक्रमण करना होय तो चार थुइकी देववंदना कर प्रतिक्रमण करे, ऐसी बहुश्रुतोंकी आचरणा मुजब यहां उत्सर्गसें तिसरी पूजाके नंतर देववंदन करनेसें प्रतिकमणकी आद्यमें विशेष देववंदन करनेका प्रयोजन नही, वास्ते यहां श्राद्धदिनकृत्य सूत्रवृत्तिमें सामायिक लियेबाद देववंदन करनेका कथन नहीकिया.

पूर्वपक्षः—वाहजी वाह ! प्रतिक्रमण पोषधादिक भी सामायिक रहित होते है! सामायिक लिये बिना प्रतिक्रमण पौषधादि करनां सुननेमें भी आया नही तो करनेकी बात तो कहां रही ! !

उत्तरपक्षः—हांजी हां ! कारण परत्व प्रतिक्रमण पौषधादिकभी सामायिक रहित होतेहै, तुमारे कानोंमें मतपक्षकी ढांक चलगइ है तिसिसें सुना नही होगा, जो मतपक्षकी ढांक अलग करके शास्त्र श्रवण करोगेतो सुननेमें आवेगाकि श्री विजयराजा अभयकुमारादिकोने अपने विघन विनाश और संसारिक कार्यसिद्धिके लिये सामायिक रहित पौषधादिक कियेहै, जो सामायिक लिये विना पौषधादि

कयेहै तो तिस पोषहमें प्रतिक्रमणभी सामायिक लिये विना करा होगाकि नही ?

पूर्वपक्षः—श्रीविजयादिकोने अपने संसारिक कार्य सिद्धिके लिये पौषधादिक किये, यह लेख तो शास्त्रोमें प्रसिद्धहै, परंतु सामायिक लिये विना प्रतिक्रमणादि करने का लेख कोइ पूर्वधर तथा बहुश्रुत कृतशास्त्रमें हैकि नही ?

उत्तरपक्षः—पूर्वधर श्री उमास्वाति वाचककृत प्रतिष्ठा करंडकमें प्रतिष्ठादिकमें स्नात्रकारकोकों सामायिक लिये विना प्रतिक्रमण करनेका लेखहै ऐसा वृद्ध वाद श्रवण होताहै, तथा न्याय सरस्वती बिरुद धारक अंतिम बहुश्रुत महोपाध्याय श्रीयशोविजयजी प्रतिक्रमण हेतु गर्भ स्वाध्यायमें सामायिक विधि किये विना बार अधिकारसें देववंदन तथा प्रतिक्रमणादि करनेका हेत्वादि बतायेहै यह लेखभी सामायिक रहित प्रतिक्रमणादि करनेका सूचकहै जो सामायिकही लेके एकांत प्रतिक्रमणादि करनेका होता तो सामायिक विधि सहित हेत्वादिकका लेख करते, परंतु कारण परत्व सामायिक रहितभी प्रतिक्रमणादि होतेहै, ऐसा अनेकांत सूचन करनेको सामायिक विधिका लेख किया नहीहै.

पूर्वपक्षः—महोपाध्यायजीने "हेतु गर्भ स्वाध्यायमें" सामायिक विधि नही लिखि तिसिसें सामायिक रहित प्रतिक्रमणादि करना सिद्ध नही होताहै? क्योंकि श्रावककी सामायिक विधी तो नही लिखी, परंतु साधु श्रावक दोनुंके प्रतिक्रमणादिकरनेका हेतु विधी लिखेहै, वास्ते साधुके सामायिकतुल्य श्रावककेभी सामायिक विधी करनी समज लेनी.

उत्तरपक्षः—साधुकी सामायिक तुल्य श्रावककी सा-

मायिक विधी करनी नही समजी जातीहै, क्योंकि साधुके सर्वविरती सामायिकहै, श्रावकके देश विरतीहै, साधुके जावजिवहै, श्रावकके अंतर मुहुर्त दो घडी कालकीहै, साधुकी सामायिकमें गमना गमन निषेध नही हो शकताहै, श्रावकके हो शकाहै, साधुकी सामायिकमें भोजनादि कार्य हो शकेहै, श्रावककी सामायिकमें नही हो शक्ताहै, साधूके सामायिक विधी और है, अरु श्रावकके सामायिक लेनेकी विधी औरहै,वास्ते साधुकी सामायिक तुल्य श्रावकके सामायिक विधी करनी नही होतीहै.

पूर्वपक्षः—साधु श्रावक दोनोंके सामायिक विधी करनेका फरकतो हमनेभी माना, परंतु हेतु गर्भ स्वाध्यायमें सर्व विरती सामायिकवंत साधुकोंभी बार अधिकारसें देववंदन कर प्रतिक्रमणादि करनेका लिखातो श्रावककी सामायिकमेंतो अर्थात्‌ही करनें सिद्ध हो चूका.

उत्तरपक्षः—दीर्घ कालकी सर्व विरती सामायिकमें तो प्रतिष्ठादि कारण परत्व साधुके बारमां अधिकार सहित चार थुइकी देववंदना पूर्वधर तथा बहुश्रुतोंके लेख वचनोंसें हो शकतीहै, परंतु स्वल्प कालकी देश विरती सामायिकमें कदापि हो शकती नही. इसी दर्शावके लिये महोपाध्यायजीने "हेतु गर्भ स्वाध्यायमें" सामान्य विशेष विधी वाक्यसेंभी श्रावकोंके सामायिक लेनेका नाम निर्देशभी ग्रहण न किया, तथा प्रतिक्रमणका उत्सर्ग अपवाद काल जताया, तैसेंही देववंदनादि प्रतिक्रमण क्रिया करनेमेंभी उत्सर्ग अपवाद जतानेकों सामायिक लेनेका लेश न कियाकि जो अपवादीक सामायिक रहित प्रतिक्रमण करतां तो- "सफल सकल देव गुरु नतें, इति बारे अ-

धिकारेरे, देववांदि गुरु वांदिए, वर खमासमण चाररे० थु० ॥८॥" अर्थात् सकल शब्द देशवाची सर्ववाची ग्रहण करनेसें कीर्तनिक क्रिया तथा सर्व क्रिया प्रथम देवगुरुकों नमन किये पीछे करनेसें सफल होतीहै, इस लिये इति कहते संपूर्ण बार अधिकारसें देववंदन कर चार खमासमणसें गुरुवंदन करनां, और उत्सर्गिक सामायिक सहित प्रतिक्रमण करनां तो इति शब्द संपूर्णका प्रतिपक्षी असंपूर्ण अधिकारसें अर्थात् बारमां अधिकार रहित ग्यारह अधिकारसें देववंदन करनां. यहां सामायिक अग्रहण तथा सकल शब्द और इति शब्दका सूचनसें प्रतिक्रमणकी आदि अंतमें उभय काल पूजन अवसर बारमां अधिकार सहित चार थुइके देववंदन और सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिकमें तीन थुइके देववंदन सूचन कियेहै.

पूर्वपक्षः—महोपाध्यायजीने कोइ ग्रंथमें प्रतिक्रमण आवश्यकके आदि अंतमें पूजन विधी लिखके देववंदन करनेका सूचन कर आवश्यक करनेका लिखा होय तबतो तुमारा उक्त लेख लिखना सबही सत्यहै अन्यथा तो प्रलाप मात्रहै.

उत्तरपक्षः—उक्त ग्रंथमें श्रावक सामायिक लेके तथा श्रावककी सामायिक विधीकरके पीछे बार अधिकारसें देववंदनादि कृत्य करनां लिखा होता तबतो तुमारे कहने मुजब हमारा लिखना प्रलापमात्र होता, परंतु उक्त ग्रंथमें तैसा लेख न होनेसें हमारा लिखनातो सत्यहीहै, तुमारा कथनही प्रलाप मात्रहै, तोभी तुमारे सरिखे मतपक्षीयोका मुख स्थंभनकरनेकों महोपाध्यायजीकी करी हुइ आवश्यक बीजककी स्वाध्यायमें तुमारा पूर्वपक्ष करने मुजब लेख दर्शातेहै कि 'त्रिकाल पूजन विधी इम अनुसरी, आवश्यक कीजेरे प्रातः

संध्याथुरी उ० थुरि अंत आदी देववंदन, करीने आवश्य क कीजिये. उत्कृष्ट जघन्यादि भेद भावी, यथाशक्ति वं दिजीये; पंच प्रमेष्टी मंत्र बीजक, अनेक विध प्रवचने ल ह्या; ॐ अर्हं आदि बीज भावी, द्रव्य भावे संग्रह्या ॥१२॥" इस लेखमें पूजन विधी करके प्रतिक्रमणके आदि अंत दे ववंदन करे पीछे आवश्यक अर्थात् प्रतिक्रमण करना लि खा है तो उभय कालकी पूजनके अवसरही चारमी अ धिकार सहित चारथुइके देववंदन करनेकी आचरणा आ ज पर्यंतके बहुश्रुतोंकी प्रसिद्धथी तबही महोपाध्यायजीने "हेतु गर्भित स्वाध्यायमें" सामायिक रहित प्रतिक्रमणाके विधी हेतु बताके उत्सर्ग अपवाद विधी दोनु सूचन करीहै.

पूर्वपक्षः—ललित विस्तरावृत्ति पीछे आज पर्यंतके बहुश्रुत गीतार्थ करण मार्गणासें दोनु आचरणा करतेथे, तबही अपने अपने कृतिके ग्रंथोंमें लिखके दर्शाइ है, तो व र्त्तमानमें तो करण मार्गणामें एकभी आचरणा करतेही दि खते नही, क्योंकि साधु श्रावक दोनोंही प्रतिक्रमणके अ वसर चारथुइके देववंदन करते दिखते है, परंतु साध्वा दिकतो चारित्रानुष्ठानमें तीन थुइके देववंदन और श्राव कादिक जिनमंदिरमें चारथुइके देववंदन कोइभी करते दिखते नही. तो पूर्वधर तथा बहुश्रुत गीतार्थोंसेंही विल क्षण आचरणा यहतो नवीन प्रगट भइ दिखती है; तोयह आचरणा सब देशावरोंमें कबसें सरू हुइ?

उत्तरपक्षः—यह विलक्षण आचरणा तथा औरभी सामायिक विधी प्रमुख पूर्वधर तथा बहुश्रुतोंकी आच रणासें विलक्षण मनमानी आचरणा यह सठ गीतार्थोंकी प्रबलतासें सर्व देशावरोंमें सरू हुइ है.

पूर्वपक्षः—सठ गीतार्थ किसकों कहते हो? और उन्स-ठ गीतार्थोंकी प्रबलतासें यह विलक्षण आचरणाओं कब कबसें चली इसका बयान करो?

उत्तरपक्षः—असठ गीतार्थोंसें विपरीत लक्षणवाले सठ गीतार्थ कहावेकि आत्मीक धर्मकों जाने नही, और तिस धर्मकी प्राप्तीका कारणभूत शुद्ध व्यवहार जोकि पूर्वधर बहुश्रुतोने अपने किये ग्रंथोमें बताया तिसमे भर्मडाल के अपने मनमानी पक्षपातकी लडाइके टोर टोर करने करानेवाले अपने थोडा वहोत पढनेका अभिमानसें अपरकों अपंडित माननेवाले अपनी प्रशंसा परगुणकी ओलवना अरु जिनवाणीकों अन्यथा प्ररूपके पूर्वधर बहुश्रुतो-की आचरणाकों विलुप्तकर अपनी मनमानी आचरणाके प्रवर्तन करनेवाले, और पूर्वधर तथा बहुश्रुतोके विपक्ष गच्छमतके थापनेवाले तथा "जिम जिम बहुश्रुत बहुजन संमत, बहूल शिष्यनो सेठो; तिम तिम जिनशासननो वयरी, जो नवी अनुभव नेठो" इसमुजब श्रीपाल रासोक्त महोपाध्यायजीके वचनोंसें इत्यादि उक्त लक्षण लक्षित सठगीतार्थोंने अपने शिष्यादिकोंकी प्रबलतासें पूर्वधर तथा बहुश्रुतोंकी कितनीक आचरणा विलुप्तकर अपनी मनमानी आचरणायो जैनशासन विपरित सबदेशावरोमें फेलाइ, तिनका जताव जैन शास्त्रोंके अनुसार भव्योंके हितके लियें किंचित् लिखके दिखाते है कि वि० सं १२०४ पीछे श्रीसौधर्मबृहत् खरतर गच्छमेंसें खरतर मती प्रगटे, तिनोने कुर्च्चपुर गच्छिय चैत्यवासी जिनेश्वरसूरि शिष्य जिनवल्लभसूरिने चित्रकूट (चितोड नगरमें) श्रीमहावीरस्वामीके षट् कल्याणक मत प्ररूपणा पहिली कियीथी, ति-

समर्तका हठाव किया. और श्रावकोके सामायिक विधीमें सामायिकोच्चारके आद्यंत गमनागमन आलोचन तथा गमन निषेध दोनु इरियावहि करनेका पूर्वधर तथा बहु श्रुतोकी आचरणाथी तिस्को विलुप्त करनेको अपने मन मानी कल्पना कर सामायिक उच्चार के बाद जो गमन निषेध करनेकी इरियावहिथी तिस्को गमनागमन आलोचनरुप मानके प्रथम इरियावहि करनेका निषेध किया. अरु सामाइकोच्चार तीनवेर करनेका सरु किया, तिस पीछे वि० सं. १२१३-१४ के वर्ष श्रीसौधर्म नाणावाल गच्छमेंसें श्रावकोके सामायिकमें चरवला मुहपत्ति रखनेकी पूर्वधर तथा बहुश्रुतोकी आचरणाकों निषेधके एकांत अंचल (उतरासण) रखनेकी आचरणा सरु कर अंचल मतोत्पत्ति करी, तब तिनोने पूर्वधर तथा बहुश्रुतोकी आचरणासें चली आइ चैत्यस्तवादि कायोत्सर्ग के नंतर "एगाएग सिलोगिया बित्तिया वी सिलोगिया तत्तिया त्ति सिलोगिया" छंदादिक वृद्धि विशेष तीन चूलिका स्तुति तथा प्रतिष्ठादि कारण परत्व कहेनेकी चतुर्थ चूलिका स्तुतिकों निषेधके अपने मनमानी कल्पना कर तिनि स्तवक स्थानकी स्तुतिकों ध्रुव स्तुति मानके तीन ध्रुव स्तुतिके देवबंदन मानने सरू किये; तदनंतर साधूके प्रतिष्ठादि कारण परत्व करनेकी पूर्वधरोकी आचरणा तथा त्रिकाल पूजाके अवसर श्रावकोंके चतुर्थ सहित चैत्यवंदनमें चार स्तुतिके देववंदन करनेकी बहुश्रुतोकी आचरणा निषेधके वि० सं० १२५० में श्री सौधर्म सिद्धांतिक गच्छमेंसें निकसके शीलभद्राचार्यने सर्वथा चोथी थुइ साधू श्रावककों करनी निषेध कर आगमिक मतोत्पत्ति अर्थात त्रिस्तु

तिक मतोत्पत्ति करी. तब परस्पर मतपक्ष चरचा राग द्वेषावेशसें खरतरमति साधु श्रावकादि सर्वथा तीन स्तुतिके देववंदन उत्थापके एकांत चार स्तुतिके देववंदन जिन मंदिरमें करने सरु किये, तिस अवसर श्री सौधर्म वडगच्छ तथा श्री सौधर्म तपगच्छके साधू श्रावकादिक तो सर्व पूर्व धर तथा बहुश्रुतोकी आचरणा मुजब वर्त्तते रहे, तदनंतर वि० सं० १५७२ वर्षे नागपुरिय तपगच्छसें निकसके पार्श्वचंद्र उपाध्यायने एकांत त्रिस्तुतिक मति और एकांत चतुर्थ स्तुतिक खरतर मतियोका परस्पर विवाद देखके अपनी मन कल्पना करें तीन और चार स्तुतिके दोनुं देववंदन उत्थापके जिन मंदिरमें एक शक्रस्तवादिक एकसो आठ काव्य पर्यंत शक्ति मुजब कहेनेकाही देववंदन मानना सरू किया, और प्रतिक्रमणादि समाचारीपण अपने मन मानी नवीनही प्रगट कर अपने नामका मत प्रगट किया. तिस पीछे श्री सौधर्म वृहत्तपागच्छके साठमें पाटपर श्री विजयदेव सूरिजी महा प्रतापी आचार्य वि० सं० १६८१ वर्षमें स्वर्गवास हुये, इन आचार्यजीके वर्त्तमानमें आनंदविजय नामकने श्रावक सामायिक पारनेकी इरियावहिका निषेध कदाग्रह श्रीदेवसूरिजीसें करके अपने नामसें "आणंदसूर" नामका गच्छ मत निकाला, तिस पीछे श्रीराजनगर (अमदावाद) में श्री धर्मसागर उपाध्यायजीकी शिष्य परंपराके कितनेक यति मिलके श्रीधर्मसागर उपाध्यायकृत "कुमति कुपाक्षिक कौशिक दिनकर सहस्र" ग्रंथकों श्रीहीर सूरिजीने जल सरण करायाथा, तिस ग्रंथका असंबंध वाक्य तिनके किये दूसरे ग्रंथोसें देखके श्रावक सामायिक संबंधी दूसरी गमन निषेध इरियावहि

निषेधादि कदाग्रहसें सागर तपामती सागरगच्छ नामसें लोकमें प्रसिद्ध भये, तदनंतर न्याय सरस्वति विरुद धारक काशीजीत महा पंडित श्रीयशोविजयजी गणिको ॥१७०८॥ वर्ष पीछे श्रीसिंहसूरिजीकी हितशिक्षासें क्रिया उद्धार कर वहोत कुमति कुपक्षियोंके मर्दन करनेवाले तथा ज्ञान गुणादि अनेक हित शिक्षाके दाता परम विद्या गुरु अपने उपगारी पुरुष जानके श्रीप्रभसूरिजीने वि० सं० ॥१७१४॥ के वर्ष महोपाध्याय (वाचनाचार्य) के पदपे स्थापन किये, तिस इर्षाके मारे श्रीसिंहसूरिजीके वडे शिष्य सत्यविजय पन्यासने स्वेतांवर लिंग उत्थापन करनेको पलियांवर वस्त्र धारनकर वडी कष्ट क्रिया करने लगे, तिसका शिष्य कपूरविजयजीने ढुंढक सदृस मलमलीन वस्त्र रखनेसे वस्त्र पात्र आहारादिकको दुर्लभतासें पलियांवर वस्त्र छोड काथे चूनेसें रंगकर काथिये कपडे धारनकर फिरने लगे, तिस अवसरमें श्रीप्रभसूरिजीने युगराज श्रीरत्नसूरिजीके कथनसें विमलशाखाके श्रीनयविमलजीको उपाध्याय पद दिया नही, तब आचार्यका पीतवर्ण वास्ते आचार्यके तो पीला कपडा और साधुवोंके कथ्थे चूनेके कपडे धारनकर नयविमलजीको आचार्यकर विचरेंगे तो लोकोंमें अपनी टकी लगेगी.

इत्यादि सत्यविजय पन्यासका शिष्य कपूरविजयकी सलाहसें विमलशाखाके कितनेक यति इकठे होके श्रीरत्नसूरिजीपर द्वेष भावसें श्रीनयविमलजीको पीला कपडा धारन कराके (वि० सं. १७२९) के वर्ष श्रीप्रभसूरिजीकेपाट श्रीज्ञानविमलसूरि नामसें उत्कृष्ट क्रिया करते जहां महोपाध्यायजी और श्रीप्रभसूरिजीका परिचय विचरना नही

था तिनदेशोंमें विचरने लगे, तद् पीछे ॥ वि० सं० १७४९ ॥ के वर्ष श्रीरत्नसूरिजीके भट्टारक पद होने वाद थोडे वर्ष पीछे महोपाध्यायजी श्रीयशोविजयजी स्वर्गवास हुये, वाद श्वेतांवराचार्य भट्टारक श्रीरत्नसूरिजी तो अपने गच्छिय साधुवोंकी शिथिलाचार प्रवृत्ति मिटानेको मारवाड माल-वादि देशोमें वहोत गीतार्थोंको साथ ले विचरते रहे; और ज्ञान विमलादि पीतांवरी धीरे धीरे गुजरातमें प्रवेश कर राधनपुर आदि वडे शहर ग्रामोमें जहां जहां सागर विमल श्रावकोंका जथ्थाथा तहां तहां श्रावकोंको अपने मतके पक्के द्रष्टीरागी वनालिये, और कर्पूरविजयभी कितनेक पीतांवरी साधुवोंको साथ लेके राजनगर (अहमदावाद) के श्रावकोंको अपना वाह्य क्रियाका आटोप वहोत वताके अपने मतके दृढ कदाग्रही कर लिये, तदनंतर कितनेक वर्षके वाद विमल और विजय तथा सागर समुदायके श्रावकोंको एकत्र करनेके लिये अपने सागीरद पीतांबरी श्रीकर्पूरविजय गणीकी सलाह मिलाके श्रीवृहत्तपागच्छके श्रावकोंकी सामायिक विधीमें सामायिक उच्चारके आद्यंत गमना गमन आलोचन और गमनागमन निषेध दोनु इरियावहि करके पूर्वाचार्य सम्मतिसें महोपाध्यायजी श्रीजसविजयजी गणीकी अनुमति श्रीमानविजयोपाध्यायजी कृत श्रीधर्मसंग्रहकी थी, तिस्को निषेधके सामायिक उच्चारके वाद इरियावहि करते है, यहतो खरतर गच्छकी समाचारि है! अपने तपगच्छकी नहीं है!! ऐसा लोकोमें भर्म डालके सागर तपा मतियोकी समाचारि प्रवर्त्तन करी. और सामायिक प्रतिक्रमण पौषधादिक चारित्रानुष्ठानमें तीन थुइसें देव वंदन करनेकी तथा पूजादि

विशिष्ट कारणे अर्थात् त्रिकाल पूजा तथा प्रतिष्ठा अरु दीक्षादि योग्य कारणके अवसर पूर्वधर तथा श्रीवृहत्तपा गच्छिय बहुश्रुत पूर्वाचार्योंकी सम्मतिसें चारथुइसें देववंदन तथा विघ्न विनाशनी पूजाके करनेवाले और अन्य क्षेत्रमें गमन करके सामायिक रहित प्रतिक्रमणके करनेवाले श्रावकादिकके क्षेत्र देवादिकका कायोत्सर्ग और स्तुति तथा पाक्षिक प्रतिक्रमण किये पीछे सामायिक पारके बडी शांत श्रवण करनेकी महोपाध्यायजीकी अनुमतीथी, तिस्की निषेधके ज्ञान विमलसूरिने सागर तपा मतियोंके रागसें प्रतिक्रमण विधी सिझाय बनाके सामायिक पौषधादिक भावस्तवमें चारथुइके देववंदन तथा श्रुतक्षेत्रादिक कायोत्सर्ग स्तुति आदि द्रव्यस्तव निरंतर प्रतिक्रमणादि चारित्रानुष्ठानमें करने कराने सरु कर दिये, कितनेक वर्ष उग्रविहार कर वडे वडे प्रतिग्राम प्रति सहरोंमें फिरके उक्त प्रवर्त्तनाका प्रवर्त्तन किया. इत्यादि सठ गीतार्थोंका विशेष वृत्तांत देखना होय तो जैन ग्रंथोकी साक्षी युक्त अस्मत् कृत् "जैन कल्प वृक्षसें" जानना, तदनंतर श्री वृहत्तपागछादिक श्वेतांबर साधुतो शिथिल होते गये, और पीतांवरीयोका जोर बढनेसें आज पर्यंत सठगीतार्थोंकी समाचारीका प्रवर्त्तन सब देशावरोंमें हो गया.

पूर्वपक्षः—जैनशास्त्रोंसें विपरीत पीतांवरादि सठसमाचारी तो सठगीतार्थोंने आचरण करी प्रमाण करनेयोग्य नहीं, परंतु सामायिकादि चारित्रानुष्ठानमें चोथी थुइ सहित देववंदन करनेकी आचरणा जो सठ गीतार्थोंनेभी आचरण करी तो करनेमें क्या दोष हैं ?

उत्तरः—कारणविना भावस्तवमें द्रव्यस्तव करनेका महा दोष है.

पूर्वपक्षः—भावस्तवमें द्रव्यस्तव करनेकी मना कोन जैनशास्त्रमें करी है?

उत्तरपक्षः—श्रीमहानिशिथादि गणधरकृत् तथा आवश्यकादि पूर्वधरकृत् और योगशास्त्र धर्मसंग्रहादि बहुश्रुतकृत् अनेक ग्रंथोमें भावस्तवमें द्रव्यस्तव करनेकी मना करी है.

पूर्वपक्षः—चोथीथुइ बहुश्रुतोने भावपूजामें आचरण करी है वास्ते चैत्यवंदनविधि भावस्तव है, तो सामायिकादि भावस्तवमें भावस्तव करनेका दोष नहीं है.

उत्तरपक्षः—चैत्यवंदनविधीको पूर्वधर तथा बहुश्रुतोने भावपूजा ग्रहण करी है वास्ते द्रव्यपूजाकेऽनंतर भावपूजामें चोथीथुइ आचरण करीहै, परंतु भावपूजाकेऽनंतर आचरण नही करी है, वास्ते चोथीथुइ तो द्रव्यस्तवही है. भावस्तव नही है, तिसलिये सामायिकादि भावस्तवमें द्रव्यस्तव करनेका दोषही है.

पूर्वपक्षः—वाहजी वाह! क्या पूजा और स्तवमें भेद है? जो तुम उक्त लेख लिखतेहो?

उत्तरपक्षः—हांजी हां! पूजा अर्चन स्तवादि एकार्थ अभेदहीहै, परंतु कथंचित् प्रकारसें भेदभी है, सबही जैनशास्त्रोमें पर्यायांतर नाम लिखे है.

पूर्वपक्षः—पूजास्तव पर्यायांतरनाममें क्या भेद है?

उत्तरपक्षः—गंगा कहो, सुरनदी कहो, इत्यादि गंगा नदीके पर्यायांतरनाम अभेदही है, परंतु गंगा कहनेसें एक गंगादेवीका नामसेंही गंगा उपलक्षित होती है, और सुरनदी कहनेसें सर्व देवताओकी नदी उपलक्षित होती है, तैसे पूजा अर्चनादि पर्यायांतर शब्द तो अकेला द्रव्यभाव पूजाकाही संग्राहक है, और स्तव शब्द है सो द्रव्य-

भाव पूजा तथा द्रव्यभाव स्तवला सर्वकाही संग्राहक है, अर्थात् द्रव्यपूजा कहनेसें अष्टद्रव्यादिकसें अंग अग्रादि द्रव्यपूजा एकही उपलक्षित होती है, तथा भावपूजा कहनेसें चैत्यवंदनादि एक भावपूजाही उपलक्षित होती है, और द्रव्यस्तव कहनेसें अंग अग्रादि अष्टद्रव्यादिकसें द्रव्य पूजा तथा चैत्यवंदनादि भावपूजा दोनुं उपलक्षित होती है, अरु भावस्तव कहनेसें चारित्र अनुष्ठानादि भावपूजा तथा चैत्यवंदनादि भावस्तवर्मा दोनुं उपलक्षित होते है, अर्थात् द्रव्यपूजाकरके चैत्यवंदनादि भावपूजा करनेमें आती है, तथा जिनकी द्रव्यपूजाका फलकी अनुमोदना (वांच्छा) भावपूजा चैत्यवंदनादिकमें करनेमें नही आती है, वह द्रव्यस्तव कहलाता है, और चारित्रानुष्ठानादि भावपूजाकरके जो चैत्यवंदनादि भावपूजा करी जाती है तथा जिनकी द्रव्यपूजाका फलकी अनुमोदना (वांच्छा) चैत्यवंदनादि भावपूजामें करी जाती है, वह भावस्तव कहलाता है.

पूर्वपक्षः—द्रव्यपूजाकर चैत्यवंदनादि भावपूजा करी जाती है वह तो ठीक है, परंतु भावपूजा कर जो चैत्यवंदनादि भावपूजा करी जाती है वह पूजा कौन लक्षणवाली किस जैन ग्रंथमें कही है?

उत्तरपक्षः—श्रीमहानिशीथ सिद्धांतमें (दव्वच्चणंतु जिणपूया) अर्थात् जहां द्रव्यार्चन जिनपूजाकों बताई है तहांही (भावच्चण चारित्ताणु ट्ठाण कट्ठुग्ग घोर तव चरण) अर्थात् चारित्रानुष्ठान कष्ट उग्र घोर तप चरणादिककों भावार्चन (भावपूजा) बताई है, वास्ते द्रव्यार्चन जो द्रव्य पूजामें जैसे चैत्यवंदनादि भावपूजा करी जाती है, तैसे साधु श्रावकके सामायिकादि चारित्रानुष्ठान भावपूजामेंभी

चैत्यवंदनादि भावपूजा करी जाती है.

पूर्वपक्षः—द्रव्यपूजामें चैत्यवंदनादि भावपूजा करी जाती है तिस्कों द्रव्यस्तव क्यों कहा जाता है? और चारित्रानुष्ठानादि भावपूजामें चैत्यवंदनादि भावपूजा करी जाती है तिस्कों भावस्तव क्यों कहा जाता है?

उत्तरपक्षः—द्रव्यका भाव द्रव्यमें मिलता है; अरु भावका भाव भावमें मिलता है, वास्ते द्रव्य भावस्तव कहाता है.

पूर्वपक्षः—द्रव्य भाव स्तवमें चैत्यवंदनादि भावपूजा करी जाती है वह एक प्रकारही करी जाती है वा प्रकारांतरसें करी जाती है?

उत्तरपक्षः—द्रव्यभाव दोनों स्तवमें कथंचित् प्रकारांतरसें करी जाती है?

पूर्वपक्षः—द्रव्यस्तवमें किस प्रकारकी चैत्यवंदना करी जाती है? और भावस्तवमें किस प्रकारकी करी जाती है?

उत्तरपक्षः—द्रव्यस्तवमें उत्कृष्ट चारथुइसें चैत्यवंदना करी जाती है, और भावस्तवमें निःकेवल उत्कृष्ट तीनथुईकी चैत्यवंदनाही करी जाती है.

पूर्वपक्षः—तीनथुई और चारथुईकी उत्कृष्ट चैत्यवंदनामें क्या भेद है? जो तीनथुई भावस्तवमें कही जाती है, और चारथुइ द्रव्यस्तवमें कही जाती है?

उत्तरपक्षः—अरिहंतादिक पंचप्रमेष्टी महाव्रतियोंका तथा ज्ञानादि पदोंका द्रव्यसहितभावसें वंदन पूजन सत्कार सन्मानादि किये जाते है, वह तो द्रव्यपूजा तथा द्रव्यस्तव कहा जाता है, और निःकेवलभावसें वंदनादि प्रकार किये जातेहै वह भावपूजा तथा भावस्तव कहलाता है, वास्ते अरिहंतादिककी तीनथुइके जघन्य मध्यम उत्कृष्ट

देववंदन तो द्रव्यस्तव भावस्तव दोनुंमें किये जाते हें; और चोथीथुइसहित तीनथुइके अर्थात् चारथुइके मध्यम उत्कृष्ट देववंदन निःकेवल द्रव्यस्तवमेंही किये जाते है, क्योंकि चोथीथुइ जिनशासन भक्त सम्यकदृष्टी देवी देवोंकी है, और समदृष्टी देवता है वो अविरति सम्यकदृष्टी चतुर्थ गुणस्थानवासी श्रावक गृहस्थ कहे जाते है, तथा विरता विरती जो देशविरति पंचम गुणस्थानवासी श्रावक गृहस्थ कहे जाते है, अर्थात् जैनशासनमें अविरति समदृष्टी तथा देश विरति यह दोनुं श्रावक कहे जाते है, तिन्की परस्पर वंदनादि भक्ति पूजाकों श्रीमहानिशीथ सिद्धांतमें द्रव्यपुजाही कही हैं, परंतु भावपुजा नही कही है. यतः (दव्वच्चणं विरया विरय शीलपूया सकार दाणाइ) अर्थात् द्रव्यार्चन (द्रव्यपूजा) विरति अविरति श्रावककों " शील आचार नमस्कारादि पुंजा गंध पुष्पादि सत्कार वस्त्रादि सन्मान दानादिक" इस पाठमें यह भाव जतायाकि विरति अविरति दोनुं श्रावकोके वंदनादि (नमस्कारादि) परस्पर द्रव्यभावसें पूजा करी जाती है वह द्रव्य पुजाही हैं, परंतु भाव पूजा नही हैं.

पूर्वपक्षः—अरिहंतादिक महाव्रतियोके जैसे वंदन जो पंचांगादि नमस्कार अरु पूजन जो गंध पुष्पादिकसें और सत्कार जो वस्त्र आभूषणादिकसें तथा सन्मान जो अभ्युत्थानादि स्तुति स्तोत्रादिक द्रव्यसें किये जाते है, तेसेही भावसेंभी किये जाते हैं, तिस्मुजबही श्रावकोके भी परस्पर वंदन प्रणामादि नमस्कार यावत् सन्मान अभ्युत्थानादि स्तुति स्तोत्रादिक द्रव्यसें किये जाते है, तैसेही भावसें भी करनों क्या नही होते है?

उत्तरपक्षः—व्रती अव्रती श्रावकोके भी वंदनादि द्रव्य प्रत्ययी पूजा द्रव्यसें करी जाती है तैसेही भावसेंभी करी जाती है, तवही पूर्वधर तथा बहुश्रुतोने जिनशासन भक्त श्रावक समदृष्टी देवताओकी चोथी थुइ चैत्य वंदनादि भावपूजामें आचीर्ण किंयी है, परंतु अरिहंतादिक महाव्रतियोकी वंदन प्रत्ययादि द्रव्य पूजा तथा द्रव्यपूजा का फल चैत्यवंदनादि भावपूजाके कायोत्सर्गमें अनुमोदन (वांच्छा) कर पीछे स्तुती स्तोत्रादि किये जाते हैं, वहतो भावपूजा तथा भावस्तव पूर्वधर तथा बहुश्रुतोने ग्रहण किये है. और समदृष्टी श्रावक देवताओकी वंदन प्रत्ययादि द्रव्यपूजा तथा द्रव्यपूजाका फल चैत्य वंदनादि भावपूजाका कायोत्सर्गमें अनुमोदन (वांछा) करे विगर तिन्के स्तुति स्तोत्रादि किये जाते है, वह द्रव्यपूजा तथा द्रव्यस्तवही पूर्वधर तथा पूर्वाचार्योंने ग्रहण किये है.

पूर्वपक्षः—पूर्वधर तथा पूर्वाचार्योंने तो जैसे अरिहंतादिकका छ निमित और पांच हेतुसें कायोत्सर्ग कर अरिहंतादिकका गुणोत्कीर्त्तन रुप स्तुति स्तोत्र करना कहा है, तैसेही वैयावच्चादि तीन हेतु कारण समदृष्टी देवोंकों स्मरणा स्मारणा उपयोग दानादि निमित्त काोत्सर्ग करके तिन्के गुण वर्णन रुप स्तुति स्तोत्र चैत्यवंदनादि भावपूजामें करना कहा है, परंतु तिन देवोका स्तुति स्तोत्रादिककों द्रव्यपूजा तथा द्रव्यस्तवमें ग्रहण करनेका हेतु लेख कोइ पूर्वधर तथा बहुश्रुतोका ग्रंथोमें हमारे द्रष्टीगोचर तो आता नही ?

उत्तरपक्षः—अनेक पूर्वधर तथा बहु श्रुतोंके वचन रुप दीपकमाला जागते भी एकांत तीनथुइ माननेवाले

मतपक्षीयोंको अपने मतरूप अंधारेमें अरिहंतादिककी द्र-व्यपूजा करके चैत्य वंदनादि भाव पूजामें जैसे चोथीथुइ करनी निजर नही आतीहै तैसे एकांत चार थुइके मानने वाले मतपक्षी उल्लुओ (घुअडो) को तो अनेक पूर्वधर तथा बहुश्रुतोके वचनरुप सहस्र किरणोके उद्योत भयेभी सामायिकादि चारित्रानुष्ठानमें तीनथुइके देववंदन करने नजर नही आतेहै, तैसे समदृष्टी देवताओके स्तुति स्तोत्रादिककों द्रव्यपूजा द्रव्यस्तव समजनेका हेतु लेखभी चैत्यवंदनादि भावपूजामें अनेक स्थलमें पूर्वाचार्योंके लेख लिखे हुये तुमकोंभी नजर नही आतेहै.

पूर्वपक्षः—सैकडो सूर्यके उदय होतेभी उल्लु (घुअड) की आंखो खुलनेवाली नही तैसे अनेक पूर्वधर तथा बहुश्रुतोके वचनोंके लेखरुप सूर्यकिरणोके प्रकाशसें एकांत मत पक्षियोंकी आंखो तो मिच जायगी इसमें शक नही, परंतु दिव्य चक्षुके धारनेवाले अनेक अपक्षपाती भव्यजिवतो पूर्वाचार्योंके वचनका प्रकाश होतेही तिन एकांत मतपक्षीयोका मतरुप अंधारेसें बचके अपना आत्महित कल्याण करेंगे वास्ते प्रकाशित करनाही जरुरतहै.

उत्तरपक्षः—अनेकांत स्याद्वाद जैन रसिक अपक्षपाती दिव्य चक्षुके धारनेवाले भव्योके तो हमारे प्रकाशित किये विगरभी पूर्वाचार्योंके लेख आपसेंही देखनेमें आवेगाकि जहां जहां चैत्यवंदनादि भावपूजा करनेका पूर्वाचार्योंका लेखहै तहां तहां अरिहंतादिक महामंगलिकोकी द्रव्यपूजाकी तथा द्रव्यपूजाका फलकी अनुमोदना (वांच्छा) करनेकों (वंदण वत्तियाए) इत्यादि पाठ बोलके कायोत्सर्ग किये बाद स्तुति स्तोत्रादि करनेका लिखाहै, ओर जहां जहां

जिनशासन भक्त श्रावक देवताओका स्तुति स्तोत्रादिक करनेका चैत्यवंदनादि भावपूजामें लिखाहै तहां तहां तिन्की द्रव्यपूजाकी तथा द्रव्य पूजाका फलकी अनुमोदना (वांच्छा) करनेका निषेध पाठ लिखाहैकि (सकल योग बीजं वंदनादि प्रत्यय मित्यादि न पठयतेऽपीत्त्र न्यत्रोच्छ्व सितेनेत्यादि) अर्थात् सकल योगका बीज (वंदण वत्ति याए) यह पाठ नही कहना तो क्या कहनाकि (अनत्थ ऊस्ससिएणं) यह पाठ कहणा क्योंकि (तेषां मविरतत्वात्) अर्थात् तिनके अविरतपणाहै तिसिसें

पूर्वपक्षः—समद्रष्टी देवताओकों वैया वच्चादि जिनके कृत्यका उपयोग दानार्थ (वैयावच्च गराणं) इत्यादि कायोत्सर्ग करनेका पाठमें पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने अपने कृतिके सर्व ग्रंथोमें (वंदण वत्तियाए) इत्यादि पाठ कहनेका निषेध लिखके क्या भाव जतायाहे ?

उत्तरपक्षः—वंदण वत्तियाए-इत्यादि सूत्र सर्वयोग और चारित्रका बीजहै, अर्थात् चारित्रादि पद तथा चारित्र वंतोकी मन वचन कायादि योगकी करी हुइ वंदनादि चार प्रकार द्रव्य पूजाकी तथा तिन्का फलकी अनुमोदना (वांच्छा) करनेका बीजहै, यह बीज सूत्र उपयोग दानादि समदृष्टी देवताओका कायोत्सर्ग पाठमें कहनेसें तिन देवताओकी वंदनादि चार प्रकार द्रव्यपूजाकी तथा तिन्का फलकी अनुमोदना (वांच्छा) होजाय, और तिन्की द्रव्य पूजाकी तथा तिन्का फलकी अनुमोदना (वांच्छा) होनेसें तिन्के मन वचन कायादिक अव्रतयोगसें उत्पन्न हुवा अव्रतका आरंभ तिस्का भागी होना पडे, और तिस्का भागी होनेसें सामायिकादि भावपूजाका खंडित अर्थात् अभाव होजाय, वास्ते

पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने तिन देव गृहस्थ श्रावकोंको वंदनादि चार प्रकारकी द्रव्य पूजाकी अनुमोदना निषेधनेकों (वंदण वत्तियाए) इत्यादि पाठ कहनेका निषेध करके चैत्यवंदन भावपूजामें तिन्का कायोत्सर्ग करनेका लिखके यह भाव जतायाकि श्रीमहानिशीथ सिद्धांतोक्त व्रती अव्रती श्रावकोंको वंदन-नमस्कारादि, पूजा-गंध माल्यादि, सत्कार-वस्त्रदानादि, द्रव्य पूजा है, तैसोही यहां चैत्यवंदन भावपूजामें समदृष्टी देवोंको सन्मान दान पूजा तो तिन्के स्तुति स्तोत्रादिक कहनेको भी द्रव्य पूजाही जाननी. अर्थात् जिनकी द्रव्यपूजाकी तथा तिस्का फलकी अनुमोदना चैत्यवंदन भाव पूजाका कायोत्सर्गमें करी जाती है तिन्के स्तुति स्तोत्रादिक तो भाव पूजा तथा भावस्तव है, और जिनकी द्रव्य पूजाकी तथा तिस्का फलकी अनुमोदना चैत्यवंदना भावपूजाका कायोत्सर्गमें नही करी जाती है, तिन्के स्तुति स्तोत्रादिक द्रव्यपूजा तथा द्रव्यस्तवही है, वास्ते अरिहंतादिकोंकी द्रव्यपूजा तथा द्रव्यस्तव करनेके अवसरही समदृष्टी देवोंकी भी द्रव्यपूजा तथा द्रव्य स्तव जो स्तुतिस्तोत्रादिक करनायुक्त हे परंतु सामायिकादि भाव पूजामें यह द्रव्यस्तव करनायुक्त नही हें यह भाव जताया है.

पूर्वपक्षः—पूर्वधर तथा बहुश्रुतोंने पूजापंचाशादि ग्रंथोंके अनेक स्थलमें समदृष्टी देवताओंकी वंदनादि चार प्रकारकी द्रव्यपूजा जिनमंदिरमें करनी कही है, तैसेही श्रावक श्राविका आज पर्यंत करणमार्गणासें करते आतेहै तो (वैया वच्च गराणं) इत्यादि तिनको भावपूजा करनेका कायोत्सर्ग पाठमें (वंदणवत्तियाए) इत्यादि पाठ न कहना क्योंकि वे यक्षादिक देव अविरती पणे हैं, वास्ते वांदने

तथा द्रव्यस्तव नहीं करनेसें भव्यजीवोका संसार पतला नही पडता है, तथा उपगारीयोका विनय नही बन शक्ता है, और संसार पतला नही पडनेसें तथा उपगारियोका विनय नही करनेसें संसार वृद्धि दोष तथा उपगारी पुरुषोका विनय भंग दोष प्राप्त होताहै, फिर द्रव्यपूजा तथा द्रव्यस्तवके अवसर चार थुइके द्रव्यस्तव देववंदन नही करनेसें चोथी थुइका सर्वथा अभाव हो जाता है, और चोथीथुइका सर्वथा अभाव होनेसें चोथी थुइमें करे हुये समदृष्टी देवताओंके गुणवर्णन तिन्का अभाव हो जायगा. और गुणवर्णन करनेका अभाव होनेसें श्रीठाणांग सूत्रमें कहा हैकि (विवक्कत्त बंभ चेराणं देवाणं अवन्न वदमाणे दुल्लभ वोहियत्ताए कम्मं पकरेंति-तथा-वन्नं वदमाणे सुलभ वोहित्ताए कम्मं पकरेंति) अर्थात् (विपक्क) अतिसय करके पर्यंतको प्राप्त हुवाहै तप और ब्रह्मचर्य भवांतरमें जिनका अथवा विपकके॰ उदय प्राप्त हुवाहै तप और ब्रह्मचर्यके हेतुसें देवताका आयुष्कादि कर्म जिनके वास्ते तिन देवतावोंका अवर्णवाद बोलनेसें जीव अैसा महा मोहनीय कर्म बांधेकि जिस्के प्रभावसें जैनधर्म तिस जीवको प्राप्त होना दुर्लभ होजावे, और तिन देवताओंका गुण ग्राम करे तो सुलभ बोधी पणेका कर्म उपार्जन करे.

इत्यादि उक्त पाठोक्त भव्य जिवोकों सुलभ बोधी होनेकों समद्रष्टी देव श्रावकोंके गुणवर्णन करनेके लिये द्रव्यपूजा करनेके अवसर चोथीथुइका द्रव्यस्तव करनेका पूर्वधरादि बहूश्रुत आचार्योने आचीर्ण किया है, तिस्कों नहीं करनेसें तथा खंडन करनेसें दूल्लभ बोधीपणा उपार्जन होताहै, और पूर्वधर तथा बहुश्रुतोकी करी आ-

चरणाका खंडन होता है, और तिन्को करी आचरणाका खंडन होनेसें तिन्का लिखीत वचनोमें संदेह होता है.और तिन्का वचनोमें संदेह होनेसें तिन्को करी हुइहो वर्त्तमानमें पंचांगी है तिस्का अमान्यपणा होना है, और पंचांगीका अमान्य पणा होनेसें सर्व जैनशास्त्र अमान्य होजायगें, और सर्व जैन शास्त्र अमान्य होनेसें सर्वथा जैन धर्मकाही अभाव होजायगा. इत्यादि अनेक दोष चोथीथुइकें नही करनेसें प्राप्त होते है, वास्ते द्रव्यस्तव करनेके अवसर द्रव्यस्तव चार थुइके देववंदनही करना योग्य है.

पूर्व-जीत किस्कों कहते है, और आचरणा किस्कों कहते है?

उत्तरपक्षः—जीत कहो, कल्प कहो. आचीर्ण कहो, आचरणा कहो, उचित्त कहो, करणी कहो, व्यवहार कहो, यह सर्व एकार्थ श्रीव्यवहार भाष्यादिक जैन शास्त्रोंमें कहा है.

पूर्वपक्षः—जीतादिक एकार्थ कहे है तो वर्त्तमान त्रिस्तुतिक एकांत मतियोने श्रीसुरत देशीमित्र प्रेससें छपवाके सूर्योदयः प्रसिद्ध किया तिस्के पृष्ट ६ पंक्ति १७ में लिखा हैं कि "चोथीथुइनो रिवाज जीत व्यवहार कहेवाइ शकतो नथी" यह सूर्योदय लिखने वालेका लेख सत्य है या असमंजस है ?

उत्तरपक्षः—सूरिजी-जीतव्यवहार कोने कहे छे? "असढेण समाइण्णं जंकत्थइ कारणे असावज्जं ण निवारियमण्णेहिं बहुमणुमय मेतमाइण्णं (बृहत् कल्प निर्युक्तो) असठ-रागद्वेष रहित कालका चार्यादिवत् प्रमाणिक पुरुषोए समाचारित कोइक कारण अर्थात् पुष्टालंबने मूलोत्तर गुण साधनमां अबाधक तेज प्रकारना असठ गीतार्थोए जेने प्रतिषेध्यानथी एवुं गीतार्थोनुं अनुमोदित आचीर्ण अर्थात्

जीत कहेवाय छे " इतनाही उक्त लेख सूर्योदय लिखने वालेने सत्य लिखके पीछे सूर्योदयका अस्तोदय करनेको जितना लेख लिखा है वितना सबही असमंजस (असत्य हीं लीखे है, कि चोथी थुइका रिवाज जीत व्यवहार सिद्ध नही है, तो क्या चोथी थुइ करनेका रिवाज मिथ्या व्यवहार है, कि जैन व्यवहार है? जेकर कहोंगे मिथ्य व्यवहार है, तो चैत्यवंदन भावपुजामें अरिहंतादिक तीन थुइका भावस्तव करके पीछे एक नवकारका काउसग्ग करे, पीछे जिनशासन भक्त देवोंका गुणवर्णन की चोथी थुइ द्रव्यस्तव करनेका रिवाज जैन शिवाय कोन मिथ्या द्रष्टीयोमें ऐसा व्यवहार वर्त्ते है सो वतलाना चाहिये? जो कदाचित् कहोंगे मिथ्या द्रष्टीयोमें तो ऐसा व्यवहार देखनेमें आता नही, परंतु हमतो मुहजोरीसें मिथ्या व्यवहार कहते है, तो तुम कारण परत्व चोथी थुइ करके मिथ्या व्यवहार क्यों शेवन करते हो? अपना मुतलब साधनेकी वखत तो मिथ्या व्यवहारी बन जाना! ओर मुतलब सरे पीछे जैन व्यवहारी होजाना! ऐसा मिथ्या व्यवहार तो कोइ महा मिथ्याद्दष्टी भी नही शेवन करता, तैसा तुम शेवन करते हो, जेकर कहोंगे कि चोथी थुइ करनेका रिवाज जैन व्यवहार है तो जैनके जितना क्रिया अनुष्ठानादि करनेका है वह सर्व श्रीभगवती सूत्रोक्त पांच व्यवहारकी वर्त्तनामें कहे जाते है, और तुम त्रिकाल जिन पूजाके अवसर द्रव्यस्तव जो चोथीथुइ करनेका रिवाजको वर्त्तमानमें जीत व्यवहार सिद्ध नही करते हो तो क्या आगम १ श्रुत २ आज्ञा ३ धारणा ४ व्यवहारसें सिद्ध करते हो, तहां प्रथम आगम व्यवहारमें सिद्ध करना तो

मिथ्या ही है कि केवल १ मनपर्यव २ अवधी ३ चौदपूर्वधर ४ दश पूर्वधर ५ नव पूर्वधर ६ यावत् आगम व्यवहारकी प्रवर्त्तना आगम व्यवहारियोंकी वखतही प्रवर्त्तन होती है वहतो वर्त्तमानमें विच्छेदही है, तथा आचार कल्प * (आचारांग सूत्र) से लेके अष्टमपूर्व यावत् श्रुत (सूत्र) व्यवहार कहलाता है सोभी पूर्वधरोके व्यवच्छेद होतेही संपूर्ण तो विच्छेद हो गया वर्तमानमें बिंदूमात्र रहा है, तिसमें भी सूचना मात्र सूत्रोका अर्थको पूर्वधर श्रुतधर विद्यमान छते पूर्वधरोने जो जो आज्ञा करी तिस्को धारण कर परंपरागत वर्त्तमान बहुश्रुत तिस अर्थको आचरते आये वो अर्थ भी जीतव्यवहार कहावे है, तथा (जीतं नाम प्रभुता नेक गीतार्थ कृता मर्यादा तत्प्रतिपादको ग्रंथोप्युपचारात् जीतं) अर्थात् व्यवहार वृत्ति पीठिका में कहा है जीतनाम वहोत अनेक गीतार्थोकी करी मर्यादा तिस मर्यादाका कथन करनेवाला ग्रंथ भी उपचारसे जीत कहावे है.

यह उक्त लेख लिखनेका अभिप्राय यह है कि वर्त्तमानमें श्रुत (सूत्र) व्यवहार बिंदुमात्र रहा है वह भी आज्ञा धारणा सहित जीत मयी (अंतर्गत) रहा है, कारणकि आगम व्यवहारी तथा श्रुतव्यवहारीयोके किये सूत्रादि तथा ग्रंथादिकका अर्थभी विशेष करके परंपरा गत बहुश्रुतोकी आचरणासें जाना जाता है, क्योंकि सूत्र है सो सूचना मात्र है तिस सूत्रका अर्थ आचरणासें जाना जाता है, जैसे शिल्पशास्त्र भी शिष्य अरु आचार्य के क्रम करके जाना जाता है, परंतु स्वयमेव नही जाना जाता है, तथा मूल सूत्रोके व्यवछेद हुये और बिंदू मात्र संप्रतिकालमें धारण करने हुये अर्थात् बिंदु मात्र मूल

सूत्रके रहे, तिस सूत्रसें सर्वानुष्ठानकी विधी क्यों कर जा-
नी जावे, इस वास्ते बहुश्रुतोकी अर्थ परंपर आचरणासेंही
सर्व कर्त्तव्यमें परमार्थ जाना जाता है, जैन शास्त्रोंमें कहा
भी है कि बहुश्रुतोंके क्रम करके जो प्राप्त हुइ है सर्व
आचरणा सो आचरणा सूत्रके विरहमें सर्वानुष्ठानकी वि-
धीकों धारण करतीहै, जैसें दिपकके प्रकाशसें भली द्रष्टी
वाले पुरुषोने कोइक घटादिक वस्तु देखी है, सो वस्तु
दिपकके बुझ गये पीछे भी स्वरूपसें भूलाती नही है, ऐ
सेही आगम रुप दिपकके बुझ गये छते भी आगमोक्त
वस्तु अर्थाचरणासें सम्यकदृष्टी पुरुष आचार्योंकी परंप-
रासें जानतेहै इसका नाम जीत कहते है, तथा धर्मी ज-
नोमें पूर्वकालमें जीवताथा, और वर्त्तमानमें जीवे है, अरु
अनागत कालमें जीवेगा, जैनशास्त्रमें कुशल तिसको जीत कह-
ते है, और तिस जीतका नामही आचरणा कहते है, तिस वा-
स्ते यत् किंचित् श्रुत (सूत्र) व्यवहार और आज्ञा धारणा
सहित अति बहुल जीत व्यवहार यह दोनुं जैन व्य-
वहारही वर्त्तमानमें विद्यमान है तो अब सूर्योदय के
लिखने लिखाने वाले चोथी थुइको जीतव्यवहारसें सिद्ध
नही करते है तो क्या सूत्र व्यवहारसें सिद्ध करेंगे, नही
नही ! सूत्र व्यवहारमें सिद्ध करे तो इन्का सूर्योदयका
अगाडी पिछाडीका सर्व लेख अस्तोदय हो जाय, वास्ते
जैनके कोइ व्यवहारमें सिद्ध करनेकी तो इन एकांत
मतियोकी ताकात है नही, तो इन्की श्रद्धा प्रमाणे इनके
केवल मिथ्या व्यवहारमेंही माननी रही, तो फेर प्रतिष्ठादि
कारणमें यह लोक चोथी थुइ आदि देवोके स्तुति स्तोत्र
पूजादि मिथ्या सेवन करके ऐसे बडे बडे कार्योंको

क्यों बिगाड़ रहे हैं? तथा चोथी थुइ जीतव्यवहारमें सिद्ध नहीं मानते हैं तो सूर्योदय पृष्ठ ६–७ में "चोथी थुइ हरिभद्रसूरीनी समाचरित छे, ते असठ हतां, ए वातने हुं पण मानुंछुं, परंतु कोइ पुष्टालंबनथी नथी चलावी, मुलोत्तर गुण साधनमें पण ए बाधिका छे अने ते ज प्रकारनी असठ गीतार्थ नवांग वृत्तिकारक अभयदेव सूरिये भद्रबाहु स्वामीनां वचन बलथी चतुर्थ स्तुतिने नविन कहीने निवारण करी छें, ए बणा आचार्योनी अनुमोदित पण नथी; केमके जो सहुने मान्य होत तो चंदन भाष्य प्रवचनसार आदिमां युकी लगावीने केम स्थापी जात, एथी ए जीत व्यवहार सिद्ध नथी, किन्तु कोइ कारण विशेष उपर करवा सारु प्रथम चलावबामां आवी हती, बाद नित्य कर्त्तव्य थइ गइ, इत्यादि, यावत् शांति सूरिआदि आचार्योंए चोथी थुइने स्थापवा सारु जे युक्तियो लगाडी छे तेथी पण सिद्ध थाय छे के पहेलां प्रणज थुइ हती, नहीं तो एवुं लखवानी शुं जरूर हती. जो वात सिद्ध छे तेनां साधन सारु प्रयत्न करवो पडतो नथी"

इत्यादि अयुक्त लेख लिखके अपने हाथसेंही अपनां सूर्योदयका अस्तोदय किया गयाहै कि "चोथी थुइ हरिभद्रसूरिनी समाचरित छे" ऐसा लेख कोइभी जैन शास्त्रमेंहै नहीं, बलके जैन शास्त्रमें ऐसा तो लेखहै कि (श्री वीर निर्वाणात् वर्ष सहस्रे पूर्वं श्रुतं व्यवच्छिन्नं श्रीहरिभद्र सूरयस्तदनुं पंचपंचाशत्तां वर्षैः दिवं प्राप्ताः तद् ग्रंथ करण कालाद्या चरणयाः पूर्वमेव संभवात्) अर्थात् "विचारामृत संग्रह" ग्रंथमें श्रीकुलमंडन सूरिजीने ऐसा लिखाहैकि भगवंत श्रीमहावीरजीके निर्वाणसें हजार वर्ष

व्यतीत हुये पूर्वश्रुतका व्यवच्छेद हुवा, तदपीछे पंचावन वर्ष बीते श्रीहरिभद्र सूरिजी स्वर्ग प्राप्त हुये, उन श्रीहरिभद्र सूरिजीके ग्रंथ करण कालसें पहिलाही आचरणा चलतीथी; तबही श्रीहरिभद्र सूरिजीने "ललित विस्तरामें" चोथी थुइका पाठ लिखाहै. इस वास्ते श्रीहरिभद्रसूरिजीनेही आचरण नही करीहै, किंतु जो पूर्वधरोंकी वखतमें विघ्न विनाशनादि कारणिका चोथीथुइ प्रतिष्ठादि महत्कारणमें करणेकी आचरणा चलतीथी, तिस्कों पूर्वश्रुत व्यवच्छेद होनेके पहिलीही द्रव्य क्षेत्र काल भाव देखके भव्य जिवोंके सुलभ बोधी होनेका पुष्टालंबन हेतु समदृष्टी देवोका निरंतर गुणग्राम करनेके लिये चोथी थुइका द्रव्यस्तव जिनपूजा करनेके अवसर वर्त्तमान बहुश्रुतोने निरंतर चैत्यवंदनमें आचरण किया, वो आचरणा श्रीहरिभद्रे सूरिजीके "ललित विस्तरा" ग्रंथ करण कालसें प्रथमही चलतीथी, तथा ग्रंथ करण कालसें प्रथमही पूर्वधर विद्यमान छते पूर्वधर तथा बहोत बहुश्रुतोकी अनुमतीसें श्रीहरिभद्र सूरिजीने आचरणा कीयी, वह आचरणा कुच्छ अकेला हरिभद्र सूरिजीको करी हुइ नही कही जाती है, किंतु बहुश्रुतोकीही समाचरित आचरणा कही जाताहै, और कदाचित् श्रीहरिभद्र सूरिजीकोही करी हुइ आचरणा मानी जाय तोभी पूर्वधर तथा बहोत वर्त्तमान बहुश्रुतोने कोइ जगे निषेध नही करनेसें तिनोंकी अनुमतीकाभी निषेध करनेकों कोइ समर्थ नही, और असठ गीतार्थ आचरणा आचरतेहै वो आचरणा पुष्टालंबन हेतुही होतीहै, परंतु मूलोत्तर गुण साधनमें बाधिका नही होतीहै, तथा नवांग वृत्तिकारक श्रीअभयदेव सूरिजी महाराजजीने श्री

पंचाशक वृत्तिमें कल्पभाष्य और व्यवहार भाष्यादिं पूर्वधरोका वचन वलसें जघन्य मध्यम उत्कृष्ट तीन थुइकी देववंदना पुष्ट करके जो मध्यम वंदनाकी चैत्यवंदनामें चतुर्थ स्तुतिकों अर्वाचीन (नविन) कहीहै, सो अपनी वखत रूढ (वर्त्तमान) में द्रव्यस्तवियोके द्रव्य जिनपूजाके अवसर जो द्रव्यस्तव चोथीथुइ करनेकी बहुश्रुतोकी आचरणा चलतीथी तिस आचरणाका दर्शावके लिये तथा भावस्तवियोके भावस्तवके अवसर तीनथुइके देववंदन करनेकी पूर्वधरोकी आचरणा चलतीथी, इन दोनुं उक्त आचरणाका विद्यमान दर्शावके लिये चोथी थुइकों नविन जताके यह भाव जतायाकि चैत्यवंदन विधिमें चोथी थुइ सहित देववंदन करनेकी बहुश्रुतोकी नविन आचरणाहै, और तीनथुइसें देववंदन करनेकी प्राचीन आचरणाहै, इनमें प्रथमकी नविन आचरणाका मध्यमभेदकी चोथी थुइका अभाव दर्शाके तीनथुइके मध्यम उत्कृष्ट भेदकी व्याख्या जतानेका यह अभिप्रायहैकि चोथीथुइ तो मध्यम तथा उत्कृष्ट भेदकी चैत्यवंदनामेंही करी जातीहै; अरू (द्रव्यस्तव) जिन पूजाके अवसरही करनेकी बहुश्रुतोकी आचरणाहै और तीनथुइ-तो जघन्य मध्यम उत्कृष्ट सर्व भेदकी चैत्यवंदनामें तथा सात प्रकार अरू नव प्रकारकी चैत्यवंदनामें कोइ स्थलमें जघन्य कोइमें मध्यम और कोइ स्थलमें उत्कृष्ट साधु श्रावक दोनुंके निरंतर तथा पर्वादिकोमें सर्व भेदकी करी जातीहै, इसि वास्ते चोथी थुइके मध्यम उत्कृष्ट भेद ग्रहण किये नहीहै परंतु सर्वथा प्रकारसें चोथी थुइ निवारण करी नहीहै, तथा सर्व आचार्योकी अनुमोदितभीहै क्योंकि सर्व के (द्रव्य-

स्तव) जिन पूजाके अवसर मान्यथी तवही चैत्यवंदन भाष्य प्रवचनसार आदिमें एकांत मतपक्षीयोंकी कुयुक्तियां निवारण करनेकों सुयुक्तियां लगाके स्थापन किइ गइहैं, इसीसेंही यह जीत व्यवहार सिद्धहै क्योंकि द्रव्यादि कारण विशेष देखकेही बहुश्रुत गीतार्थ प्रथम आचरणा चलातेहैं वह आचरणा फेर नित्य कर्त्तव्यमें करी जातीहै, वहही जीत व्यवहार कहलाताहै. तथा (सूरिजी) बृहत्कल्प निर्युक्ति गाथोक्त जीत व्यवहार कहते मानतेहैं, तिस गाथोक्त लक्षणवाली आगम अनिषेध आचरणा थोडा कालकी करी हुइभी बहुश्रुतकी समदृष्टीयोंके प्रमाण करनेमें आतीहै तो हजार देढ हजार वर्ष पहिलेकी पूर्वधर अनुमोदित बहोत बहुश्रुत आचरित और आज पर्यंत के बहुश्रुत तथा असठ गीतार्थ अनुमोदित एसी द्रव्यस्तव जिन पूजाके अवसर द्रव्यस्तव जो चोथीथुइ करनेकी आचरणा कौण भव्य समदृष्टि प्रमाण न करे! अपीतु सर्व प्रमाण करे. परंतु भावस्तव (सामायिक) सहित प्रतिक्रमण पौषधादिकमें द्रव्यस्तव (चोथी थुइ) करनेकी तथा प्रथम चरम तिर्थंकर साधुओका श्वेत मानोपेत जैन लिंग (जैनवस्त्र) आद अनादका त्यागन करके पीतलिंग (पीलावस्त्र) धारण करनेकी सठ गीतार्थ आचरणा तथा नित्यवासादी शिथिलाचार्योंकी आचरणा और ढुंढकादिक निन्हवोकी करी आचरणा जो घणा वर्षसें चली आइ होय तोभी समदृष्टी जैनधर्मियोंके प्रमाण करी नही जातीहै, क्योंकि उक्त सठ गीतार्थादि आचरणासो अजीत (अनाचीर्ण) ही कहलाताहै, परंतु जीत तथा (आचरण) नही कहलाताहै, तथा (यावत्) शांति सूरि

आदि आचार्योंने चोथी थुइ स्थापन करनेके लिये जो युक्तियां लिखिहै तिस्सेंभी सिद्ध होताहैकि पूर्वधरोंकी वखतमें प्रतिष्ठादि महत्कारण विना तीन थुइके देववंदन करनेकिही आचरणाथी तद पीछे पूर्वधर व्यवच्छेद कालकेऽनंतरही बहुश्रुतोने द्रव्यस्तवके अंतर द्रव्यस्तव चोथी थुइ करनेकी आचरणा चलाइ तदनंतर तीन अरू चार स्तुतिसे दोनुं देववंदनकी प्रवर्त्तना चलानेकों और एकांत मतियोकी कुयुक्तियां निवारण करनेकों युक्तीयां सिद्धहैं, तिस्काही साधनके लिये प्रयत्न करनां पडताहैकि मोक्ष वस्तु सिद्धहै तो तिस्का साधनकी युक्तियां करनी पडतीहैं, परंतु खकुसुम (आकाशका फूल) असिद्धहै तो तिस्का साधनके लिये प्रयत्न करनां पडेता नही.

पूर्वपक्षः—सु० सं० अ० ठे० चोपडीमें तो लिखते है कि "त्रीस वर्षथी सूरिजी पोतेज उत्पन्न करेला त्रण थुइना रिवाज करतां चोथी थुइनो रिवाज वधारे मान्य छे" अरु सूर्योदय लिखने लिखानेवाले लिखतेहैं कि "त्रीस वर्षथी राजेंद्रसूरिजीनो चालतो त्रण थुइनो मत ए कहेवुं ए केवल अज्ञता बतावे छे, केमके त्रण थुइवालाओनो मत संवत (१२५०) मां चाल्यो हतो अने तपागच्छ संवत (१२८५) मां प्रतिष्ठित थयो" इन दोनु उक्त लेखोमें किस्का लेख सत्य है, और किन्का लेख असत्य है ?

उत्तरपक्षः—हमको तो दोनुंकाही दोनुं उक्त लेख असत्यही भासन होता है, कि सूरिजीने (असढेण समाइन्नं) इस भगवति सूत्र वृत्योक्त गाथाका भावार्थ यथार्थ जताके यह भाव जतायाकी असठ गीतार्थकी आचरणा प्रमाण किइ जाती हैं, तिस्कों न समजके सु० [illegible] अ० ठराव

वाले एकांत मतियोने संवत (१७२९) का वर्ष पीछे पीतांबरी (पीला कपडा) वालोने जिन मंदिरमें चोथी थुइ करनेकी बहुश्रुलोकी आचरणा खंडन करके सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिक भावस्तवमें द्रव्यस्तव (चोथी थुइ) आदि करनेकी सठ आचरणा चलाइ, तिस आचरणाका रिवाजको सैंकडो वर्षसें चलता आया देखके अधिक मान्य किया, और अति प्राचिन (पुराणी) तीन थुइका रिवाजको (३०) वर्षसें सूरिजीने उत्पन्न किया ऐसा जूठा कथन लिखके तीन थुइसें देववंदन करनेका रिवाज लुप्त होनेका आदरकर पूर्वधर तथा बहुश्रुतोकी महान् आशातना करनेका बीडा उठाया है; तथा "सूर्योदय" लिखने लिखानेवालोने पहिला पृष्ठमें लिखा है कि "सम्यक्दृष्टी देवोनी स्तुति कोइ कोइ वखते करवी पडेछे, नित्य वीतराग भगवाननी स्तुतिनी साथे साथे ते देवोनी स्तुति न करवी, केमके नित्यदेव प्रार्थनाथी नित्य आशाबंध करवी पडे छे" तथा तिसरा पृष्ठमें लिखते है कि "वीतराग भगवंत शेवानी वैरिणी ए व्यंतर देव पूजानी मूल माता चोथी थुइ छे—तथा कोइ कोइ आचार्योना विचारमां आव्युं के व्यंतर देव आ समये जो आराधवामें आवे तो आपणा शासननी तेओ रक्षा करे." इत्यादि—विक्रम संवत (९६२)मां हरिभद्रसूरिये "ललित विस्तरा" ग्रंथमां व्यंतर देवनी स्तुति लखी, यावत् देव स्तुति सावित करवा सारु मोटी कोशीष करवामां आवी छे" इत्यादि लेख लिखने लिखाने वालेने महा मिथ्यात्व मोहनी दूर्लभ बोधी कर्म उपार्जन करनेकी कोशीष करी है कि, श्रीठाणांग सूत्रमें अरिहंत वीतराग भगवंतका तथा श्रीवीतराग परू-

पित श्रुत चारित्र धर्मका गुण वर्णनका पाठ पीछे आचार्य अरु संघ तथा समदृष्टी देवोंका गुण वर्णन करनेका पाठ है, तिसपाठके अनुक्रमसें पूर्वधर तथा वहुश्रुत गीतार्थोने अरिहंतादिकोंका गुणवर्णन करने के लिये स्तुतियोका क्रम किया है कि अरिहंत चैत्य तथा अरिहंतोके सर्व लोक संबंधी प्रथमकी दोनुं स्तुतियोमें तो अरिहंतोकाही गुण ग्राम किये जाते है, अरु तीसरी स्तुतिमें श्रुतधर्म चारित्र धर्मका गुण वर्णन किये जाते है, तिस्में गुण गुणी अभेदोपचारसें और भावस्तव भावस्तविओका साहशपणासें आचार्यादि साधुसाधवीयोका गुणग्राम करनाभी इसीस्तुति मे समानिवेश होतेहै. तथा अविरती समदृष्टी तणु गुणवाले श्रावकश्राविकाके गुणग्रहण करनेसें उत्कृष्ट श्रावकादिकका गुणग्राम करनातो अर्थात्‌ही सिद्धहै, परंतु उत्कृष्टअंतरगत विरतवंत श्रावकादिककी भक्तिभाव तथावैयावच्चादि करनेवाले नियत समदृष्टीदेवताओका गुणग्रामकरनेसें अनियत समदृष्टी तथाविरतवंत श्रावकश्राविकायोका गुण ग्रामतो अंतर्गत भावित मान होताहीहै, और श्रावकश्राविकाके संघमें समदृष्टी देवतायोकों विधी विवेक धर्म मर्यादादिक कार्यमें महर्द्धिक जानके तिन्के गुणग्रामके अर्थ द्रव्यस्तव (जिनपूजा) के अवसर नित्य अरिहंतादिक वीतराग भगवंतकी स्तुतिके साथही द्रव्यस्तव (चोथी थुइ) नित्य करनेकी आचरणा वहुश्रुत गीतार्थोने भव्योके सुलभ वोधी होनेके लिये करीहै, परंतु नित्य देवोकी प्रार्थनाके लिये नहीं करीहै, तथा वीतराग भगवंत शेवाकी वैरिणी यह व्यंतर देव पूजाकी मूलमाता चोथीथुइ नहींहै, किंतु वीतराग भगवंतकी शेवा भक्ति और शासनकी वृद्धि करनेवाले चारो निकायके

इंद्रादिक देवहै तिन्के गुणग्राम वीतराग भक्ति शंघाके आश्रयसेंही किये जातेहै, वास्ते वीतराग भगवंत शेवा भक्तिकी उत्पादक मुल माताहै परंतु व्यंतरादि मिथ्यादृष्टी देवोकी उपासनाकी करने करानेवाली नही है; और व्यंतरदेव इस समय जो आराधनेमें आवेतो आपणा शासनकी वो रक्षा करे, एसा विचारभी आज पर्यंत तकके बहुश्रुत कोइ आचार्यके दिलमें आया नही, क्योंकि श्रीभगवती सूत्रोक्त सनत्कुमार इंद्रादि शासन भक्त देव स्वतःही अपने आत्म लाभके लिये जिनशासन शंघके हित चिंतनादि कार्य कर रहेहै, तो निच व्यंतर देवोकी रक्षाकी वांच्छा कोन अभाग्य शेखर करे, फिरभी बौधादि अन्य दर्शनी इस प्रकार सें चमत्कार दिखातेहै, तो अपणे अनुयायी जो लोक संसारिक वासनामें लगेहै तिन्के लिये जो कोइ उपाय न बतावनेमें आवेगा तो वह परदर्शनीयोमें इस कामके लिये जायके कितनेक द्रिवसें सम्यक्त खोय बेठेगें ऐसा समजके सबसें पहिलेही विक्रम संवत (९६२) में श्री हरिभद्रसूरिने ललित विस्तरा ग्रंथमें व्यंतर देवोकी स्तुति लिखी!

इत्यादि आगे पीछे के सूर्योदयके सर्व लेख स्वकपोल कल्पित खर शृंगवत् लिखेहै, ऐसे लेख कोइभी जैनशास्त्र में लिखेहै नही. और ऐसे मनकल्पित लेख लिखने लिखानेसें जैन शासनकी अन्य दर्शनियोमें हीनता जताके अपने हाथसें अपने धर्मकी अवहिलना कराके महा मोहनी दूर्लभबोधी कर्म उपार्जन कियाहै कि जेकर उसी समयमें बौधादि अन्य दर्शनी चमत्कार दिखातेथे तो क्या ! जैनदर्शन चमत्कार रहित होगयाथा? जो अपने अनुयायी लोकोकों जूठी ठगाइसें अपने धर्ममें रखनेका उपाय करतेथे?

वाहजी वाह! जो सख्स हाथीके दांत देखने चाहे तिस्कों गर्द्धभका दांत बताके खुश करते हो! तैसे चमत्कार के देखनेवाले लोक कुच्छ चोथी थुइ करने कराने के व्हानेसें चमत्कार नही मानते है किंतु उसी समयमें जैन दर्शनमें चमत्कार था! तैसा बौधादि अन्य दर्शनियोंमें भी न हो था! देखना चाहिये! एकही निदर्शन (द्रष्टांत) कि (१४४४) बौध दर्शनीयोकों सवलीयोका रुप धारण करवाके श्रीहरिभद्रसूरि महाराजजीने एक पलकमें आकर्षण (खेंच) करके बुलवाये थे। इत्यादि अनेक तरहके चमत्कार जैन दर्शनमें उसी समयथेतो जूठा व्हाना करके अपने धर्मी लोकोकों किस वास्ते जूठा ठगाइका उपाय बतावे? तथा विघ्न विनाशनी पूजा अर्थात् रोगादि विघ्न दूर करनेकों शांतिस्नात्रादि जिन पूजाके अवसर और (अभ्युदय साधनी पूजा) अर्थात् पुत्र कलत्र धन धान्य लक्ष्मी आदि भाग्योदय साधनी पूजा इत्यादि चमत्कारीक अनुष्टान करनेके लिये तो श्रीआवश्यक निर्युक्त्योक्त जिनपूजाके अवसर पूर्वधरोकी वखतमेंभी चोथीथुइ करनेकी आचरणा चलतीथी, इस वास्ते नित्य जिनपूजाके अवसर चोथीथुइ करनेकी आचरणा बहुश्रुतोने कुच्छ चमत्कार तथा पौद्गलिक (संसारिक) आशा निमित्त नही करीहै. किंतु श्रीआवश्यक निर्युक्त्योक्तनिवृति मोक्षगामिनी जिनपूजाके अवसर अरिहंतादिक गुण ग्राम सदृशपाठकी लाभ प्राप्तीके अर्थ दूर्लभबोधी कर्मखपाने के लिये (अपौद्गलिक) धर्म विघ्नांतराय निराकरण सुखप्राप्तिके अर्थ समदृष्टी देवोके करणीय कृत्यका तिन्कों उपयोग दान निमित्त चोथीथुइ महावीर संवत (९६२) पहेलीपूर्वधर विद्यमान छते जिनपूजाके अवसर चैत्यवंदन विधीमें बहु

श्रुतोने आचरण करी, तिस आचरणाका लेख वि.सं. ५८५ में स्वर्गवास होनेवाले औरश्री आवश्यकवृति आदि(१४४४) ग्रंथोके कर्त्ता जैनदिवाकर श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजजीने श्रीचैत्यवंदन सूत्रकी ललित विस्तरावृतिमें लिखाहै कि(उपचित पुण्य संभारा उचितेषूपयोग फलमे तदिति ज्ञापनार्थं पठंति) अर्थात् पुष्ट कियाहै पुण्यका समूह ऐसे समदृष्टी देव श्रावक तिन्केउचित (योग्य)कार्योके विषे उपयोगदान (स्मारणा) करानेका फल यहहै. ऐसा जनानेके वास्ते (वेयावच्चगराणं) इत्यादिक है, इस पाठमे भाव यह जतायाहै कि वैयावृत्य कहिये जिनमंदिरकी रक्षाकरनी, परिस्थापनादि जिनमतका कार्य करनां, शांति सो जिनभूवनमें प्रत्यनीकके करे हुये उपसर्गोका निवारण करनां, समदृष्टीश्रीसंघ तिस्कों दो प्रकारकी समाधिके करनेवाले ऐसा शील कहते स्वभावहै जिनसाधर्मि देवताओका तिन्कोंउक्तअपने कृत्यके उपयोग देनेका सन्मानके अर्थ कायोत्सर्गकरताहुं.

इत्यादि लेखविचारसेंही तद्पीछेके वहुश्रुतोनेपंचमकालकरालका महातमसें जानाकी द्रव्यस्तवके अवसरद्रव्यस्तवके सर्वथा उत्थापनेवाले और भावस्तवमें द्रव्यस्तवके सर्वथा स्थापनेवाले ऐसे मनोमति हुंडावसर्पिणि कालको देदिप्यकरने वास्ते वहुश्रुतोकी आचरणाकों लुप्तकर अपने मनमानी अनेक आचरणाके चलानेवाले पंचमकाल प्रभावी कुमत मत जाग्रत होयगें, तिन्का निराकरण करनेको श्रीउत्तराध्ययन वृहद् वृत्तिके कर्त्ता वादी वेताल श्रीशांत्याचार्यादि वहुश्रुताचार्योने चैत्यवंदन महाभाष्यादि ग्रंथोमें पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष करके प्रथमही समजानेका वहोत प्रयत्न किया तोभी नाणावाल विरुदधारक श्रीसौधर्म वृहत् नाणावा

ल गच्छमेंसे वि. सं. (१२१४)में अंचल मतोत्पत्ति करने वा लोने तीन तथा चार चूलिका स्तुतिके देववंदन उठाके (लोगस्स-पुख्खरवरदि-सिद्धाणं बुधाणं) इन तीन ध्रुव स्तुतिके देववंदन करनाही स्थापन किया, तिन मतांतरियोंके पीछे सिद्धांत विरुद्ध धारक श्रीसौधर्म सिद्धांतिक गच्छमें से वि. सं. (१२५०) में आगमिक मतोत्पत्ति के कर्त्ता सठाचार्य श्रीशीलभद्राचार्यने द्रव्यस्तव (जिनपूजा)के अवसर द्रव्यस्तव (चोथी थुइ) करनेका सर्वथा उत्थापन कर एकांत तीन थुइ करनेका मत स्थापन किया, तिस समयमें खरतर विरुद्ध धारक श्रीसौधर्म बृहत् खरतर गच्छमेंसे वि० सं० [१२०४] में खरतर मतोत्पत्तिके सठ आचार्यादिकने सर्वथा तीन थुइकों लुप्त करनेकों साधु श्रावक दोनुने जिन मंदिरमें चोथी थुइ करनी सरूकर दिइ; तिस अवसरमें श्रीसौधर्म वडगच्छके साधु श्रावकोंमें तो अपने अपने अवसरके दोनुं देववंदनकी मर्यादा चलतीथी, तद पीछे वि०सं०[१२८५] में तपा विरुद्ध धारक श्रीसौधर्म वृहत्तपा गच्छ प्रतिष्ठित भये पीछे वि० सं० (१७२९) के वर्ष श्रीतपागच्छमेंसे फटके श्रीज्ञानविमलादि तपामतियोंने पीला कपडा धारण कर पीतांवर मत फेलानेकों श्रीतपगछके श्रावकोंकों भर्म में डालके आगे लिख आये जिस्मुजव समाचारी वदलाइ, तव श्रीजिनमंदिरमें बहुश्रुतोंकी आचरणा चारथुइ करनेकी लुप्त कर सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिक भावस्तवमें द्रव्यस्तव चोथी थुइ करनेका रिवाज चलाया, तवसें सतत् प्रयत्नसें श्रीतपागच्छकी मूल समाचारी वदलती देख और पीतांवर मतियोंका बहुमान मानतासें सब देशावरोंमें तपामतीयोंकी समाचारी फेलाती देख श्रीखर

तर गच्छमेंसें प्रथमही फुटे हुवे खरतर मतियोंनेभी अपने खरतर मतकी समाचारी दृढकरनेको वि.सं. (१८०० के समयमें पीतांबर (पीलाकपडा) धारनकर पीतांबर मतकाफैलावकिया, तबसें धीरेधीरे पसार होते आज पर्यंत जैसें पंचमकाल प्रभावसें वि०सं०(१७०९)की सालसें ढुंढक मतियोका प्रचार वढते वढते वर्त्तमानमें सर्वदेशावरोंमें प्रचार वढ गया तैसे पीतांवरीयोका प्रचार वढनेसें और श्वेतांवरोका प्रचार शिथिल होनेसें सर्व देशावरोंमें वहुलतासें पीतांबरी सठमतीयोकी आचरणा वर्त्तमानमें प्रचालित हो रहीहै, वास्ते सूर्योदय पृष्ट तिसराका सर्व लेख वेसमजकाही कीया है.

अब आचरणा निर्णयका निगमन करते हैं कि (असढेण समाइण्णं) इस गाथाका भावार्थ सूरिजीका किया श्रीसूरतके पीतांवरी शंघको यथार्थ समजनेमें नही आनेसें श्रीसुरत सुज्ञ संसय अगत्य ठेरावकी चोपडीमें श्रीवृहत्तपागच्छादि श्वेतांवरगच्छोकी मूल आचरणा सर्वथा विलुप्त करनेको और पीतांवरादि सठमतियोकी आचरणाका प्रवल फेलाव करनेको जैनशास्त्र पूर्वधर तथा वहुश्रुतोकी आज्ञा विरुद्ध अगत्यका (अपगतका) ठेराव प्रसिद्ध किया है, तथा सूर्योदय लिखने लिखानेवालेनेभी (श्रीकल्पनिर्युक्ति) गाथोक्तसूरिजी जीतव्यवहार कहते मानते है, तिस्का यथार्थभाव नही समजके (द्रव्यस्तव) जिनपूजाके अवसर नित्य (द्रव्यस्तव) चोथीथुइका उत्थापनकर वि० सं० (१२५०) में त्रिस्तुतिक सर्वथा चोथीथुइ उत्थापक एकांतमतियोका उच्छेद होते सूर्योदय पृष्ट चार पंक्ती दोयका लेख प्रमाणे जिर्णोद्धारकर यत्र तत्र अगत्य (अपगत) ठेरावका मंडन करवाते है; वास्ते श्रीतपगच्छ खरतरगच्छादि चोरासीग-

च्छके जैनश्वेतांबर सर्व देशके संघको हमारी यथायोग्य विनयपूर्वक विनंती है कि पीतांबरादि शठाचार मतियोने शठाचार्योकी आचरणाकी प्रवृत्तिकर अत्युत्तम श्रीजैनधर्मकों चालणी प्राय करदिया है और परस्पर राग द्वेष कर श्रीजैनधर्मकों निंदित करा रहे है, तथा अपने अपने नाम ठाम गाम गुणादिकसें विरुदके धारनेवाले (८४) गच्छ है, परंतु पूर्वधर तथा बहुश्रुतोकी आचरणा समाचारीके सर्व गच्छ सर्वथा अविरोधी है, तिन कोई कोइ गच्छमेंसे फटके तपामति खरतरमतिआदि मतियोने तिन तिन गच्छोका तथा अपने अपने नाम और कुमतका नाम धारनकर अपने मनमानी आचरणा तथा समाचारी प्रवर्त्तनकर जिनमतकों छिन्न भिन्न करदिया है. अरु फिरभी नये नये प्रगट होते जाते है, तिन मतियोका निराकरण करनेकों और सर्व जैनश्वेतांबर पीतांबरोकी आचरणा तथा समाचारी एकत्र करनेकों ऐसी जैनश्वेतांबर कोन्फरन्स होनी चाहियेकि प्रथमतो मध्यस्थ प्रमुख होना चाहिये जो जैनशास्त्रका पूर्ण विद्वान हो, और अपक्षपाती विवेकी हो (२) वादकालमें एक समय एकही मनुष्य बोले (३) ऐसे मनुष्यकों न बोलने देना चाहिये जो शिथिलाचार असमंजस प्रलापी हो (४) वादी प्रतिवादीयोके वचन ठीक ठीक एक अपक्षपाती रीपोर्टरनोट करता जाय, इस प्रकार शास्त्रार्थ होके निर्णय पर्यवसित जैनसाधु श्रावकोकी प्रवृत्तिनोकी आचरणा तथा समाचारी शंघ सम्मतिसें एकत्र लिख छपवाके प्रसिद्ध करनेमें आवे, और जो प्रमाण करे उसी मुजब न चले तिस्कों जैनशंघ ब्हार करनेका सख्त दंड दान देनेमें आवे, तब सर्व जैनधर्मियोका एकत्र होनेका संभव होय. परंतु ऐसा प्रयत्न तो जिस्की माताने शेर सुंठ

स्वाके जन्म क्रिया होय वो करे। अन्यथा तो व्याव स्वादी आदि अनेक संसारकृत्य नाम कर्मके लिये लग्खों क्रोडों रुपैये खर्चकर जैनीनामधराके दुर्गतके अधिकारी बन रहे है, तो लखों नवकारसी, हजारो जिनमंदिर, क्रोडों जिन प्रतिमा, प्रतिष्ठापन करनेसेभी अधिक लाभ प्राप्त होनेका थोडा खर्च और बहोत नफाका उक्तकार्य क्यों न करे? जो कदाच एक गृहस्थसें नहीं बनशकेतो अहमदाबाद, सुरत मुंबाइ, आदि पांच दश शहर ग्रामोंके संघ अपनेअपने प क्षपात मतकों छोडके एकत्र होके उक्त कार्यका प्रयत्नकरे तो सहजमें बन शक्ता है, परंतु—॥ वक्ता तो मतपक्षी भये, श्रोता भयेज शठ; सत्यासत्य समजे नहो, जैन मार्ग गयो नठ; जैन धर्मके मर्म नहीं, वरते मान कषाय; यह बडा अचरिज भया! सो जलमें लग्गी लाय. ॥

इत्यादि वडवानल अग्निके शांत करनेवाला तो कोइ युग प्रधान पुरुष होगा वोही कर शकेगा? परंतु अहो भव्यजीवो तुम जो अपना आत्माका कल्याण इच्छकहो अरु परभवमें उत्तमगती उत्तम कुल पाकर बोध बीजकी सामग्री प्राप्त करणेके अभिलाषी होवोतो श्रीजैनशास्त्र असम्मत पूर्वधर तथा बहुश्रुतोंकी दोनुं आचरणासें विरुद्ध एकांत तीन थुइका मत तथा सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादि क भावस्तवमें द्रव्यस्तव जो चोथीथुइ करनेका मत, इन दोनुं मतका पक्ष कदाग्रह छोडके श्रीजिन मत तथा श्री जैन शास्त्र सम्मत निर्णयको देखके पूर्वधर तथा बहुश्रुत दोनुंकी आज्ञा सहित आचरणासें वर्त्तोगे तो सम्यक्तका आराधक होके संसार भ्रमणसें बचके सिघ्रही अपना आ त्मकल्याण मंगलमाला पदको वरोगे. (प्रथम प्रस्ताव समाप्त)

॥ अथ द्वितिय प्रस्ताव. ॥



सु० सं० अ० चो० पृ० २. पं० १३ में लिखा है कि महा भाष्यमाँ चैत्यवंदननाँ नव भेद कह्या छे तेमांथी थोडा ग्रहण करो छो ने बीजा चार स्तुति तथा आठ स्तुतिदर्शक भेद छे ते केम ओलवो छो ? त्यारे कहेर्यु के महाभाष्य कांइ सूत्र नथी. आप अकेला सूत्र प्रमाण करो छो शिवाय बीजुं बधुं अप्रमाण छे ? आवे पंचांगी आगळ प्रमाण कही छे तो तेमां भाष्य समातुं नथी ?. अंत्र यथा तथा जवाब आप्यो.

स. ले. समा. इसउक्त लेखमें प्रश्नोत्तर दोनुही असमंजस (असत्य) ही लिखे हैं.

॥ समालोचना निर्णयः ॥—चैत्यवंदन महाभाष्यमें चैत्यवंदनाके नवभेद दर्शाये हैं सो अधिकार प्राप्त यथायोग्य अवसरपर करनेके बताये हैं तहां कोइ अवसरपर एक तथा दो अधिकारसें जघन्य वंदना करनी पडती है तथा कोइ अवसर दो अधिकार सहित तीन अधिकार तक मध्यम चैत्यवंदना करनी पडती है फिर कोइ अवसर पूर्वके सात अधिकार सहित आठमां अधिकारसें लेके यावत् ग्यारमां बारमां अधिकार तक उत्कृष्ट चैत्यवंदना करनी पडती है अर्थात् भावस्तवितो महाभाष्योक्त उभय काल प्रतिक्रमण आर्थसही ग्यारह अधिकार सहित उत्कृष्ट जघन्यादि तीन शुद्धसें तीनो उत्कृष्ट भेदकी यथाशक्ती वंदना करे, तथा सामायिक सहित पौषधादिकमें त्रिकालके देववंदन ग्यारह अधिकार सहित उत्कृष्ट जघन्यादि तीन अरु दुगुणी छ शुद्धसें उत्कृष्टके तीनो भेदकी वंदना करे, और अन्य

दूसरे दो अधिकारांत जघन्य जघन्यादि तीन भेद अरु तीसरा अधिकारसें मध्यम जघन्यादि यावत् सातमा अधिकार सहित तीन थुइसें मध्यमोत्कृष्टाके तीन भेद एवं छ भेदकी वंदना चैत्यप्रवाडी आदिमें करे, तथा प्रथम श्री हरिभद्र सुरिजी महाराजजीने भाव स्तवियोके तीन थुइसें देववंदन करनेकी पूर्वधरोकी आचरणा और द्रव्य स्तवियोके जिनपूजा अवसर चारथुइसें देववंदन करनेकी दुश्रुतोकी आचरणा इन दोनुं आचरणाका वर्त्तमान सद्भाव जतानेकों श्री वंदनपंचाशकमें महाभाष्योक्त नव भेदोंके लक्षण रुप तीन भेद चैत्यवंदनाके कथन करेहै कि (णवकारेण जहन्ना दंडय थुइ जुयल मज्झि मानेया संपुन्ना उक्कोसा विहुणा खलु वंदणा तिविहा ॥ १ ॥ अर्थात् एक तो नमस्कार मात्र करणे करके जघन्य चैत्यवंदना ॥ १ ॥ दूसरी एक दंडक अरु एक स्तुति इन दोनोके युगलसें मध्यम चैत्यवंदना जाननी ॥ २ ॥ तीसरी संपूर्ण उत्कृष्टी चैत्यवंदना जाननी ॥ ३ ॥ त्रिधी करके वंदना तीन प्रकारसें है इश पाठमें तीन चार स्तुति शब्दका नहीं ग्रहण करनेसें और दंडक स्तुति शब्दका ग्रहण करनेसें तीन अरु चार स्तुतिकी दोनुं चैत्यवंदना सूचन होती है तिस्में (णवकारेण जहन्ना जहन्नय जहन्निया इमाखाया दंडय एगथुइए विन्नेया मज्झ मज्झिमिया ॥ ६७ ॥ संपुण्णा उक्कोसा उक्को सुक्को सियाइ मासिद्धा उवलक्खणं खुएयं दोण्ह दोण्ह सन्नाईए ॥ ६८ ॥) अर्थात् नमस्कार मात्र करके जो जघन्य वंदना कही हे सो जघन्य वंदनाका प्रथम जघन्य जघन्य भेद कहा है ॥ १ ॥ और दूसरी जो एक दंडक अरु एक स्तुतिसें मध्यम चैत्यवंदना कही है सो मध्यम मध्यमनामा मध्यम

चैत्यवंदनाका दूसरा भेद कहा है ॥ २ ॥ ६७ ॥ संपुणा उक्कोसा यह पाठसें संपूर्ण उत्कृष्ट उत्कृष्ट वंदनाका तीसरा उत्कृष्टोत्कृष्ट भेद कहा है ॥ इन तीनों उप लक्षणरूप कहनेसें शेष एकेक वंदनाके स्वजातीय दो दो भेदभी ग्रहण करना ॥ ६८ ॥ ऐसे सर्व नव भेद चैत्यवंदनाके पंचाशकजीकी गाथायोंसे सिद्ध हुये है जिन्कों म-हा भाष्यकारजीने सिद्ध कर जताये है जिसमें श्री हरिभद्रसूरिजी महाराजजीने जैसे वंदनपंचाशक तथा ललितविस्तरामें दोनु आ-चरणाका सद्भाव सूचक वाक्य लिखे है तैसेही वादिवेताल श्री शांतिसूरिजीनेभी चैत्यवंदन बृहद्भाष्यमें प्रथम पूर्वधरोंकी तीन थुइकी आचरणाका सद्भाव जतानेकों तीन थुइसें नव भेदकी चैत्यवंदना जता के पीछे वैयावच्चगराण) इत्यादि सूत्रार्थमें चौथी थुइका पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष करके अच्छि तरहसें स्थापन कर बहुश्रुतोंकी आचरणाका सद्भाव द्रव्य स्तवमें द्रव्यस्तव करनेका जताया है.

पूर्वपक्षः—महाभाष्यकारजीने तो (थुइ जुयल जुयल पूर्ण) इस पाठसें प्रथम युगल शब्दसें चार अरु युगल शब्दमें चार एवं आठ थुइ दोचार चैत्यस्तवादि दंडक यह कहनेसें उत्कृष्ट मध्यम आ दमी भेद चैत्यवंदनाका सिद्ध किया है, जेकर आठमो भद आठ थुइसें सिद्ध भया तो स्तोत्र प्रणिपात दंडक प्रणिधान तीन इनो क रके सहित आठमी वंदनाकों किये छते नवमी वंदनाभी आठ थुइसें सिद्ध भइ जेकर नवमी वंदना आठथुइसें सिद्धभइ तो पूर्वकी छठी सातमी वंदना तो अर्थातही चारथुइसें सिद्ध भइ और पूर्वकी छठी सातमी वंदना चारथुइसें सिद्धभइ तो नवही प्रकारकी वं दना चारथुइसें सिद्धहुइ गिनीजायगी, परंतु तीनथुइसें सिद्ध हुइ नहीं गिनी जायगी ?

उत्तरपक्षः—महाभाष्यकारजीने जो छठी सातमी वंदना के भे-

इसें " चउ थुइयो तथा जुयल थुइयो " इन दोनु वाक्यमेंसें एकभी वाक्य जता के जो छठी सातमी वंदना सिद्ध करके जताइ होती तब तो तुमारे कहे प्रमाणे आठमी नवमी तथा पूर्वकी सर्व वंदना चार थुइसेंही सिद्ध हुइ गिनी जाती परंतु वृद्धभाष्कारजीने तो छठी सातमी वंदनामें प्रत्यक्ष तीन थुइकाही पाठ लिखा है कि (मज्झिम जेठा सच्चिय तिन्नि थुइओ सिलोय तिय जुत्ता) अर्थात् तिस पांचमी मध्यम मध्यम वंदनाकों तीसरी थुइ श्लोक तीन संयुक्त करनेसें मध्यम जेष्टा अर्थात् इरियावहि, नमस्कार, शक्रस्तव, अरिहंत चेइयाणं, थुइ, लोगस्स, सव्वलोए, थुइ पुख्खरवर, सुयस्स, थुइ, श्रुत निश्रित तीनश्लोक संयुक्तकी कहनी अथवा तीसरी थुइ कहके सिद्धाणं बुद्धाणं गाथा तीन कहनी या अथवा तिसरी थुइकों प्रतिक्रमणान्तर मंगलार्थ स्तुति तीनका पाठकीतरे प्रणिधानरुप श्लोक तीन कहनेसें तथा थुइ तीन कहके प्रणिधानांत श्लोक तीन संयुक्त करनां अर्थात् शक्रस्तवादि दंडकचार थुइतीन नमुथ्थुणं जावंतिएक जावंत एक स्तवनएक जयवियराय प्रणिधान दो गाथाके अंतकी (वारि जइ जइवि) आदि तीन गाथा श्लोक संयुक्त कहनेसें मध्यमोत्कृष्ट छठा भेद ॥ ६ ॥ तथा (उक्कोस कणिठा पुण सच्चिय सक्कथ्थयाइ जूया ॥ ५७) अर्थात् उत्कृष्ट कनिष्टा फेर तिसही मध्यमोत्कृष्टा छठी वंदनाकों शक्रस्तव है आदिसें जाके असी सातमी वंदनाके युक्त करना अथवा आदि शब्द पूर्व प्रकारार्थ दर्शकपणासें छठी वंदनाको शक्रस्तवकी आदिमें युक्त करना अर्थात् इरीयावहि नमस्कार शक्रस्तवादिक दंडकपांच थुइतीन फेर शक्रस्तव युक्त करनेसें उत्कृष्ट जघन्य सातमां भेद ॥ ७ ॥ तथा (थुइ जुयल जुयल एणं दुगुणिय चेइय थयाइ दंडाजा साउक्कोस विजेठा निद्दिठा पुव्व

सूरिहिं ॥ ५८ ॥) अर्थात् थुइ जुयल कहेतां छठी सातमी वंदनाका दो युगलकी थुइयोंकों (जुयलएणं) कहेतां दोनु युगल संयुक्त जोडनेसें अर्थात् थुइ दो दो वार कहये करो के दो वार चैत्यस्तवादिक दंडक जिसमें वा वंदना उत्कृष्ट मध्यम दिखाइ पूर्वाचार्योंने ॥ ५८ ॥ अर्थात् छ थुइ और दो वार अरिहंत चैत्यस्तवादिक दंडक यह कहनेसें उत्कृष्ट मध्यम आठमां भेद ॥ ८ ॥ तथा (थोत्त प्रणिवाय दंडग पणिहाण तिगेण संजुआ एसा संपुन्ना विन्नेया जेठ्ठा उक्कोसिया नाम ॥ ५९) अर्थात् स्तोत्र प्रणिपात दंडक प्रणिधान तीन इनो करके आठमी वंदना छ थुइकी संयुक्त करनेसें संपूर्ण जाणनी उत्कृष्ट उत्कृष्ट नामा नवमां भेदकों ॥ ५९ ॥ ऐसे एकके पीछे एक अनु-(पश्चात्) वंदना सहित छठा सातमा भेदकी प्रत्यक्ष तीन थुइका पाठसें महाभाष्यकारजीने वंदना सिद्ध करके लिखी तो आठमी नवमी वंदनामें (युगल युगल) शब्दसें चार चार अर्थात् आठ थुइ ग्रहण करनेका अवकाशही नहीं रख्खा तो चार थुइसें नव भेदकी चैत्यवंदना अपनी मनकल्पनासें सिद्ध करी गिनी जावगी, परन्तु भाष्य सिद्ध नहीं गिनी जावगी. किंतु भाष्य सिद्ध तो छठा सातमा भेदकी तीनथुइसें तथा (युगल युगल) शब्दमें दोदो वार तीन थुइसें अर्थात् छ थुइमें आठमां नवमां भेदकी वंदना ऐसे नवही प्रकारकी वंदना तीन थुइमेंही सिद्ध गिनी जायगी चार तथा आठ थुइसें तो विद्वजनोंके भाष्य विरुद्ध सिद्ध गीनी जायगी.

पूर्वपक्षः--आत्मारामजीने चतुर्थ स्तुति निर्णयः पृष्ट १८ पंक्ती १९ में महाभाष्यकी नवभेद वंदन गाथायोंका अर्थ करते सातमी वंदना चार थुइमें यावत् जयवीयराय पर्यंत करते हैं अरु पृष्ट १९ पंक्ति दोयसें आठमी नवमी वंदना आठ आठ थुइसें लिखते हैं तो वो क्या भवभीरु नहीं थे! जे कर भवभीरु थे तो भाष्य गाथा

(५७) मी में प्रत्यक्ष तीन थुइका पाठसें छठी सातमी वंदना लिखी है तिन्कों आंखोसें देखते हुये नही देखनेकी मोज कैसे माणी होगी कि छठी सातमी वंदनामें चार तथा युगल शब्दका लवलेश नही तहां चार तथा आठ आठ थुइसें सातमी आठमी नवमी वंदना भाष्य विरुद्ध लिखके उत्सूत्र लिखनेका डरभी नही रख्खा होगी.

उत्तरपक्षः—श्री आत्मारामजी भवभिरुथे तथही ढुंढक निन्हवोंका कुलमेंसें निकले हे परंतु पीतांबर कुलका सरणा सहवास करनेसें और पीतांबर गुरुकुलवास सेवनसें अपना गुरु कुलवाश के दादा पडदादाने (द्रव्यस्तव) जिनपूजाके अवसर (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ करनेकी बहुश्रुतोंकी आचरणा सर्वथा निषेध करके सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिक भावस्तवमें चोथीथुइ करने करानेकी सर्वथा आचरणा चलाइ तिस्का नसासें मदांध होके छठी सातमी वंदना प्रत्यक्ष तीन थुइके पाठसें भाष्यकारजीने लिखी तिस्कों आंखोसें देखतेभी नही देखनेमें आया तेथही छठी सातमी वंदनामें (चउरो तथा युगल) शब्दका लवलेश नही दिखता है तोभी चार तथा आठ आठ थुइसें क्रमसें सातमी आठमी नवमी वंदना भाष्य विरुद्ध करके उत्सूत्र लिखने भापणेका कदाचित् डर होगा तोभी श्वेतांबर गुरु कुलवासका अभावसें और जैन शास्त्रोंका पूर्वापर विचारका अज्ञपणासें उत्सूत्रही लिखा है.

पूर्वपक्षः—वंदनाका छठा सातमा भेद सें तो थुइचउ तथा युगल शब्द दोनुंमेंसें एकभी शब्द भाष्यकारजीने धारण नही किया परंतु आठमी वंदनासें तो युगल शब्द धारन किया है और (समय भाषा) अर्थात् सिद्धांत भाषासें युगल शब्दका अर्थभी चारकी संख्या वांची श्रवणसें आता है तो आत्मारामजीनेभी आठमी वंदनामें (थुइ युगल युगल एणं) इस पाठसें थुइ चार चार अर्थात् थुइ आठ

आठमें आठमी नवमी वंदना सिद्ध करी और आठमी वंदना आठ थुइसें सिद्ध भइ तो तिस्की अनुवंदना जो सातमी वंदना तो अ-र्थातही चारथुइसें सिद्ध भइ, और (सक्कथ्याइसुया) इस वचनसें शक्रस्तवादि यावत् जयवीयराय संयुक्त करनेसें उत्कृष्ट जघन्य सातमां भेदकी वंदनाभी भाष्य वचनसें सिद्ध भइ, जेकर सातमी आठमी नवमी वंदना महाभाष्य वचनोंसे सिद्ध भइ तो पूर्वका छ भेदकी वंदना तो आतमारामजीनेभी तीनथुइमेंही लिखी है तो जैन शास्त्रोका पूर्वापर विचारका अज्ञपणासें महाभाष्य विरुद्ध उत्सूत्र लेख इन्का कैसे कहा जाय?

उत्तरपक्ष.—उभयभाषा दो प्रकारकी जैनशास्त्रमें ग्रहण करी है एक तो सिद्धांत संकेत समयभाषा, दूसरी समयावली मुहूर्त्ता इत्यादि समय संकेत भाषा, तहां जिस शब्दका सिध्धांतोमें जैसा अर्थका संकेत किया होय तैसाही अर्थ संकेतसें तिस शब्दका अर्थ बतलाना वो सिध्धांत संकेत समय भाषा यह, सिध्धांत भाषा कहावे और समय, आवली, स्तोक, लव, मुहूर्तादि तथा कालादि अवसर संकेतसें शब्दार्थको बतलाना वो समयभाषाही कहावे, परंतु सिध्धांत भाषा नहीं कहावे, तथाही जैसे (सक्कड जुयलं चिउव्वियं) दडक थुइ जुयलेण (वह जुयलं अन्नोना भिमुहं किर वसह जुयलं) तथा (सोहरिवलोंव जाया जुयलं) इत्यादि श्री आवश्यक बृहद्वृत्ति तथा पंचाशक और महाभाष्यादि जैन सिध्धांत शास्त्रोंमें विधीवाद तथा चरितानुवादमें युगल शब्दका अर्थ युग्म तथा द्वित्व (दो) संख्या वाची लिखा है परंतु चार संख्या वांची कोइ जैन शास्त्रमें लिखा नहीं, वास्ते युगल शब्दका अर्थ युग्म तथा द्वित्व (दो) संख्या वाची करना सो तो सिध्धांत भाषामयी अर्थ है और युगल शब्दका समय तथा अवसर संकेत जो जिस समय

जिस अवसर बहोत बहुश्रुतोने मिलकर एक सम्मत संकेत किया के चरितानुवाद लक्षणानुवाद भावस्तव तथा भावानुष्ठान विधी-वाद इत्यादि स्थलोमें तो सिध्धांत भाषाकरके युगल शब्दका अर्थ युग्म द्वित्व (दो) संख्यावाची तथा जोडलेकाही अर्थ करणा और समयादि अवसर संकेत तथा द्रव्य संकेत अरु द्रव्यानुष्ठान विधीवाद इत्यादि स्थलमें युगल शब्दका अर्थ समयभाषा करके (युग) संख्या वाची अर्थात् चारकाही अर्थ करणा, वास्ते महाभाष्यकारजीने आ-ठमी वंदनामें युगल शब्दका अर्थ सिध्धांत भाषा करके द्वित्व दो संख्यावाचीही ग्रहण किया है, जेकर समय भाषाकरके युगल शब्दका अर्थ युग चार संख्यावाची ग्रहण किया होत्ता तो छठी वंदनामेंभी युगल शब्द तथा (चउरो थुइ सिलोयतिय संजुत्ता) असा पाठ धारण करते परंतु तेसा पाठ तथा युगल शब्द नही धारण करनेसें (मूलो नास्ति कुतःसाखा) अर्थात् "मूलही नहीं तो शाखा कहां-सें होय" इस न्यायसें सर्व वंदनाका मूल जो छठी वंदना तिसमेंभी चारथुइ धारण कीइ नही तो आठमीकी अनुवंदना सातमी वंदना में तो चारथुइ होनीही असंभव है जेकर सातमी वंदनामें चार थुइका असंभव है तो आठमी नवमी वंदनामें तो आठ आठ थुइका धारण करनाही असंभव है तिस लिये आत्मारामजी सातमी वंदना चारथुइसें तथा आठमी नवमी वंदना आठ आठ थुइसें लिखते हैं सो भाष्य विरुद्ध उत्सूत्रही लिखतेहैं तथा (सक्कथ्थाइ जुया) इस वचनसें सातमी वंदना चारथुइ नमुथ्थुणं जावंति जावंत स्तवन जयवीयराय पर्यंत लिखतेहै यहभी भाष्य विरुद्ध उत्सूत्रही लिखतेहै कि भाष्यकारजीने तो (सचिय सक्कथ्थाइ जुया) अर्थात् छठी वंदनाकी तीनस्तुति तीनश्लोक संयुक्तको शक्रस्तवादि दंडक पांच शक्रस्तव (नमुथ्थुणं) के आद्यमें युक्त करणेसें उत्कृष्ट जघन्य नामकी सातमी

वंदना होतीहै जेकर सातमी वंदना भाष्यकारजीने जयवियराय पर्यंत सिद्ध न करी तो आठमी वंदनाभी जयविषराय पर्यंत सिद्ध करनी युक्त नहीहै, क्योंकि जघन्य उत्कृष्ट तथा मध्यमोत्कृष्ट यह दोनु वंदना तो स्तोत्र प्रणिधान त्रिक रहित तथा स्तोत्र प्रणिधान त्रिक सहित भी जैनशास्त्रोंमें करनी कहीहै, और उत्कृष्ट उत्कृष्ट नवमी वंदना तो स्तोत्र प्रणिधानत्रिक सहितही करनी कहीहै यह उक्त तीन वंदनाही स्तोत्र प्रणिधान सहित सिद्ध होतीहै तो बाकी रही सर्व वंदना तो स्तोत्र प्रणिधान रहित ही भाष्य वचनोंसें सिद्धहै, तो आत्मारामजीका लेख जैन शास्त्रोंका पूर्वापर विचार अज्ञपणासें महाभाष्य विरुद्ध उत्सूत्र लेखही इन्का कहा जायगा.

पूर्वपक्षः—महा भाष्यकारजीने जो तीन थुइसेंही नव प्रकारकी वंदना सिद्ध लिखीहै तो (वैयावच्चगराणं) इत्यादि सूत्रका अर्थ करके चोथीथुइ पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष करके चर्चा स्थापन करीहै, तो चारथुइसें भी नव प्रकारकी वंदना सिद्ध होनी चाहियें; जो भाष्यकारजीने चौर थुइसेंभी नवभेदकी वंदनाका सूचक वचन आगे लिखा होय तब तो पूर्वधरोंकी आचरणाका सद्भाव जतनेकों प्रथमकी नवभेदकी वंदना तीन थुइसें दर्शाइ मानी जायगी. क्योंकि लघुभाष्यकी संघाचार टीकामें चार थुइसें नव प्रकारकी वंदना सिद्ध करके लिखतेहै तिसमें महा भाष्यकाही अनुकरण कियाहै.

उत्तरपक्षः—पूर्वधर वर्तमान छते श्रीहरिभद्राचार्यादि बहुश्रुत गीतार्थोने भावस्तवियोंके भावस्तवके अवसर तीनथुइसें देववंदन करनेकी पूर्वधरोंकी आचरणाका सद्भाव तथा द्रव्य स्तवियोंके द्रव्यस्तव जिन पूजाके अवसर द्रव्यस्तव चोथी थुइ सहित देववंदन करनेकी बहुश्रुतोंकी आचरणाका सद्भाव सूचक वचन अपनी कृतिके ग्रंथोंमें ज्ञापन कियाहै. तैसेंही श्रीशांत्याचार्यजीने भी चैत्यवंदन महाभा-

समें उक्त दोनु आचरणाका सद्भाव सूचक वचन ज्ञापन कियाहै, कि
इह साहु सड्ढो वाचे इय गेहाइ उचिय देसंमि ॥ जह जोगं
कयपूआ पमोयरो मंचिय सरीरो ॥ ६३ ॥) अर्थात् साधु अ-
वा श्रावक चैत्यप्रहादिक उचित देशमें यथायोग्य निरंतर भावपूजा
था शांतिपूजा प्रतिष्ठादि कारणमें वासक्षेपादिक द्रव्यपूजा और श्रा-
कके श्रावक योग्य गंध पुष्पादिक द्रव्यपूजा करके हर्षे रोमांचित हुवा
गलकृत पढके प्रणिपात स्तव (शक्रस्तव) पढे, इत्यादि चैत्यवंदन वि-
धियुक्त चैत्यवंदन सूत्रोका दंडक हेत्वादि सूत्रार्थ यावत् सिद्ध स्तवांत
क दर्शाके लिखा है कि (जिण वंदणा वसाणे जिण गिहवासी-
ण देवदेवीणं संवोहणथ्थ महुणा काउस्सगं कुणइ एवं ॥
७८ ॥ वेयावच्चगराणं इत्यादि) अर्थात् जिन वितरागका वंद-
नके अंतमें जिनमंदिरमें अधिष्टाता देव देवीकों जिनमंदिर रक्षा परि-
स्थापनादि तिनका कृत्य तिनकों वेयावचगराणं इत्यादि सूत्रपाठ पढके
इस प्रकार काउसग्ग करे, पीछे (वेयावच्चगराणं) इत्यादि सूत्रार्थ करते
(वंदण वत्तियाए) इत्यादि पाठका निषेध हेतुसें पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष क-
रके वैयावृत्य कर समदृष्टी साधर्मि देवोका सन्मानादि बहुमान रुप
साहमीवच्छलका कार्योत्सर्गकों द्रव्यस्तवमें स्थापन करा है, तद पीछे
तिन्का बहुमान रुप तथा गुणवर्णन रुप साहमीवच्छल करनेकों
(पारिय काउस्सग्गो परमेठीणंच कय नमुक्कारो वेयावच्चग-
राणं देज्ज थुइ जख्ख पमुहाणं ॥ ८८ ॥ अर्थात् कार्योत्सर्ग पा-
रके परमेष्टीकों नमस्कार करके वैयावृत्तके करनेवाले यक्ष प्रमुख शासन
देवताओकी थुइ कहे ॥ ८८ ॥ तिस पीछे (कय सिद्ध नमोक्कारो
पुणोत्ति पणिवाय दंड गाइयं वीय थुई जुयलएणं पुव्विंपिव

वंदणं कुणइ ॥ ८९ ॥) अर्थात् सिद्धोंको नमस्कार करके और फिरभी प्रणिपात (शक्रस्तव) दंडकादिकसें दूसरी वेर थुइ चार करके अथवा दो थुइ जुगल जो चार अर्थात् आठ थुइ करके पूर्ववत् वंदणा करे ॥ ८९ ॥ यहां भाष्यकारजीने (जिण वंदणा वसाणे) इस वचनसें प्रथम सिद्ध स्तवांत तक विधी अर्थादि सहित तीन थुइसें मध्यमोत्कृष्ट छठी वंदनाका अवसान (अंत) जतानेसें पूर्ववत् सातमी आठमी नवमी तीन तथा छ थुइसें जिन वंदनाका अवसान (अंत) बताया, तैसेही (जिण गिहवासीण देवदेवीणं संबोहच्चं) इत्यादि वचनसें यावत् (देज्ज थुइ जुगल पमुहाणं) इस अवसान तक चारथुइसें मध्यमोत्कृष्ट छठी वंदनाका अवसान जताके पीछे (कय सिद्ध नमुक्कारो) इस गाथामें समय संकेत भाषा करके जुगल शब्दकों ~~[illegible]~~ चारका अर्थ ग्रहण करके सातमी आठमी वंदना चार तथा आठ थुइसें दर्शाके नवमी वंदनाका दर्शाव करते है कि (पुव्व विहाणेण पुणो भणित्तु सक्कथ्थयं तओ कुणइ, जिण चेइय पणिहाणं संविग्गो सुत्तवुत्तिए ॥ ८३९ ॥ जावंति चेइआइं इत्यादि तत्तोअ भावसारं भणि उणं छोभवंदण विहिणा साहुगयं पणिहाणं करेइ एयाए गाहाए ॥ ८३८ ॥ जावंति केइसाहु इत्यादि तत्तोअ तिस चित्तो जिणिंद गुणवण्णेण मुज्जोत्ति सुकइ निवद्धं सुद्धं वयंव थोत्तंव बज्जरइ ॥ ८४० ॥ यावत् भत्तिभर निब्भरे मणो वंदित्ता सव्व जगइ बिंबाइ, मूल पडिमाइ पुरओ पुणोवि सक्कथ्थयं पढइ ॥ ८४८ ॥ चिइवंदणं कयकिच्चो पमोय रोमंच अंचिय सरीरो सक्कथ्थपणं वंदिय

अहिमयफलं पच्छणं कुणइ ॥ ८८५ ॥ जयवीयराय जगगुरु इत्यादि) इन गाथाओंमें शक्रस्तव जावंति जावंत स्तोत्र शक्रस्त प्रणिधान (जयवीयराय) पर्यंत तीन तथा चार थुइका स्वरूपणा नवमी वंदना जताइहै, अरु गाथाओंका सुगम प्रगटार्थहै तिसिसें ग्रं गौरवका भयसें अर्थ नही किया है, तथा तीन और चार थुइका न भेदका उपलक्षणरुप तीन भेदकी वंदना श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज जीने श्री वंदनपंचाशकजीमें जताइ तिनका विवरण नवांग वृत्तिकारक श्री अभयदेवसूरिजीभी वंदन पंचाशक वृत्तिमें महाभाष्यकेकथन मुजब पूर्वधर तथा बहुश्रुत दोनुंकी आचरणाका सद्भाव जतानेकों तीन थुइका ग्रहण अग्रहण स्वरुप जताके तीन अरु चार दोनुं थुइयांकों मध्यम भेदमें ग्रहणकर दोनुंका उत्कृष्ट भेद बताया हैं कि (अन्येत्वाहु दंडकैः शक्रस्तवादिभिः पञ्चभिः स्तुति युगलेन च समय भाषया स्तुति चतुष्टयेन च कृतेन मध्यमा ज्ञेया बोधव्या तथा संपूर्णा परिपूर्णा साच प्रसिद्ध दंडकैः पञ्चभि स्तुति त्रयेण प्रणिधान पाठेन च भवति चतुर्थ स्तुतिः किलार्वाचीनेति किमित्याह उत्कृष्यते त्युत्कर्षा दुत्कृष्टा इदंच व्याख्यान मेके तिन्नित्रा कढइ जाव थुइओ तिसि लोगिया ताव तथ्थ अणु णायं कारणेण परेणवी त्येतां कल्पभाष्य गाथा पणिहाणं मुत्तसुत्तीए इति वचनमाश्रित्य कुर्वंति) अर्थात् दंडक और स्तुति इन दोनोका युगल जोडासें प्रथम कल्पभाष्य गाथाकों अंगिकार करके तीनथुइसें मध्यमा चैत्यवंदनाका स्वरुप बताया तब अन्य आचार्य कहते है कि शक्रस्तवादि दंडक पांच करके और स्तुति युगल करके

(समय) संकेत भाषाकरके स्तुतिचार (रूढ) वर्त्तमान करके अर्थात् दंडक पांच और स्तुति वर्त्तमान रूढी चार करके जो चैत्यवंदना करे सो मध्यम चैत्यवंदना जाननी, तथा संपूर्ण परिपूर्णा तो मध्यमा चैत्य- वंदना प्रसिद्ध दंडक पांच करके स्तुति तीन करके और प्रणिधान (जय वीयराय) पाठ करके भी होती है " चतुर्थ स्तुतिः (चोथी थुइ) किल इति संभावनायां पूजादि चैत्यवंदना विषये बहु श्रुत गीतार्थैं, अर्वाचीना—नविनाः आचरिताः इति संभाव्यते" अर्थात् पूर्वधरोंकी वारमें चोथीथुइ प्रतिष्ठादि महत्कारणमें कही जा- तीथी, पीछे बहुश्रुत गीतार्थोंने श्रावकोंकी त्रीकालपूजा तथा दिक्षामंदी नाद्रि प्रमुखमें कहनेकी नवीन आचरणा करी संभवे है, इसीवास्ते पू- जादि अवसरकी मध्यमा चैत्यवंदनामें ग्रहण होती है वास्ते हम यहां ग्रहण नही करते है (किमित्याह) क्यों ग्रहण नही करते है ? कि अ- तिशय उत्कृष्ट यो उत्कृष्टा कहावे यह व्याख्यान कोइ आचार्य तीन स्तुति तीन श्लोककी कहे, वा अथवा तीनस्तुतिकी चैत्यवंदना यावत् प्रणिधानांत तीन श्लोक कहे, तहांतक साधुकों जिन मंदिरमें रहनेकी आज्ञा है, और शांतिपूजा तथा प्रतिष्टादि कारण होय तो अधिकभी रहे, यह व्याख्यान इस कल्पभाष्य गाथामें (पणिहाण मुत्तसुत्तिए) अर्थात् प्रणिधान (जयवीयराय) यह पाठ उत्कृष्ट चैत्यवंदनाके अंतमें मुक्ता सुक्ति मुद्रासें कहनी इस वचनको आश्रित होकर करतेहे.

इत्यादि पूर्व बहुश्रुतोंने तीन तथा चारथुइसें मध्यम तथा उत्कृष्ठ तीन भेदकी वंदना ग्रहण करीहै, तैसेही मध्यमोत्कृष्ट छठा भेदकी वंदनामें यावत् नव भेदकी वंदनाभी तीन तथा चार थुइ दोनोसें ग्र- हण करीहे, तैसेही वांचनांतरमें एक शक्रस्तवसें जघन्य वंदना दो तीन शक्रस्तवसें मध्यम चैत्यवंदना चार पांच शक्रस्तवसें संपूर्ण उत्कृष्ट चैत्य-

वंदनां तीन तथा चारथुइ दोनुंसें होतीहै, वौभी नव भेदकी वंदनामें अंत-भूंत होतीहै, तिसही मुजब प्रवचन सार लघु भाष्यकारादिक पश्चात्वर्ति जघन्य गीतार्थ तथा बहुश्रुत गीतार्थोंनेभी तीन तथा चार थुइसें तीन भेदकी तथा नव भेदकी वंदनां संघाचार लघुभाष्यादि टीकामेंभी महाभाष्यकारकाही अनुकरण कर ग्रहण करीहै; तहां द्रव्यस्तविवोंके (द्रव्यस्तव) उभयकाल जिनपूजा अवसर तो चार थुइसें नव भेदकी वंदनामेंसें उत्कृष्टके तीन भेदकी वंदनां यथायोग्य शक्ति करे, और अन्य छठा भेदकी वंदनां चैत्यप्रवाडि आदिमें एक प्रकारकी पूजा अवसर करे, अरुपर्वादिकमें त्रिकाल जिनपूजा अवसर तो उत्कृष्टाके तीनो भेदकी वंदनां यथाशक्ति करे तथा भावस्तवियोंके भावस्तव करनेके अवसर उभयकाल सामायिक सहित प्रतिक्रमणके आद्यंत तो तीन थुइसें उत्कृष्टाके तीन भेदकी वंदनामेंसें अस्तोत्रा स्तोत्र प्रणिधानादि रहित सातमा भेदकी वंदनां करे, और पर्वादिकमें साधु तो जिनमंदिरमें यथाशक्ति तथा श्रावक सामायिक सहित पौषधादिकमें तीनथुइसें उत्कृष्टाके तीनो भेदकी वंदनां करे, और चैत्यप्रवाडी आदिमें यथा अवसर अन्य छ भेदकी वंदनां यथाशक्ति करे, यह तीनथुइसें नवभेदकी चैत्यवंदनांमेंसें अन्यतर भेदकी वंदनां तो जिनपूजादि कारण विना द्रव्यस्तवि भावस्तवि दोनुं करे, और चारथुइसें नवभेदकी छठी वंदनांसें चार भेदकी अन्यतर वंदना द्रव्यस्तवि एक (द्रव्यस्तव) जिनपूजाके अवसरही करे, इसीवास्ते पूर्वबहुश्रुतोके अनुकरणसें पीछे के जघन्य तथा बहुश्रुत आज पर्यंतके गीतार्थ अपनी अपनी कृतिके ग्रंथोमें पूर्वधर तथा बहुश्रुतोकी दोनुं आचरणाका सद्भाव रखनेको साध्वादिकके अधिकारमें तो तीनथुइसें तथा तीनथुइके नवभेदकी वंदना करनी सूचन करतेहै, और (द्रव्यस्तव) जिनपूजा अवसर श्रावकादिकके अधिकारमें चारथुइसें तथा चारथुइके छठा भेदसें नवभेदकी वंदनां करनी सूचन करतेहै, जैसे

तीनथुइ तथा चारथुइके देववंदन न्यारे न्यारे सूचन करतेहै वैसेही तीन तथा चारथुइके नवभेदभी जूदे जूदे सूचन करतेहै, यह प्रसंग प्राप्त तीन तथा चारथुइसें नवभेदका निर्णय किया.

अब प्रस्तुत (चलती) बात समालोचनका निर्णय करतेहै कि "मु० सं० भ० ठे० चोपडीवालेने सूरिजीकों प्रश्न कियाकि महाभाष्यमें चैत्यवंदनका नवभेद कहाहै, तिनमेंसें थोडा ग्रहण करते हो और दूसरा चारस्तुति तथा आठ स्तुति दर्शक भेदहैसो क्यों ओलवते हो?" यह प्रश्न करना कैसाहैकि उन्मत्तका बोलना जैसाहै क्योंकि आपही प्रश्नकार तीन स्तुति तथा छ स्तुतिके महाभाष्य दर्शक भेदोकों ओलवके और दूसरा चार स्तुति आठ स्तुति दर्शक थोडा भेदकों ग्रहण कर तीन स्तुतिके सर्व भेदकों नही मानना! और दूसरेकों कहना थोडे क्यों ग्रहण करतेहो! सो यह उन्मत्तका बोलणा नहीहै तो क्या मूर्ख चतुरका बोलणाहै? हां जी हां वैसाहीहै! तथा सूरिजीने कहा महाभाष्य कुछ सूत्र नही, तो क्या उत्सूत्रहै? जो उत्सूत्र मानते हो तो सिद्ध करदो! ऐसा पूछना था? परंतु आप एकला सूत्र प्रमाण करतेहो? और सिवाय दूसरा सर्व अप्रमाणहै? आपने पंचांगी आगु प्रमाण कहीहै तो तिसमें भाष्य समाता नही? ऐसा नही पूछना था. क्योंकि जिसने सूत्र प्रमाण किया तिसकों दूसरा सर्व अप्रमाण होताही नही, प्रमाणही होताहै, कारणकि (ससुत्ते सअत्थे सगंथे सनिज्जुत्तिए ससंग हणीए सुत्तयो खलु पढमो) इत्यादि सूत्रमें पंचांगी कहीहै तो तिसमें भाष्यतो अर्थात्ही समाया वास्ते यथा तथा प्रश्न करनेवालेकों तो यथा तथा उत्तर होना चाहिये! परंतु सूरिजीने तो "सुर्योदय पृष्ट ३२ पंक्ति ४ सें ६ तकका लेख प्रमाणे यथार्थ जवाब दियाहैकि चैत्यवंदन भाष्यका नव भेदोकों विस्तार पूर्वक इत्यादि यावत् धनविजयजीकृत् (चतुर्थ स्तुति निर्णय शंकोद्धार) ग्रंथका ४६४ मा पत्रकी मलामग करता हुं" इस लेखका जवाब

भयदेवसूरिजी जिस ग्रंथकी टीका करतेहै तिस ग्रंथका कर्त्ता श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज ललित विस्तरामें साधु श्रावकके यथायोग्य पूजाके अवसर चोथीथुइ करनी पहिलेही लिखतेहै, तो तिस वातका नास्तिपणा विना प्रमाण इन्सें कैसे कहा जाय, परंतु गुरु परंपरा क्रमसें सुनते आतेहैंकि चोथीथुइ पूर्वधरोकी वारमें तो प्रतिष्ठादि महत्व कारणपरही साधु श्रावक दोनुके कही जातीथी, पीछे पूर्वधर वर्त्तमान छते श्री हरिभद्रादि बहोत बहुश्रुत गीतार्थोने श्रावकोंके पूजाके अवसर आचरण करीहै। तथा इन्के पहिले चैत्यवंदन महाभाष्य कर्त्ता हुवा तिनोने महाभाष्यमें तीन थुइसें तथा चारथुइसें नव प्रकारकी जूदी जूदी वंदना लिखके लिखाहैकि (यथा योग्य पूजा) अर्थात् साधुके साधु योग्य द्रव्यभाव पूजा करके चार तथा तीन थुइकी द्रव्यभाव चैत्यवंदन पूजा करे, और श्रावकके श्रावक योग्य द्रव्यभाव पूजा कर चार तथा तीन थुइकी द्रव्यभाव पूजा करे, फेर चोथी थुइकों द्रव्यस्तव स्थापनका हेतु सूचन कर द्रव्य पूजा करे पीछे करनेकी लिखी है, औरभी फेर लिखा है कि कितनीक चैत्यवंदन विधी तो सूत्रानुसार कही है, और कितनीक विधि संविग्न गीतार्थोकी आचरणा अनुसार कही है, इत्यादि लेख तथा गुरु परंपरागत श्रवण उपर श्रीपंचाशकवृत्तिमें श्रीअभयदेवसूरिजी संभावना करते है कि श्रीकल्पभाष्य तथा व्यवहार भाष्यमें तो (पूज्यपाद) पूर्वधराचार्य मध्यम तथा उत्कृष्टा चैत्यवंदना तीन थुइसें करनी लिखते है. और श्रीहरिभद्राचार्य प्रमुख बहुश्रुत गीतार्थ (रुढ) वर्त्तमानमें श्रावकोंके द्रव्य जिन पूजा अवसर चलती आचरणा मुजब युगल शब्दका अर्थ समय संकेत भाषा करके युगल नाम युग चारका अर्थ ग्रहण करके चोथी थुइकों द्रव्यपूजादि विधीका अवसान चैत्यवंदनसें मध्यमा तथा उत्कृष्टा चैत्यवंदनामें लिखते है, वास्ते (कारणेण परेणवि) इस अतिदेश सूत्रसें यह संभावना होती है कि पूर्वधरोकी वखतमें तो

प्रतिष्ठादि महत्व कारण विना साधु श्रावक दोनुंके तीन थुइसेंही देव-वंदन करनेकी आचरणाथी, तदनंतर पूर्वधरोंके वर्त्तमान छतेंही श्रीहरिभद्राचार्य प्रमुख वहोत बहुश्रुत गीतार्थोने द्रव्य क्षेत्र काल भाव देखके प्रतिष्ठादि कारणपर पूर्वधरोंकी वारमें चोथी थुइ करनेकी आचरणाथी तिसकों द्रव्यस्तावि श्रावकोंके द्रव्यस्तव (जिन पूजा) के अवसर द्रव्यस्तव (चोथीथुइ) सदा कहनेकी आचरणा शरू करी, तबसें द्रव्य जिन पूजा कर पीछे तीन थुइके जिन वंदनके अवसान (अंत) में चोथी थुइका करनां चैत्यवंदन विधीमें अन्याचार्य मध्यमा तथा उत्कृष्टा चैत्यवंदनामें चोथी थुइकों ग्रहण कर अपने कृतिके ग्रंथोंमें लिखते है. इत्यादि उक्त संभावनाका सूचक वचन श्री अभयदेवसूरिजी पंचाशक वृत्तिमें लिखते है कि चतुर्थ स्तुतिः (चोथी थुइ) किल इति अव्यय संभावनायां अर्थात् किल यह अव्यय संभावना अर्थमें ग्रहण किया है क्या ? संभावना करते है कि द्रव्य जिनपूजादि विषये बहुश्रुत गीतार्थैः अर्वाचीना (नविना) आचरिता इति संभाव्यते अर्थात् द्रव्य जिनपूजादिकमें बहुश्रुत गीतार्थोने नविन आचरण करी ऐसी संभावना करते है (किमित्याह) क्यों ? नविन आचरण करनेकी संभावना करते है कि (अक्रुव्यत इत्युत्कर्षा) इत्यादि आगेका व्याख्यानका अर्थ पहिले नव भेदका निर्णयमें लिखा है तिस मुजब जाणना, यहां तो हमने सूर्योदय कारककों समजानेकी बहुश्रुतके महाराजकी उक्त संभावना प्रसंग प्राप्त लिखके जताइहै. अब सूर्योदय कारककों शिक्षारूप दंड प्रहार करते हैं कि–श्री पंचाशक वृत्योक्त संभावना सुचक वचनकों देखके पीछले श्रीसिद्धसेनसूरि तथा कुलमंडनसूरिजी प्रमुख जघन्य तथा बहुश्रुत गीतार्थ संवत (१२५०) में तुम सरीखे एकांत मतियोंकों समजानेकों तथा द्रव्य पूजा विधी दर्शानेके अंतमें चैत्यवंदन अवसानमें लिखते है कि (सर्व बहुश्रुत परंपर या स्तुति

जो साधुवोंको उद्देशके श्रावक तीनथुइ करतेथे तो साधुवोंकोंही उद्देशके प्रतिष्ठादि कारणमें पूर्वधरोकी वारमें श्रावकभी चोथीथुइ करतेथे इत्यादि संभावनासें तथा गुरुपर्वक्रमगत श्रवण होनेसें यहही संभावना सिद्ध होती हैकि प्रतिष्ठादि कारणमें साधु श्रावकके चोथीथुइ करनेंही पूर्वधरोंकी वारमें आचरणाथी, तिस्कों पूर्वधरोके विच्छेद कालमें पूर्वधरोके वर्त्तमान छते श्री हारिभद्रादि पूर्व वहुश्रुतोने श्रावकोके द्रव्य जिनपूजाके अवसर चैत्यवंदन विधिके जिनवंदन भावस्तवके अवसानमें (द्रव्यस्तव) चोथीथुइ करनेकी वहुश्रुतोके आचरणा नविन आचरित संभवेहै.

इत्यादि उक्त संभवित संभावनासें पूर्वधरोकी आचरणाकी चोथी थुइ पर्यायांतर होके वहुश्रुतोकी आचरणामें संभवित होनेसें चोथीथुइकों नविन श्री अभयदेवसूरिजी वहुश्रुत पंचाशक वृत्तिमें संभवित करतेहै परंतु चोथीथुइकों नविनही नही कहतेहै, वास्ते सूर्योदय लिखने लिखाने वालेकों हम हितशिक्षा करतेहैंकि तुम जो हठ कदाग्रहसें पूर्वधरोकी आचरणाकोंही अंगिकार करोंगे तोभी उक्त हेतुओसें द्रव्य जिनपूजाके अवसर तुमकों चोथीथुइ प्रमाण कर करनी पडेगी, ओर वहुश्रुतोकी करी आचरणा अंगिकार करोंगे तोभी द्रव्य जिनपूजाके अवसर तो चोथीथुइ प्रमाणकर तुमकों करनीही पडेगी. कारणके पूर्वधर और श्रुतधरोकी आचरणा तो पूर्वधरोके व्यवच्छेद कालमेंही विच्छेद हो गइ, अवतो वहुश्रुतोकी आणा धारणाका लेख मुजव वहुश्रुतोका जीत व्यवहारमेंही जैन मार्ग और जैन संघ वर्त्त रहाहै, तैसे तुमारेभी वर्त्तना चाहिये? जेकर वहुश्रुतोका जीत (आचरणा) व्यवहारको धारण कर नही वर्त्तोगे तो जैसे ढुंढक और तेरा पंथियोके भाइ पीतांवरी (पीला कपडावाला) मुखसें तो कहतेहै हम श्वेतांवरहै और जैसे ढुंढक तेरा पंथियोने लंबी चवडी मुखपे पट्टी वांधके सारे मुलकोमें जिन प्रतिमाके उत्थापक जैन

श्वेतांबर संघ याह्य जैनाभाष कहलाये ! तैसेही पूर्व यहुश्रुतोका श्वेतांबर पनेका व्यवहार छोडके जैन मत और जैनशास्त्रोसें विरुद्ध पीला कपडाका वेष धारण कर (द्रव्यस्तव) जीनपूजाके अवसर (द्रव्यस्तव) चोथीथुइ करनेकी बहुश्रुतोकी आचरणाका उथापनकर साधओके चारित्रानुष्ठानमें और श्रावकोके सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिकमें अपनी मन कल्पनासें भावस्तवमें द्रव्यस्तव (चोथीथुइ) करने करानेका स्थापन करके बहुश्रुतोकी अंगीकृत पूर्वधरोकी तीनथुइकी आचरणा पूर्वापरोक्त दोनुं आचरणाका विपरितपणा करके सारे मुल्कोमें जैनश्वेतांबर संघ बाह्य जैनश्वेतांबर सुज्ञ विद्वानजन जैनाभाष कह कर बतला रहेहें ! तैसें तुमभी श्वेतांबर नाम धराके बहुश्रुतोका जीत (आचरणा) व्यवहारमें वर्त्तोगे तब तो श्वेतांबर संघके आराधक कहे जाओगे. नहीतो जैसें पीतांबरी अपना पीतांबरपणा स्थापन करनेकों जूठा कारण बतलाके अपना मत स्थापन करतेहैं! तैसा तुमाराभी कारण भोले जिवोकों भरमानेकाहीकि जो कारण चोथीथुइ करनेका यहुश्रुतोने बताया तिनकारणमें तो तुम करेते करोते नही ! तो तुमारा सूर्योदय पृष्ट ३२ का लेख प्रमाणे पीतांबरी सदृश तुमभी होतेहो की पीतांबरी तीनथुइका चैत्यवंदनकों शास्त्रविरुद्ध कहके चोथीथुइ भावस्तव सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिकमें स्थापन करनेकों कमर बांधीहै ! तैसे तुमनेभी जूठा कारणका नाम लेके सर्वथा चोथीथुइ उथापनेकों कमरबंधी करीहै ! वास्ते जैसें पीतांबरी जिनाज्ञाके विराधक होतेहै तैसे तुमभी पूर्वधर और बहुश्रुतोकी आचरणाकों उथापके जिनाज्ञाके विराधक होतेहो.

(इति चैत्यवंदन नवभेद निर्णय नामका द्वितिय प्रस्ताव संपूर्णम्.)

॥ अथ तृतिय प्रस्ताव. ॥



सु० सं० अ० ठे० पृष्ठ दोय पंक्ति अठारसें फेर लिखतेहैंकि आगल चालतां एवणे (सूरिजीए) जणाव्युं के "देव देवीनी स्तुति करवी ए तो सावद्य करणी छे" इस वाक्य बोलणेका मूल उत्थान निचे सुजब जाहेर खबरमें लिखतेहैंकि–चुनिलाल कहे चोथीथुइ शा माटे नथी कहेतां? सूरिजी कहे–ए सावद्य छे बीजा देवनी आस्था (आश) करवी एम सूत्रमां नथी.

उ० ले० समालोचना–पीतांबर सुज्ञसंशय चोपडीवालेने मूल उत्थान लिखा नही, सूर्योदयवालेने लिखा, जिसमें "कंसोक्त" अक्षरोंका फेरफार करनेसें सूरिजीका जाहेर खबर लिखनेके अवसर बोलनेका भावार्थका फेरफार मालुम देताहै, जिसोंसें सुधारके लिखनेका संभव होताहै तथा सु० सं० चो० लि० वालेने जाहेर खबर प्रसिद्ध होने पीछे पृष्ट (१८) पंक्ति (१) सें मूल उथ्थान वाक्य ऊपर लिख आये जिस मुजब लिखके लिखाहैकि–"आ जवाब बहु सारो छे, सावद्य एटले पाप सहित, हवे चोथीथुइ शी रीते पाप सहित छे, शोभनस्तुति स्नातस्यादि अनेक थोयना जोडा जोशो तो ते दरेकमां चार छे, अने ते पडिक्कमणामां कहेवाय छे, हवे जो ते सावद्य होत तो पूर्वाचार्यो पडिक्कमणामां केम दाखल करे?" इत्यादि लेख अपने सागिर्दोंकों जनानेकों लिखाहै, परंतु पूछनेकों नही लिखाहै, इस लेखके ऊपर सूर्योदय लिखनेवालेने पृष्ट ११ पंक्ति १३ सें लिखाहैकि "सु० सं० चोपडी लखनारे पूछ्युं छे के सावद्य सपाएने कहेछे, एवुं होततो शोभनस्तुति अने स्नातस्यामां चारथुइ पूर्वाचार्यो केम लखत" उक्त दोनुं लेखका उत्तर सूर्योदय पृष्ट ११ पंक्ति १६ सें यावत पंक्ति २६ तक सब जैन शैली विपरित आळ पंपाल लिख माराहै! परंतु यथार्थ स्वालका जबाब उत्तरका प्रत्युत्तर नही लिखाहै.

॥ अथ ॥ उक्त समालोचना निर्णय लिख्यते–उक्त समालोचनाका दोनु लेख देखते यह बात सिद्ध होतीहैकि सुज्ञसंशय चोपडी लिखने लिखानेवाले पीतांबरी संघ तो (अनवद्य) पाप दोष रहित चोथीथुइकों सर्वथा निर्वद्य मानके सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिक भावस्तवमें करने करानेकी स्थापन करतेहैं, और सूर्योदय वाले (अवद्य) पाप दोष सहित चोथीथुइकों सर्वथा सावद्य मानके द्रव्यस्तव जिनपूजादिकमेंभी करने करानेकी उत्थापन करतेहैं, इन दोनु बातका निर्णय किया जाता है कि–स्तुति कहो, स्तवना कहो, नमस्कार कहो, पूजा कहो, श्लाघा कहो, प्रशंसा कहो, गुणवर्णन कहो, यह सर्व स्तुति शब्दका पर्याय एकार्थहै. तहां स्तुत्यादि शब्दतो सदा निर्वद्यहीहै, सावद्यहैही नही. क्योंकि स्तुत्यादि शब्द अपना स्वरुपसें उच्चार करते अपना स्वरुपसें बदलते नही, शब्द स्वरुप बदलानातो स्तुत्यादि शब्दका उच्चार करने वाला पुरुषका भाव उपर आधार रखताहै, कि निर्वद्य भाववाला पुरुष निर्वद्य भावी अरिहंतादिक महापुरुषोंके स्तुत्यादि करेगा तो वो स्तुत्यादि निर्वद्यही कहे जायगे. और सावद्य भाववाला पुरुष सावद्य भावी संसारी अव्रति देवा दिकके स्तुत्यादि करेगा तो वो स्तुत्यादिक सावद्यही कहे जायगे, और निर्वद्य भावी पुरुष सावद्य भावसें सावद्यके स्तुत्यादि करे वोभी स्तुत्यादिक सावद्य कहे जायगें, अरु सावद्य भावी पुरुष निर्वद्य भावसें निर्वद्य भावीके स्तुत्यादि करे वोभी निर्वद्य कहे जायगें, वास्ते स्तुत्यादिक सावद्य निर्वद्य दोनुही होतेहै, वो स्तुत्यादिक संसारमें गुणाधिक पुरुषोंके किये जातेहै, तहां पुरुषोंमें अपने अपने धर्मके देव गुरु और धर्मको गुणाधिक मानतेहै, तहां देव पांच प्रकारके श्रीभगवती सूत्रादिक जैन शास्त्रोंमें कहाहैकि द्रव्य देव १ भाव देव २ नर देव ३ धर्म देव ४ देवाधि देव ५ तहां चार निकायके देवोका आउखा बांधके चार निकाय देवोंमें उपजणेवाला होय वो द्रव्य देव कहावे ॥ १ ॥

दूसरा चार निकायके देवोमें देवपद भोगवता होय वो भावदेव कहावे ॥ २ ॥ तिसरा सात तथा चौद रत्न नवनिधान तीन तथा छ खंडका भोक्ता होय वासुदेवादि और चक्रवर्त्त वो नरदेव कहावे ॥ ३ ॥ चोथा पांच सुमति आदि अष्ट प्रवचन माताके पालनेवाले साधु मुनिराज वो धर्मदेव कहावे ॥ ४ ॥ पांचमा अष्ट महा प्रातिहार्यादि रिद्धिके भोगवनेवाले अष्टादश दोष रहित चौतीस अतिशय पांत्रीस वाणी गुण गणादि सहित वो देवाधिदेव कहावे ॥ ५ ॥ इन पांचो देवोमें प्रथमके तीन देवतो लौकीक पौद्गलिक धर्मके धारनेवाले वास्ते लौकिक संसारी देव कहलातेहै, और अंतके दो देव लोकोत्तर आत्मिक धर्मके धारनेवाले वास्ते लोकोत्तर संसार मुक्त देव कहलातेहै, इन अंतके दो देवोकी श्रद्धा (सम्यक्त) में वर्त्तनेवाले प्रथमके तीन देवोभी जैन शास्त्रोके न्यायसें लोकोत्तर देवमें गिने जातेहै, वास्ते अरिहंतादिक देवोको जैनशास्त्र तथा जैनीयोमें देवाधिदेव कहके वतलातेहै.

पूर्वपक्षः—अंतके दो देवकी श्रद्धा (सम्यक्त) वाले प्रथमके तीन देव किस न्यायसें लोकोत्तर देवमें गिने जाते है ?

उत्तरपक्षः—प्रथमका द्रव्य देवतो तद्भव तथा पूर्वभवका द्रव्य-भाव सम्यक्तमें आउखाका बंध करेगा तो वैमानिक देवोका आयुस्काही बंध करेगा, और सम्यक्त सहित काल करेगा तवही वैमानीक देवोमें उपजेगा, और जो द्रव्यभाव सम्यक्त रहित होगा तथा सम्यक्तका विराधक होगा तो भुवन वास्यादिक देवोमें उपजेगा, परंतु वैमानिकमें वो द्रव्यदेव नही उपजेगा, वास्ते सम्यक्त सहित द्रव्यदेव तो लोकोतर अ-पौद्गलिक आत्मिक धर्म धारन करनेसें लोकोत्तर द्रव्यदेवमेंही गिने जायगें, और सम्यक्त रहित पौद्गलिक धर्मके धारनेवाले लौकिक द्रव्य-देवमें गिने जायगें ॥ १ ॥ तैसेही भावदेवमें चौवीश जिनके यक्ष यक्ष-णी व्यंतरिकादि चार निकायके समदृष्टी असंख्य जिनभक्त शासनदेवभी

लोकोत्तर भावदेवमेंही गिने जाय और असंख्य मिथ्यादृष्टी देव लौकीक भाव देवमें गिने जायगे ॥ २ ॥ तथा भरतादि सम्यक्दृष्टी चक्रवर्ति और श्रीकृष्ण आदि सम्यक्दृष्टी वासुदेव प्रतिवासुदेव बलदेव महामंडलीक मंडलीक राजादिक यह सब समदृष्टी नरदेव लोकोत्तर नरदेवमें कहे जायगे; और संभुम ब्रह्मदत्तादि चक्रवर्ति त्रिपृष्ट वासुदेवादि मिथ्यादृष्टी सर्व नरदेव लौकीक नरदेवमेंही कहे जायगे ॥ ३ ॥

पूर्वपक्षः—जो सम्यक्त तथा मिथ्यात्वके आश्रयि लोकोत्तर लौकीक देव कहे जायगे, तबतो समदृष्टी श्रावक और देशविरती श्रावक तथा मार्गानुसारी मिथ्यादृष्टी श्रावक यहभी लोकोत्तर लौकीकदेवमें कहने योग्यहै तो पांच देवोमें कोन देवमें ग्रहण होतेहै ?

उत्तरपक्षः—समदृष्टी देशविरती श्रावक तो आत्मिक धर्मके जाननेवाले तथा देश करके आत्मिक धर्मके धारन करनेवाले होते है, वास्ते यह दोनुंतो लोकोत्तर द्रव्यदेवमें गिने जायगे, कारणकि सम्यक्त देशविरत दोनुके आराधक श्रावक तो वैमानिक देवोका आयुष्का बंध करके विमानिक देवोमेंही जायके उपजेगा, और मार्गानुसारी मिथ्यादृष्टी श्रावक चारं देव गतिका आयुष्क बांध कर भवन वास्यादि चारं देव गतिमें जाके उपजता है, यह लौकिक द्रव्यदेवमें गिने जायगे, लोकोत्तरमें नही गिनेजायगें.

पूर्वपक्षः—गर्भज तिर्यंचमें सम्यक्त देशविरतीपणा होता है, और मिथ्यादृष्टीपणाभी होता है, वास्ते वोभी देवगतिमें जानेवाले द्रव्यदेव कहलातेहै, सो तिर्यंचोमेंभी लोकोत्तर और लौकिक द्रव्यदेव ग्रहण करना पडेगा, और तिर्यंचोकों द्रव्यदेव ग्रहण किये तो इनकाभी स्तुत्यादि गुण वर्णन करनां सिद्ध होयगा ?

उत्तरपक्षः—गर्भज तिर्यंच देवगतिमें जानेवालेकों श्रीभगवती तथा पन्नवणादि जैनशास्त्रोमें श्रीगणधर महाराजजीने द्रव्यदेव ग्रहण किये है, और तिन्के सम्यक्त देशविरतीके आराधक विराधककी और मि-

थ्यादृष्टीयोकी देवगतिमें जानेकी गती जूदि जूदि कहीहै तो तिर्यंचोमें भी लौकिक लोकोत्तर द्रव्यदेव अर्थातही सिद्ध होतेहै, और तिर्यंचोमें द्रव्यदेवपणा सूत्रकारजीने ग्रहण किया तो तिन्के गुणानुवाद रुप स्तुति (प्रशंसा) होतीहै, वास्ते स्तुत्यादि गुणवर्णनादि करनाभी अर्थातही सिद्ध होताहैकि सारे संसारी मनुष्य कहतेहैकि यह हाथी, यह घोडा, यह वृषभादिक तो अमूक अच्छे लक्षणोसें अच्छे कहे जातेहै, और अमूक बूरे लक्षणोसें बूरे कहे जातेहै, और लौकीक तथा लोकोत्तर जैन सामुद्रिकादि शास्त्रोमेंभी शास्त्रकारोने तिर्यंचादि जितनी संसारमें वस्तुहे तिन्में कितनीक बहोत वस्तुओके गुणोके स्तुति प्रशंसादि गुण वर्णन कियेहै, तो सम्यक्त देशविरती तिर्यंच मनुष्योंके तो स्तुत्यादि करे तिस्में कोनसी नवाइहे ! देखो श्री कल्पसूत्रमें कंबल संबलादि वृषभोके गुणानुवाद रुप स्तुत्यादि प्रगट लिखेहै.

पूर्वपक्ष—पूर्वोक्त स्तुति शब्दके एकार्थमें स्तुति कितने प्रकारकी होतीहै ?

उत्तरपक्षः—पूर्वोक्त एकार्थमें स्तुति दो प्रकारकी होतीहै, एक तो (श्लाघा) प्रशंसात्मक गुण वर्णन स्तुति, दूसरी स्तवनात्मक गुण वर्णन स्तुति.

पूर्वपक्ष—श्लाघा (प्रशंसात्मक) गुण वर्णन स्तुति कितने प्रकारकी होतीहै?

उत्तरः—प्रशंसा (श्लाघा) रुप स्तुति दो प्रकारकी होतीहै, एक तो असाधारण गुणानुवाद किर्तनरूप स्तुति; दूसरी साधारण गुणानुवाद किर्तनरूप स्तुति.

पूर्वपक्षः—असाधारण गुणानुवाद कीर्तन स्तुति किस्को कहतेहो ? और साधारण गुणानुवाद किर्तन स्तुति किस्कों कहतेहो ?

उत्तरपक्षः—संसारमें षट् द्रव्यात्मक वस्तुके गुण द्रव्यास्तिक नय करके अपने अपने द्रव्यमेंही रहेहै इतर द्रव्यमें नहीहै तिन गुणोका अनुवाद करके वस्तुका वर्णन करना वो असाधारण गुणानुवाद किर्तनरुप स्तुति कहातीहै, और पर्यायास्तिक नय करके इत्तर द्रव्यका गुणानुवाद इत्तर द्रव्यमें तिस वस्तु द्रव्यका गुणानुवाद करके वर्णन करना

वो साधारण गुणानुवाद किर्त्तन स्तुति कहावे.

पूर्वपक्षः—उक्त साधारण असाधारण गुणानुवाद कीर्त्तनसें तो संसारमें सर्व वस्तुका वर्णवादही सिद्ध होताहै तो अवर्णवाद किस्कों कहोंगे ?

उत्तरपक्षः—संसारमें जितनी वस्तुहै तितनी गुणवानहीहै, तिन्के गुणानुवादका वर्णनकों तो वर्णवादही कहा जायगा, और गुणवान वस्तुकों गुण रहित कहनां, और गुण रहितकों गुणवान कहनां, अर्थात् रागद्वेषके वशसें अच्छि वस्तुकों बूरी कहनी, और बूरी वस्तुकों अच्छि कहनी, तथा लौकीककों लोकोत्तर कहनी, और लोकोत्तरकों लौकीक कहनां, इत्यादि यहही अवर्णवाद कहलाता है.

पूर्वपक्षः—दूसरी स्तवनात्मक गुणवर्णन स्तुति कितने प्रकारकी होतीहै ?

उत्तरपक्षः—स्तवनात्मक गुणस्तुति तीन प्रकारकी होतीहै, एक तो नमस्कार स्तवनात्मक, दूसरी पूजास्तवनात्मक, तीसरी अनुष्टान स्तोत्र स्तुति स्तवनात्मक, यह तीनु द्रव्यभाव से दो भेदकी होतीहै.

पूर्वपक्षः—नमस्कारादि स्तवनात्मक तीन प्रकारकी स्तुति किस प्रकार किस तरेसें करी जातीहै ?

उत्तरपक्षः—प्रथम नमस्कार कहो, प्रणाम कहो, वंदन कहो, इत्यादि एकार्थहै, वो नमस्कारादि पांच प्रकारके जैन ग्रंथोंमें कहाहैकि मत्सर १ भय २ स्नेह ३ प्रभुता, ४ भक्ति ५ इन पांच प्रणामोंमेंसें प्रथमके चार नमस्कारतो सम्यग् दृष्टी मिथ्यादृष्टी दोनुके आपिक परस्पर संसार हेतुमें करनां संभवेहै, और स्नेह प्रभुता अरु भक्ति यह तीन नमस्कार सम्यगदृष्टीकों धर्म हेतुसेंहीज करनां संभवेहै, तिन्में पांचमां वंदन प्रत्ययिरुप भक्ति नमस्कार तो सर्व विरति प्रमुखकोंहीज करनां संभवेहै, और प्रणाम प्रत्ययि भक्ति रुप नमस्कार देशविरति तथा अविरति सम्यग् दृष्टीओकों परस्पर करनां संभवेहै, तहां प्रथमकी नमस्कार स्तवनात्मक स्तुति तो लौकिक लोकोत्तर अप्रशस्थ प्रशस्थ गुणकों देख निज गुणवानकों तैसा गुण प्र-

माणे तथा यथास्थित लोकोपचार विनय प्रमाणे द्रव्य तथा भावसें न मस्कार प्रणामादि करनी वो नमस्कार स्तवनात्मक स्तुति कहावे ॥१ तैसेही प्रशस्यादि लोकोत्तर लौकिक गुण देखके तिस गुणवानकी तिस्के गुण योग्य तथा यथास्थित लोकोपचार विनययोग्य नमस्कार तूल्य द्रव्य तथा भावसें करनी वो दूसरी पूजास्तवनात्मक स्तुति कहावे ॥ २ ॥ तथा पूजाके योग्य गुणवान गुणीकी यथायोग्य पूजाकर तिन्के गुणोके यथायोग अनुष्ठान करनी वो स्तुति स्तोत्रस्तवनात्मक तीसरी स्तुति कहावे॥ ३॥

पूर्वपक्षः—यथास्थितवाद, चरितानुवाद, विधीवाद, यह तीनो वादमें कोन कोन स्तुतिसें गुण वर्णन किये जातेहै ?

उत्तरपक्षः—यथास्थित वादमें तो प्रशंसात्मक गुणवर्णन स्तुति किइ जातीहै, चरितानुवादमें प्रशंसात्मक ॥१॥ प्रणाम प्रत्ययि सत्कार प्रत्ययि नमस्कारस्तवना॥२॥पूजास्तवनात्मक॥३॥ यह तीन स्तुति किइ जातीहै; और विधीवादमें अपने अपने देवकी अनुष्टान स्तुतिस्तोत्रात्मक कही जातीहै.

पूर्वपक्षः—प्रथम (श्लाघा) प्रशंसात्मक गुणवर्णन स्तुति॥ १॥दूसरी स्तवनात्मक गुणवर्णन स्तुति॥२॥इन दोनुं स्तुतिमें पूर्वोक्त पांच देवोमें कौन देवकी कौन स्तुति करी जातीहै ?

उत्तरपक्षः—लौकिक लोकोत्तर प्रथम द्रव्यदेव, तीसरा नरदेव, इन दोनुंके यथास्थित वादमें तो मिथ्याद्दष्टीयोकी द्रव्यसें और सम्यग् दृष्टीयोकी भावसहित द्रव्यभावसें प्रशंसात्मक गुणवर्णन स्तुतिही करी जातीहै, और चरितानुवादमेंभी द्रव्य तथा भावसहित द्रव्यभावसें प्रशंसात्मक स्तुति १ तथा द्रव्य तथा भावसहित भावसें प्रणाम प्रत्ययि नमस्कारात्मक स्तवना स्तुति २ और द्रव्य तथा भावसहित द्रव्यभावसें सत्कार प्रत्ययि पूजात्मक स्तवना स्तुति ३ यह तीन स्तुतिही करी जातीहै, और इन्का यथास्थित विधीवादमेंभी उक्त तीन स्तुति करी जातीहै,

तैसेंही चोथा लोकोत्तर धर्मदेव तो सम्यगदृष्टीही होताहै, वास्ते इन-काभी यथास्थित वादमें तो भावसहित द्रव्यभावसें प्रशंसात्मक गुणवर्णन स्तुतिही होतीहै, और चरितानुवादमेंभी भावसहित द्रव्यभावसें प्रशंसात्मक गुणवर्णन स्तुति १ भावसहित द्रव्यभावसें वंदन प्रत्ययि नमस्कारात्मक स्तवना स्तुति २ और भावसहित द्रव्यभावसें वंदन प्रत्ययि पूजा सत्कारात्मक स्तवना स्तुति ३ यह तीन स्तुतिही करी जातीहै, और इन्का यथास्थित विधीवादमेंभी उक्त प्रकारसें उक्त तीनो स्तुति करी जातीहै, यह उक्त पहिला, तीसरा, चोथा, क्रमसें द्रव्यदेव १ नरदेव ३ धर्मदेव ४ यह तीनो देव, भावदेव दूसरा तथा देवाधीदेव पांचमां इन दोनु देवोका अनुष्टान करने योग्यहै, और इन्का यथास्थित विधीवादमेंभी उक्तप्रकारसें उक्त तीनो स्तुति करी जातीहै, वास्ते यह उक्त तीनो देव अनुष्ठानी नही कहलाते है, किंतु अननुष्ठानी कहलाते है, इसीवास्ते इन तीनो देवकी अपने अपने यथास्थितवाद॥१॥ चरितानुवाद॥२॥ और यथास्थित विधीवादमें तो प्रशंसात्मक गुणवर्णन स्तुति यथाऽवसर अपनी अपनी देशप्रसिद्ध गद्य (मुखोच्चार) भाषामयी चतुर्विध संघ करतेहै ॥१॥ और अपने अपने संसार व्यवहार तथा धर्म व्यवहारकी संज्ञानुगत और यथायोग्य अपने अपने व्यवहार युक्त प्रणाम प्रत्ययि तथा वंदन प्रत्ययि नमस्कारात्मक स्तवना स्तुतिभी अपने अपने देश भाषा मयी गद्यपद्य (मुखोच्चार पद्य) मयी करी जातीहै ॥२॥ तथा तीसरी पूजासत्कार स्तवनात्मक स्तुति तो अपने अपने देशके संसार व्यवहार और धर्मव्यवहारके रिवाज मुजब मुख्य हस्तसेंही करी जातीहै ॥३॥ और उक्त पांचो देवोंमें अनुष्टानीय अनुष्टान करने योग्य देव तो दूसरा भावदेव और पांचमां देवाधिदेव यह दोनुंहीहै, इनकाही अनुष्टान होताहै, इन दोनु देवोके यथास्थितादि तीनो वादमें भावदेवकी तो उक्त प्रशंसादि तीनो स्तुति समदृष्टी मिथ्यादृष्टी द्रव्यदेव तथा नरदेव तुल्य होतीहै, और देवाधी देवकी

उक्त प्रशंसादिक तीनो स्तुति समदृष्टी नरदेव तथा धर्मदेव तुल्य होतीहै और अनुष्टानात्मक स्तुति स्तोत्र स्तवनात्मक चोथी स्तुति तो भावदेव तथा देवाधिदेव इन दोनो देवोका अनुष्टानमेंही संस्कृत प्राकृतादि षड्भाषा मयि करी जातीहै, तहां अनुष्टान दो प्रकारके होतेहैं, धर्म हेत्वात्मक १ और संसार हेत्वात्मक २ तिन्में मिथ्यादृष्टी भावदेवोका अनुष्टान तो मिथ्याधर्म हेत्वात्मक और संसार हेत्वात्मक दोनुं संसार हेतुही किये जातेहैं, और देवाधिदेव तथा समदृष्टी भावदेवोका अनुष्टान संसार हेतु और धर्महेतु दोनुं प्रकारसें किये जातेहै, तहां लौकिक मिथ्यादृष्टी भावदेवोका अनुष्टानमें पचेंद्रीजीव वधादिक करकस सावद्य कर्म किये जातेहै, नहीभी किये जातेहै, तोभी मिथ्या व्यवहारसें सावद्यही कहे जातेहै वास्ते इन्की स्तुति स्तोत्र स्तवनात्मक स्तुति मुजब अनुष्टान मुजब स्तुति स्तोत्रादिकभी सावद्यही होतेहै. और देवाधिदेव तथा समदृष्टी लोकोत्तर भावदेवोके अनुष्टानमें उक्त कर्कस सावद्य कर्म कियेही नही जातेहै, वास्ते सम्यग् व्यवहारसें निर्वद्यही कहे जातेहै, और इन्की स्तुति स्तोत्र स्तवनात्मक स्तुतिभी निर्वद्यहो होतीहै, तथा उक्त पांच देवोमें जो आद्यके तीन देवमें लौकिक मिथ्यादृष्टी हरिहरादि संसारिदेव तो मिथ्यात्व १ अविरत २ प्रमाद ३ कषाय ४ अशुभ योग ५ इन पांचो आश्रवके शेवने शेवावनेवाले होतेहै, और लोकोत्तर अविरत समदृष्टी श्रावकादि देवदेवी अविरतादि चार आश्रवके शेवने शेवावनेवाले होतेहै, तथा देशविरती श्रावक श्राविका प्रमादादि तीन आश्रवके शेवने शेवावनेवाले होतेहै, इन समदृष्टी तथा मिथ्यादृष्टिके यथास्थितादि तीनो वादमें वितराग भावसें प्रशंसात्मक गुणवर्णन स्तुति करनेसें तो चतुर्विध संघको पाप दोष लगता नही, और सरागभावसें विधीवाद करनेमें अपने अपने आश्रव मुजब पाप दोष लगताहीहै. तैसेही इन्की नमस्कारात्मक स्तवना स्तुति १ तथा पूजात्मक स्तवना स्तुति २ यह दोनुं स्तुतिभी यथास्थित १ तथा उ-

रिताुवादमें २ वीतराग भावसें करनेंतो चतुर्विध संघकों पाप (दोष) लगता नही, और सराग भावसें विधीवाद करनेसें अपने अपने आ-शय मुजब पापदोष लगताहीहै, तथा चोथा धर्मदेव १ धर्म्मदेवा-धिदेव २ ये दोनुंदेव तो समदृष्टी महाव्रति संवरीही होतेहै, इनके य-थार्थित वादादि लोकोवादमें प्रशंसात्मक १ वंदन प्रदक्षिण नमस्कारात्मक २ ये दोनुंस्तुति सराग भाव तथा वीतरागभावसें करनेंभी चतुर्विध संघकों पापदोष नही लगताहै; और पूजात्मकस्तुति इनकी दो प्रकारसें होतीहै एकतो द्रव्यसें, दूसरीभावसें, तिसमेंभावपूजा करने तो चतुर्विध संघको कुछ पाप (दोष) लगता नही, और द्रव्यपूजा करने (जातं अ-ट्ठजमो पत्तियं पुन्नानुबंधि पचूवैतर निजरा फलाये) अर्थात् पांच का-यका [illegible] और भूत जीवोंका असंयम अयतना (वध) रूप यत्किंचित् पापदोष लगताहै, तिसकों वर्जके बहोतही पुण्यानुबंधी निर्जराका फल आवश्यकादि अनेक जैनसिद्धांतोंमें कहाहै, वास्ते उक्त दोनुं देवोंकी द्रव्यपूजा श्रावक श्राविका द्विविध संघकों करते कराते अनुमोदतेतो य-त्किंचित् पापदोष वर्जित पुण्यानुबंधी बहोत निर्जराका फल होताहै, और साधु साध्वी द्विविध संघकों उपदेशसें द्रव्यपूजा करते अनुमोदते पु-ण्यानुबंधि बहोत निर्जराकाही फल होताहै; और पापदोष कुछभी नही लगता है. तथा अनुष्टानात्मक द्रव्यभाव पूजातो भावदेव तथा देवाधि-देव इन दो देवकीही होतीहै, द्रव्यदेव, नरदेव, धर्मदेव, इन तीनो दे-वकी नही होतीहै; तिन्नें लोकिक चार निकायके भावदेव हरिहरब्रह्मा गोगा आसराल पादरदेवता क्षेत्रदेवतादिक मिथ्यादृष्टी देवताओंका अनु-ष्ठान मिथ्याधर्म हेत्वात्मक, तथा संसार हेत्वात्मक, अर्थात् मिथ्यादृष्टी देवता पांच आश्रवके सेवने सेवावने अनुमोदनेवाले होतेहै, तो तिनका मिथ्या धर्महेतु १ संसारहेतु २ दोनुं अनुष्टानकी द्रव्यपूजाभी मिथ्या-त्वादिक पांच आश्रव तथा पंचेन्द्रियांत छकायका वधै (मारना) तथा

छकायकी अयत्नाभक्तिही किवी जातीहै, तो तीन मिथ्यादृष्टीओंका दोनुं अनुष्ठानमें छ कायका वध (मारनेका) तथा छ कायकी अयत्नाका और मिथ्यात्वादिक पांच आश्रवका पाप (दोष) लगताहै, तो तिन्का भाव अनुष्ठान स्तुतिस्तोत्रादिकमेंभी छ कायका वध (मरण)की तथा छ कायकी अयत्नाकी और मिथ्यात्वादिक पांच आश्रवकी अनुमोदना तो अवश्य हुये विगर रहती नही, और तिन्के अनुष्टान मुजब तिन्के अनुष्टानात्मक स्तुति स्तोत्रादि करनेसेंभी मिथ्यात्वादिक पांच आश्रवकी तथा छ कायका वध (मरण) की और छ कायकी अयत्ना भक्तिकी अनुमोदनाका पाप दोषभी चतुर्विध संघकों अवस्य लगे विना रहेगा नः वास्ते लौकिक मिथ्यादृष्टी भावदेवोका जंत्रमंत्रादिक आराधन अनुष्टान करनेमें और संसार हेतु अनुष्टानमें तथा परलोक धर्मादि अनुष्टानसेंभी पाप (दोष) लगे बिना रहता नही, तैसे उक्त अनुष्टानके तिन्के स्तुति श्लोकादि तीन श्लोक पर्यंत और स्तोत्र स्तव चार श्लोकोपरि यदिच्छा प्रमाणे करनेमेंभी पंचाश्रवादि पाप (दोष) लगे विना रहेगा नही, और लोकोत्तर सम्यक्दृष्टी चार निकायके भावदेव जो चोवीस तीर्थंकरोकी यक्ष यक्षिणी तथा नव ग्रह दश दिग्पाल इंद्र चंद्रादि असंख्य जिनशासन भक्त देवोके अनुष्टान तथा द्रव्यपूजा तो लोकोत्तर पंचम देवाधिदेव तीर्थंकरोकी द्रव्यपूजा तथा तिन्के अनुष्टान पूजाके अंतमें उक्त जिनभक्त समदृष्टी देवताओके पूजा अनुष्टानादि किये जाते है, वास्ते देवाधिदेव तीर्थंकरोके अनुष्ठान तीन प्रकारके श्रीआवश्यक निर्युक्त्यादि जैन सिद्धांत शास्त्रोमें चौद पूर्वधर श्रीभद्रबाहुस्वामी आदि पूर्व बहुश्रुतोने कहा है कि (विग्घो व सामी सेगा अभ्युदय साहणी भवे बीया, निव्वुई करणी तइया फलयाओ जहथ्थ नामेहिं ॥ १ ॥) भावार्थ—एक तो विघ्नोपशामिनी, दूसरी अभ्युदय साधनी, तीसरी निवृत्ति करणी, इन त्रिविध अनुष्टान पूजाका यथार्थ नाम करके फल

जानना ॥ १ ॥ अर्थात् रोग सोग आधि व्याधि ईत उपद्रव मिटा-
नेकों विशेषशामिनी पूजा जो शांतिस्नात्र पूजामें जिन तीर्थंकर तथा
जिनभक्त समदृष्टी देवताओका नामादिकका जंत्र मंत्र तंत्र करके अनु-
ष्ठानादि पूजा करनेसें विघ्नादिकका उपसम फल होता है, १ तथा धन
धान्य पुत्र कलत्र लक्ष्मी प्रतिष्ठादि लाभ प्राप्तिके लिये अभ्युदय साधनी
पूजा जो प्रतिष्ठादि अपनी अपनी इच्छाके कल्पोक्त विधी विधान स-
हित स्व स्व इच्छा योग्य अनुष्ठानमें देवाधिदेव तीर्थंकर तथा जिनभक्त
समदृष्टी देवताओका नामादिकका जंत्र मंत्र तंत्र करके अनुष्ठानादि पू-
जा करनेसें (अभ्युदय) भाग्योदयादि फल होता है, २ तथा अंग
प्रमादि हम्मेशा श्रावकोंके जिन पूजा, १ जिन बिंबादिककी स्थापन
प्रतिष्ठा, २ जिन बिंबादिककी अंजनशलाका ३ लघुशांति जिनोच्छव,
४ बृहत्शांति जिनोच्छव, ५ सम्यक्त देशविरति सर्वविरति अंगिकार क-
रनेके अवसर देवादि साक्षी अर्थे, ६ तथा जिनभूवनमें मलानिकका करा
हुवा उपद्रव निवारणके अर्थ, ७ तथा संघादिकका क्षुद्रोपद्रव निव-
र्तन करनेके अर्थ, ८ तथा वेर संघादिकका विवाद दूर करनेके अर्थ
९ इत्यादि निर्वृत्ति पूजा जो धर्मसेवन करनेवाली तीसरी अनुष्ठान
पूजामें प्रतिष्ठादि कल्पोक्त विधी विधान सहित देवाधिदेव तीर्थंकर तथा
जिनभक्त समदृष्टी देवताओका नामादिकका जंत्र मंत्र तंत्र करके अनु-
ष्ठानादि सहित (निर्वृत्तिकारणी) पूजा करनेसें मोक्षका फल मिलता
है ॥३॥ इनतीनो उक्त अनुष्ठान पूजामें श्रावकों दो अनुष्ठान पूजातो
लौकिक (पुत्रादिकवी) आसाकर यहलोकार्थेही करी जाती है, इनदोनुं
अनुष्ठान पूजामें एकसंमिलित थय (स्मरण)की आसन टाल लोकोत्तर
मिथ्यात्वादि पोषीही श्रावकका पापदोष लगताहै, सो इनदोनुं पूजाके
स्तुति गीतस्तोत्र पर्यंत और स्तोत्र स्तुति चार श्लोक पर्यंत जोड स्तवन
मंदिरजामताकि करनेकी एक प्रतीक्षा अवनकी अनुमोदना टाल

पांचो आश्रवकी अनुमोदनाका पापदोष लगताहीहैं, तथा तीसरीजो भव्यजिवोकों कर्मोंसें अलग करके अरिहंत सिद्ध पदकी करनेवाली ऐसी निवृत्ति अनुष्टानपूजा इहलोक परलोक पौद्गलिकादि आशारहितही करी जातीहै, तिस्मे देवाधिदेव श्री तीर्थंकरादिक महाव्रतियोंकी निवृति अनुष्टानपूजामें तो मिथ्यात्वादिक पांच आश्रव लगनेकातो अवकासही नहीहैं, और जो अनुष्टानी पुरुषोकों पूजाकरते त्रसादिक अविरतकातो प्रसंगही लगता नही औरजो पांच थावरकी अव्रतका प्रसंगसें स्वरूप हिंसा लगतीहै तिससावद्य लेशका उसी वखत महाव्रतियोकी भक्तिभावनारूप जलसें निवृत्तिहोके पांचथावरकी जैनशास्त्रोक्त यत्नाभक्ति करनेसें अनुबंध दयाकाफल भव्योकों पुन्यानु बंधी प्रभुत तर निर्जराकाही होताहै. वास्ते देवाधीदेवकी निवृत्ति अनुष्टानपूजा करते अधिकारी पुरुषोकों जैनशास्त्रोक्त विधी करनेसें पांचो आश्रवमेंसें एकभी आश्रवका पापदोष लगता नही, औरजो अधिकारी पुरुष अपने अधिकार योग्य अनुष्टान करते कोइ कारणसर अनधिकार पणाका कार्यकरे, तथा अधिकारी पुरुष अपने अनुष्टान योग्य विधीका अजाणपणासें अविधी अनुष्टान करेतो तिनको पांचथावरकी अयत्नाका अल्प पापदोष लगके पून्यानुबंधि प्रभुततर निर्जराका फल लगताहै, तथा अधिकारी पुरुष अपना अपना अधिकारमें जाणके अपनी शक्ति छते विधीका अविधीपणा करेतो वो जिन आशातनारूप पापदोषका भागीहोके पांच थावरकी अव्रतादिक चार आश्रवका पापदोष लगनेसें संसारमें रूलें, परंतु अपने अपने अधिकार योग्य शास्त्रोक्त विधीकरनेसें जिनराजकी निवृति अनुष्टानकी पूजामें चतुर्विध संघकों कोइ आश्रवका पापदोष लगता नहीहैं, तवही आवश्यकादि जैनसिद्धांतोमें देवाधिदेव तिर्थंकरादि महाव्रतियोकी द्रव्यपूजाका फलकी अनुमोदना (वंदणवत्तियाए) इत्यादि पाठसें साधुतांविसी श्रावस्तधर्म करतेहै, तथा जो तिन्की द्रव्यपूजामें पाप (दोष) नही लगतातो ति-

न्के स्तुति छंदादि विशेष तीनश्लोक पर्यंत और स्तोत्रादि स्तवन यदि-च्छा प्रमाणे करते कराते कोइ आश्रवकी अनुमोदनाका पाप (दोष) लगनेका चतुर्विध संघको अवकाशही नहीहै, तथा देवाधि देवकी नि-वृत्ति अनुष्ठान पूजाका अंतमें लोकोत्तर भावदेव संसारी समदृष्टी जिन-भक्त यक्ष यक्षीणीआदि शासनदेवताओंकी साधर्मि वात्सल्यरुप निवृत्ति मुख्य अनुष्ठानपूजा होतीहै तिस अनुष्टानपूजासमये पचाशक मूल तथा वृत्तिमें श्री हरिभद्रसूरिजी और श्री अभयदेव सूरिजी बहुश्रुतोंने पूजा तथा प्रतिष्ठादि अवसर पूर्वोक्त जिनभक्त समदृष्टी देवताओंका सत्कारादि बहुमान करनेका पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष करके अच्छी तरेहसें स्थापन कियाहै. वो पाठ भावार्थ सहित अस्मत्कृत "श्री चतुर्थस्तुति निर्णय शंकोद्धार" परिच्छेद १३ मेंसे जानना, इसपाठमें समदृष्टी देवताओंकी सत्कारादि पूजा करनेकी कही सो भाव साधर्मिक पणाका कारणसें कही, और मि-थ्यादृष्टी देवताओंकी सत्कारादि पूजा करनी कहीसो द्रव्य साधर्मिक पणाका कारणसें कही, पण लौकिक तथा लोकोत्तर मिथ्यात्व प्रसंग दोष कहा नही, वास्ते श्रावक श्राविका द्विविध संघको हम्मेशाकी निवृत्ति अनुष्टान पूजामें तथा जिनबिंब स्थापनादि प्रतिष्ठा और संघादिकका विशेषसन्मादि निवृत्ति पूजाका कार्य कारण अपने अपने यथायोग्य समदृष्टी देवताओंका सत्कार सन्मा-नादि (द्रव्यस्तव)द्रव्यपूजा करनेमें चतुर्विध संघको लौकिक लोकोत्तर प्रथम मि-थ्यात्व आश्रवकातो निवृत्तिपूजामें प्रसंगही लगता नही,औरजो अव्रतादि चार आश्रव रहे तिनमें अप्रशस्त प्रमाद१ कषाय २ योग ३ इनतीनो आश्रवकी निवृत्ति के लियेही समदृष्टी देवताओंको आवाहनादि प्रेरणा निवृत्ति पूजामें कियी जाती-है, वास्ते उक्त तीनो प्रमादादि अप्रशस्त आश्रवकाभी पाप दोष चतुर्विध संघको लगता नही, अब रही एक अव्रतकी आश्रव, तिनमें जो जिन-भूवनादि कार्य तथा जिनभूवनादि प्रत्यनीकको शिक्षादि कार्य अथवा संघादि कार्य और संघादिकका प्रत्यनीकको शिक्षादि करना इत्यादि

प्रशस्त कार्योंमें जो पृथव्यादि यावत् त्रस जिवोंका (वध) मरणका अल्प पाप लगताहै, तिस्का प्रशस्त भावसें वर्जित होके समदृष्टी देवोंकों बहोत निर्जराका फळ मिलताहै, तिस फलकी अनुमोदनाके अर्थही चतुर्विध संघ पूजा प्रतिष्ठादि अवसर तिन समदृष्टी देवादिककी सत्कारादि पूजा करतेहै, तिससें प्रशस्तकार्योंमें अव्रतकातो पाप दोष चतुर्विध संघकों लगता नही, परंतु वो देवादिक असंयति अव्रति अपच्चक्खाणिहै, तिन्के कार्य करनेके शरिरादिक जोग एक जिन भक्ति जिनपूजा शिवाय सदा सर्वदा अशुभ योगमेंही वर्त्तने वर्त्तनेवाले होतेहै, वास्ते तिन्का कायादि योगोंकी तथा तिन्के वाहनादि परिवार ऋद्धिकी सत्कारादि पूजा प्रशंसा निवृत्ति अनुष्टानादि पूजासें होतीहै, तिन्का अव्रतका पाप दोष तो अवश्य चतुर्विध संघकों लगे विना रहता नही, तैसेंही तिन्की स्तोत्र स्तुति जो जिनवंदन तीन स्तुतिका अवशानमें स्वर अथवा छंदादि वृद्धिसें चोथीथुइ तिन्के गुण वर्णनादिककी शोभन स्तुति और स्नातस्यादि प्रमुख तथा विघ्न विनाश अभ्युदयादि प्रतिष्ठा कल्पोक्त स्तोत्र स्तुति अथवा यथावसर योग्य तिन्के गुण वर्णनके चार श्लोक उपरांत यदिच्छा पर्यंत स्तोत्र स्तवनादि कहने कहावनेमेंभी तिन्का शरिरादिकका गुण वर्णन करनेसें तिन्का अशुभ योगादि अव्रतका पाप दोषादि अनुमोदनाका पाप दोष तो अवश्य चतुर्विध संघकों लगे विना रहता नही, वास्तेही पूर्वधर तथा पूर्व बहुश्रुतोने वंदन प्रणामादि तथा सत्कारादि समदृष्टी देवतायोंकी द्रव्य पूजाका फलकी वांच्छा द्रव्य जिनपूजाके अवसरभी करनेकी निषेध करनेकों सकल योगका बीज (वंदण वत्तियाए) इत्यादि पाठ निवेदन करके यह आसय जतायाकि अव्रतियोंकी द्रव्यपूजामें अव्रताश्रवका पाप दोष लगताहै, वास्ते समदृष्टी देवोंका (द्रव्यस्तव) द्रव्यपूजादि अनुष्टान तथा तिन्के अनुष्टानात्मक स्तुति स्तोत्रादिकभी (द्रव्यस्तव) द्रव्य जिनपूजाके अवसरही करना परंतु

भावस्तवियोकों भावस्तवके अवसर नही करना.

पूर्वपक्षः—मिथ्यात्व गुण सहित प्रथम गुण स्थानमें वर्त्तनेवाले ऐसे नरेश्वर राजादिकोंहे तिन्कों पूजा नमस्कारादि करनेमें पांचो आश्रवका पाप दोष लगताहै तोभी इह लोक प्रयोजनके वास्ते समदृष्टी तथा देश विरति श्रावकादि करते करातेहे तो निर्वृत्ति मोक्षकारिणि पूजाभी सम्यक्त संवरकी करणीहै जिसमें इहलोक परलोक पौद्गलिक आशा रहित अपने साधर्मिकोंकी वात्सल्यतादि यत्ना भक्ति करनेमें पृथ्व्यादि यावत् त्रसकाय जिवोंकी स्वरूप हिंसाका स्वल्प पाप दोष वर्जित होके सम्यक्त्वादि निर्मल होनेका बहोत लाभ प्राप्ती फलकों गिनके तिन्का शरीरादिककी एक अव्रतका फलकी गिनती नही गिनके अपने साधर्मिकोंकी भक्ति भावना बहोत लाभ प्राप्तीके अर्थ करते करातेहैं, तैसेही तत्ववेत्ता श्रावक श्राविका द्विविध संयतो हम्मेशाकी निवृत्ति पूजाका अनुष्ठान (अंतमें) अपने साधर्मिक जिनभक्त देवतायोका (द्रव्यस्तव) द्रव्यपूजा अनुष्ठानमें तिन्के प्रशस्त कृत्योका उपयोग दानार्थ कायोत्सर्ग करके तिन्की निःकेवल गुणवर्णनकी स्तुति स्नातस्या तथा कल्लाण कंदादि स्तोत्रादि स्तुतियोका जोडाभोकी थोयीथुइ (निष्कंक व्योमनील) तथा (कोर्दिंदु गोक्षीर तुषारवर्णा) इत्यादि करते करातेहे तिन्में तिन्का गुणवर्णनादिक महालाभकी प्राप्ती फलमें तिन्के शरीरादिककी एक अव्रतका स्वल्प पाप दोषकी गिनती नहीगिनी जातीहे, तथा तैसेही जिनबिंब प्रतिष्ठादि अभ्युदय गामिनी निवृत्ति पूजा तथा विघ्नविदारनी संघादिकार्यकी शांति पूजादि निवृत्ति पूजा इन दोनुं अनुष्टान पूजाका कृत्यभी अल्पपाप बहोत निर्जराके फलके देनेवालेहै तो उक्त दोनुं अनुष्टान पूजामेंभी समदृष्यादि शासनभक्त देवोंका (द्रव्यस्तव) द्रव्यपूजा अनुष्ठान तथा स्तोत्र स्तुति जो थोयीथुइ और यदिष्ठात्मक स्तोत्र स्तव करनेमें तिन्का शरीरादि पर्यंतका एक अव्रत आश्रवका पाप (दोष) स्वल्पहे तिन्कों स्वल्प

पापकी गिनतीमें गिनके तिन्के कृत्योका उपयोग दानादि गुणवर्णनको महानिर्जराके हेतुफल गिनके चतुर्विध संघ करणमार्गणासें पूर्वधरोकी वारसें आज पर्यंत करते कराते आतेहै तो समदृष्टी देवोका (द्रव्यस्तव) द्रव्यपूजा अनुष्टानमें तथा तिन्की स्तोत्र स्तुति जो चोथीथुइ करनेमें अव्रतिओका शरीरादि अव्रतका वर्णनमें अव्रताश्रवका पाप दोष लगनेका तथा अनुमोदनका संभव मान (द्रव्यस्तव) द्रव्य जिनपूजाके अवसरही करने करानेका आचीर्ण कियाहै, तिस आचरणका त्यागन कर "सुज्ञसंशय" चोपडी लिखने लिखानेवाले पीतांबर संघवाले तो पृष्ट २ पंक्ती ३-११-१८ में (वंदितुसूत्र) तथा पाक्षिक सूत्रकी शाक्षीसें चोथीथुइ करनी करानी एकांत निर्वद्य पाप रहित स्थापके भावस्तवियोको भावस्तव सामायिके सहित प्रतिक्रमण पौषधादिकमें करनी करानी स्थापन करतेहै, और सूर्योदय लिखने लिखानेवाले पृष्ट २-१२-२२ में (असहिज्ज देवा) इत्यादि सूत्रपाठ लिखके और पृष्ट ११ में (सव्वथ्थे सु भगवया अणिदागतंपसथ्थंतु) यह कल्प निर्युक्ति गाथाका चौथा पद लिखके उक्त और इस पाठसें चोथीथुइ करने करानेमें एकांत मिथ्यात्व लगताहै तिसीसें देवदेवीकी सहाय तथा आशाकी (सावद्य) पाप सहित स्थापके (द्रव्यस्तव) जिनपूजा अवसरभी करनी करानी निषेध करतेहै इन उक्त दोनुं मतांतरीयोके उक्त दोनुके सूत्रपाठ वचनोसें चोथीथुइ करनी करानी (सावद्य) पापसहित ठहरतीहैकि (निर्वद्य) पाप रहित ठहरतीहै? और उक्त दोनुं मतांतरीयोके पूर्वधर तथा पूर्व बहुश्रुतोकी आचरणा (समाचारी) के उत्थापक कौनहै और स्थापक कौनहै?

उत्तरपक्षः—उक्त दोनुं मतांतरीयोमें प्रथमका पीतांबरी मतवाले (समदिठी देवा दिंतु समाहिंच बोहिंच) इस वंदिता सूत्रका पाठसें चोथीथुइ निर्वद्य (पापरहित) स्थापन करतेहै, परंतु उक्त सूत्रका पाठसेंतो चोथीथुइ निर्वद्य (पाप रहित) नही ठहरतीहैकि इसपाठसें तो परलोकमें

अपौद्गलिक (आत्मीक) धर्मकी याचना करीहैं परंतु संसारिक (पौद्गलिक) याचना नही करी है कि इसी उक्त पाठका अर्थ श्री श्राद्ध प्रतिक्रमण चूर्णिमें श्री सिद्धाचार्य बहुश्रुतके करने मुजबही श्री श्राद्धप्रतिक्रमण सूत्र वृत्ति (श्री वंदिता सूत्रकी टीका) अर्थ दिपिकामें श्री रत्नशेखर· सूरिजी बहुश्रुत महाराजजीने किया है वो पाठ यहां ग्रंथ गौरवका भय· सें नही लिखाहै परंतु तिस पाठका भावार्थ यहां किंचित लिखके दर्शाते है कि (समदिठि देवा दिंतु समाहिंच बोहिंच) अर्थात् सम्यक्दृष्टी श्री अरिहंत पक्षी देवता जो है धरणींद्र अंबिकादि यक्ष चित्त समाधि–चित्त का स्वस्थ पणा यों, क्योंकि समाधिहो सर्व धर्मका मूलहै जैसे शाखा· ओंका, फूल फलका, बीज अंकुरका, मूल–स्कंध है, तैसे यहभी जान लेना, स्वस्थ चित्त विना सर्व अनुष्ठान कष्ट तुल्यहै, वैधूर्यताका निरोध करणा उस्को समाधि कहना, सो वैधूर्यताका हेतु जो उपसर्ग है तिस्के निवारण करणेसें होती है, इस वास्ते तिस्की प्रार्थना है, तथा बोधी जो है सो परलोकमें जिन धर्मकी प्राप्तीका नामहै, कहा है कि में परभवमें श्रावकके घरमें ज्ञान दर्शन संयुक्त जो दासभी हो जाऊं तो अच्छा है, परंतु मिथ्या मोह मतिवाला चक्रवर्त्ति राजाभी नहोऊं, इत्यादि आगेकी टीकामें जो वादी देवताओंकी समाधि बोधि देनेकी असमर्थाइ जताते हैं तिन्की तर्क वितर्कका खंडन कर देवता समाधि बोधि देनेमें समर्थ हैं, इसी वास्ते तिनोकी प्रार्थना बलवती है ऐसा स्थापन कर फेर कोइ वादि देवादिकों के विषे प्रार्थना बहुमानादि करनेसें सम्यक्तका मलीन पणा मानते हैं, ऐसे वादियोंको समजाने के लिये आवश्यकचूर्णि आदि यावत् श्री हरिभद्र सूरिजी कृत् "ललितविस्तराका प्रमाण दियाहै सो द्रव्यजिन पूजाके अवसर समदृष्टी देवोंकी चोथीथुइ करनेसें मि· थ्यात्व नही लगता है, तैसे समदृष्टी देवोंकी आत्मिक (अपौद्गलिक) याचनामेंभी मिथ्यात्व नही लगता है, यह आसय जनाया है. परंतु सा·

माथिक सहित प्रतिक्रमणादिकमें कहनेका आसय नही जताया है, अब विचार करोकि उक्त वंदिता सूत्रका सूत्रार्थ पाठमें तो (समाधि) आत्मधर्ममें चित्त स्थिर रुप और (बोधि) जो परलोकमें रागद्वेष रहित आत्मधर्मकी प्राप्ती रुप एकांत (अपौद्गलिक) असंसारिक याचना अपने साधर्मिक समदृष्टी देवोकी इहलोक परलोकमें देनेकी शक्ति सामर्थ्या जान करी है, परंतु (पौद्गलिक) संसार संबंधि आशा कर याचना नही करी है; और चोथी थुइमें तो इहलोक (पौद्गलिक) संसारिक हेतु तथा परलोक (अपौद्गलिक) धर्म प्राप्ती हेतु दोनुं अनेकांत याचना किये जाती है कि अपनी पूत्र कलत्रादि परिवारका विक्षेप शांतिके लिये विघ्न विघातनी पूजा ॥१॥ तथा अपने लाभ प्रतिष्ठादि स्वार्थ प्राप्ती के लिये अभ्युदय गासिनी पूजा ॥२॥ इन दोनु अनुष्टान पूजा में तो इह लोकार्थ (पौद्गलिक) संसार हेतुसेंही चोथीथुइमें याचना किये जाती है, तो लोकोत्तर मिथ्यात्वादि पांच आश्रवका पाप दोषकी अनुमोदनाका सबबसें सावद्यही कही जायगी तथा जिन बिंबादि प्रतिष्ठापनी निवृत्तिपूजा १ और विघ्नविघातनी संघादि कार्यकी शांतिपूजादि निवृत्ति पूजा २ इनदोनु पूजानुष्टानकी चोथी थुइसेंभी संघादिककी विक्षेपशांति यश प्रतिष्ठादि लाभ प्राप्ती वांच्छासें इहलोकार्थ (पौद्गलिक) संसार हेतु याचना करी जाती है, और जिनबिंब रक्षादि तथा संघादिककी भक्ति अनुमोदनादि परलोकार्थ अपौद्गलिक धर्म हेतु याचना करी जाती है, वास्ते पौद्गलिक अपौद्गलिक याचनाका सबबसें और अव्रतिओका अव्रत योगका एक अव्रत आश्रवका पापदोष लगने के सबबसें सावद्यनिर्वद्य दोनुही कही जायगी, परंतु एकांत निर्वद्य नही कही जायगी, तथा अंग अग्रादि हम्मेशा के निवृति पूजाका अनुष्टानकी चोथीथुइसें इहलोक परलोकार्थ (पौद्गलिक) संसारिक याचना नही करी जाती है किंतु समदृष्टी देवताओका स्वकृत्यका उपयोग दानार्थ कायोत्सर्ग करके परलोकार्थ याचना

तथा तिन्का गुण वर्णनकीही चोथी स्तुति किथी जातीहे, तिसमेंभी तिन्का शरिरादि अव्रत योगका अव्रताश्रवकी अनुमोदनाका पापदोष लगनेका सबबसें सावद्य निर्वद्य कही जाती है, परंतु जैसा वंदिताका सूत्रपाठ एकांत निर्वद्य याचनाका निर्वद्य पाप दोष रहित, सावद्य नहीहे. तैसा चोथी थुइका पाठ नहीहे, किंतु सावद्य पाप दोष सहित ही हे, तब· ही पूर्व बहुश्रुतोने सम्यक्त संवरकी करणी जिनपूजाके अवसान जिनवंदनके अंतमेंही द्रव्यस्तविथोके (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ करनेकी सर्व जैनशास्त्रोमें लिखीहे. परंतु भावस्तविओके (भावस्तव) सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिकमें करनी नही लिखीहे. और जबसें पूर्व बहुश्रु· तोने निरंतर निवृत्ति जिनपूजाके अवसर चोथीथुइ करने करानेकी आ· चरणा शरु करी तबसेंही संसारदावा, शोभनस्तुति, आदि स्नातस्या प्रमुख स्तोत्र स्तुतिओ जो चार चार थुइओका जोडा करनेकी आचर· णाभी चल्लु हुइके भावस्तवि तो भावस्तवके अवसर अरिहंतादिककी तीनथुइ पूर्वधरोकी आचरणा मुजव करते रहेंगे, और द्रव्यस्तवि (द्र· व्यस्तव) जिनपूजाके अवसर (द्रव्यस्तव) चोथीथुइ करनेकी बहुश्रुतोकी आचरणाभी करी जायगी, इन दोनुं आचरणाका अव्यवच्छिन्नपणा र· खनेकों पूर्व बहुश्रुतोने स्तोत्र स्तुति रूप चार चार थुइओका जोडा र· चन कियेहे, परंतु सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिकमें करनेको नही रचन कियेहे, और इन स्तोत्र स्तुति रूप चार चार थुइके जोडेकी कोइ चोथी थुइमें तो (नमः) शब्द पूजा वाची धारण कियेहे, तथा कोइकमें नमस्कारादि शब्द धारणकर यहलोक परलोकार्थ पौद्गलिक अपौद्गलिक याचनां सहाय के शब्द धारण कियेहे ओर कोइमें यह लोकार्थ पोद्गलिक संसारिक सहाय (सानिध्य) के शब्दही धारण कियेहे, और कोइकमें तिन देवताओके शरिर वाहनादिक परिवार रिद्धि आदि वर्णन कर प· रलोकार्थ प्रशस्थ धर्मादि कार्यकी सहाय तथा याचनाके शब्द धारण

किये गयेहे, सो उक्त तीनो पूजा अनुष्टानमें अपने अपने अनुष्टान योग्य चोथीथुइ करने करानेके अर्थ पूर्व बहुश्रुतोने धारण कियेहे, वास्ते सु साधि बोधि आत्मिकधर्म याचनाके और स्तोत्र स्तुतिओंके चोथीथुइकी याचनाके तथा वंदितासूत्रका पाठकी निर्वद्यताके और चोथीथुइका पाठकी सावद्यताके जैसा रात दिनमें अंतरहे, तैसा अंतरहे. ! तो पीतांबर संघवाले चोथीथुइकी सावद्यताको वंदिता सूत्र पाठकी निर्वद्यताके तूल्य गिण चोथीथुइको भावस्तविओके भावस्तवके अवसर करने करानेकी स्थापन करतेहे; यहां केवल इन्की मूर्खताको प्रगट करतेहैं ! तथा पाक्षिकसूत्रकी साक्षीसें भी चोथीथुइ भावस्तवि साधुओंको भावस्तवके अवसर तथा द्रव्यस्तवि श्रावकोंको सामायिक सहित पौषधादिकमें करनी सिद्ध नही होतीहैकि पाक्षिक सूत्रके अवसान (अंतमें तो-सुअ· देवया भगवइ) यह नियतसूत्र स्तुति कही जातीहैं, इस नियतसूत्र स्तुतिमें तो श्रुताधिष्टातृ श्रुतव्याप्य (जिनवाणी) भगवती (पूज्य) इंद्रादिकोंके अर्थात् जिनवाणीकोंही इस स्तुतिमें याचना करीहे, परंतु व्याख्यानंतरमें तथा श्रुतदेवता भगवती सरस्वति दोनुके पास ज्ञानावरणादि कर्मोका समूह दूर कर आत्मिक धर्म प्रगट करनेकी याचना करीहै, परंतु चोथीथुइ तुल्य (पौद्गलिक) संसारिक याचना तथा अव्रती देव देवीका शरिरादिकका वर्णव इस नियतसूत्र स्तुतिमें नही किया गयाहै, वास्ते यह नियतसूत्र स्तुति भावस्तविओके भावस्तवमें कहनेसें चोथी द्रव्यस्तुति [illegible]नी असिद्धहीहे.

फेर सु० सं० चो० पृ० ११ पं. २७ में लिखा है कि सामायिक लईने बेठा पछी तेमां करवानी जे जे विधी छे तेमां सावद्य करणीनो अवकासज नथी, इत्यादि लेख लिखके पहिले पिछेके सर्व लेखसें अपनी मन मानी पीतांबरीओकी चलती आचरणाकों सिद्धकर पूर्व बहुश्रुतोंकी आचरणा उत्थापनकी कोशिप करनेकों उलट पलट असमंजस

भापण कीया है कि महाभाष्यमें चैत्यवंदनका नव भेद तीन तथा चार थुइ दोनुसें करनां भाष्यकारजीने बताये है प्रतिक्रमणकी आदिमें अथवा अंतमें चार तथा तीन थुइसें करनेका नही लिखा है, महाभाष्यमें तो तीन तथा चार थुइ दोनुंके नव भेदमेंसें जघन्यकाल उत्कृष्टके तीन भेदमेंसें हरकोइ भेद करनेका सामान्य वचन लिखा है, तिस्के बदले तीन थुइका मत केवल विपरित लिखा तो प्रतिक्रमणका आद्यंतमें चार थुइका मतभी महाभाष्य विपरितही है, फिर तिस्की साथ चार अथवा आठ थुइ शास्त्रमें कहनेकी कहीज नही यह कहना सो जिन आणा उथापक वचन है, जो तीन तथा छ थुइ शास्त्रमें कहनेकी कहींही नही यह कहनांभी जिन आणा उत्थापक वचन है, और जो चैत्यवंदन भाष्यकी गुणत्रिसमी गाथासें (द्रव्यस्तव) जिन पूजाके अवसरकी चार तथा आठ थुइ सिद्ध कर गये हो तो चैत्यवंदन लघु भाष्यके कर्त्ता श्राद्धदिनकृत्य सूत्र वृत्तिमें भावस्तविओके अधिकारमें तथा चैत्यवंदन भाष्यकी संघाचार वृत्तिमें सिद्धांत भाषासें तीन तथा छ थुइभी सिद्ध कर गये है फेर "देव देवीकी स्तुति करनी" यह सावद्य करणी है. अथवा "साधु साधवी छट्ठे गुणठाणे रहे छते चोथे गुणठाणे रहे हुवे देव देवीकी स्तुति न करे" यह कहनांभी बाल जिवोके भ्रम पमाडवे मुजब है, तो "देव देवीकी स्तुति करनी" यह एकांत निवद्य करणी है, अथवा "साधु साधवी छट्ठे गुण ठाणे रहे छते देव देवीकी एकांत सावद्य स्तुति करे" यह कहनांभी बाल जिवोंको भ्रम डालने मुजबही है, कारण कि "चोथी थुइमें प्रथम तो देव देवीकी स्तुति करते नही" तो क्या नर्क त्रियंचकी स्तुति करते हो! परंतु चोथी थुइमें देव देवीकीही स्तुति करते हो कि "वो सम्यक्ति होनेसें तिनोंका सानिध्य अथवा साज्य (पौद्गलिक) संसारिक मांगते हो-वो सुख दो, समाधि दो, बोधि बुद्धि दो" ऐसी चोथी थु-

इसमें प्रार्थना करते हो अैसी देव देवीकी प्रार्थना सावद्य करणीरूप है, तयही वंदितासूत्रमें और पाक्षीक सूत्रमे जैसी निर्वद्य पाप रहित प्रार्थना याचना है तैसी चोथी थुइमें हो सकती नही, और प्रतिक्रमणका छ आवश्यक पूरे होते पहिले श्रुतदेवता भूवनदेवता तथा क्षेत्रदेवताकी स्तुति करते हो वोभी न होनी चाहिये. कारणकि " सामायिक लेके बैठे पिछे तिसमें करनेकी जो जो विधी है तिसमें सावद्य करणीका अवकासही नही " तो मिथ्यात्व १, प्रमाद २, कषाय ३, अशुभ योग ४, टाल अव्रतिओका शरिरादिकका वर्णन करना तो उक्त लेख स्तुतिओमें मोजुद है तो उक्त चार सावद्य आश्रवै टाल एक अव्रत आश्रव(सावद्य) पापका तो अवकास उक्त श्रुत देवतादिक स्तुतिओसंभी लगेबिना रहता नही, वास्ते पूर्व बहुश्रुतोने श्रुतस्मृद्धिके अर्थ तथा अवग्रह याचनाके निमित्त छ आवश्यक पूरे होते तथा छ आवश्यक पूर्ण हुये पीछे श्रुतदेवतादिकोंका काउसग्गही सामायिक सहित प्रतिक्रमणमें करनेका लिखा है, परंतु स्तुति करनी नही लिखी है, कारण के प्रथम पूर्वधरोकी वारमें श्रुतदेवता (जिनवाणीको नमस्कार करना तिसकी आसातना टालनेका तो लेख है, परंतु छ आवश्यक पूरे होते तथा छ आवश्यक पूर्ण हुये पीछे श्रुतदेवताका कायोत्सर्गका तो लेख नही है, पिण छ आवश्यक पुरे हुये पीछे चौमासी तथा संवत्सरी प्रतिक्रमणके देवशी प्रतिक्रमणके नियत अनियत कायोत्सर्ग पुरे हुये पीछे क्षेत्रदेवीका अवग्रह याचनार्थ कायोत्सर्ग करनेका लिखा है और पख्खी चौमासीमें (सिज्जातर) भूवनदेवीका अवग्रह याचनार्थ कायोत्सर्ग करनेका लिखा है, तदनंतर पूर्वधर वर्त्तमान छते बहुश्रुतोने देवशी प्रतिक्रमणका छ आवश्यक प्रतिक्रमणांत मंगल स्तुति (नमोस्तु वर्द्धमानाय) इत्यादि प्रतिक्रमण विधी संपूर्ण किये पीछे श्रुतदेवतादिकका कायोत्सर्ग करना आचरण किया है, तवहि पंच वस्तुक स्वोपज्ञ वृत्तिमें श्रीहरिभद्रसूरिजी बहुश्रुत महाराजने लिखा

है कि (आयरणाए सुअदेवी माइणं हवइ उसग्गो) अर्थात् आचरणासें श्रुतदेवतादिकका कायोत्सर्ग होता हैं, आदि शब्दसें क्षेत्रदेवता भुवनदेवतोंका ग्रहण होता है, इस लेखसें तथा नियत अनियत कायोत्सर्गका लेखसें पख्खी चौमासी संवत्सरीका देवशी प्रतिक्रमणका छ आवश्यक पूरे होते तथा प्रतिक्रमण विधी पूरे हुये पीछे श्रुतदेवतादिक कायोत्सर्ग अवग्रह याचनाके अर्थ अंतिम बहुश्रुत श्री महोपाध्याय श्री यशोविजयादिक लिखते आतेहैं परंतु स्तुति करनी लिखते नही, तथा कितनेक बहुश्रुत देवशीप्रतिक्रमणके छ आवश्यक पूरे होते श्रुतसमृध्यर्थ श्रुतदेवताका कायोत्सर्ग तथा थुइ और विघन विदलनार्थ क्षेत्र भुवन देवतादिकका कायोत्सर्ग और थुइयां करनी लिखीहै सो पूर्वोक्त तिन पूजाके अनुष्ठान करनेवाले पुरुष सामायिक रहित प्रतिक्रमण करनेवालेके लिये लिखीहैं, परंतु भावस्तवियोके भावस्तवमें करनेके लिये नही लिखीहै; इस बातका विशेष अस्मत् कृत " चतुर्थ स्तुति निर्णय शंकोद्धार " परिच्छेद १४--१५ सें जाणना, फेर देव देवी चोथे गुणठाणे छतां सम्यक्तकी छापवालेहै तद्वी तिनकी स्तुति करते मिथ्यात्व नही लगताहै, और तिन्का परिमित संसार (अर्ध पुद्गल परावर्त्तवहीहै) तोभी तिन्की स्तुति करते एक अव्रत आश्रवका पाप दोष तो अवश्य लगताहीहै, जोभी अपणे हालका साधु साधवी श्रावक श्राविका सम्यक्त युक्तहैं कि नही ? यह निश्चय कह सके नही ! पण पूर्व बहुश्रुतोका लिंग (श्वेतपट्ट साधु वेष) तथा तिन्की श्रद्धा और उन्के कथन प्रमाणे यथाशक्ति अपने अपने आचारमें वर्त्तनेवाले चतुर्विध संघ कहलातेहै, तो चोथा पांचमा छट्ठा गुणठाणाभी व्यवहारसें जाणी जताहै फेर " चोथा गुणठाणावालाको नहीज नमे " ऐसा कहां लिखाहै, जो ऐसा होय तो तीर्थकर भगवान " नमो तित्थस " कहके संघको नमस्कार करते है यह न घटे, यहभी पृष्ट बारमें लिखगा मिथ्या प्रलापहैके (असंजयं न वंदिज्जा मायरं पीयरं

तहा सेणावइ पसत्थारं रायाणो देव याणियं) अर्थात् असंयतकों वांदना न चाहिये-चाहे वो माता, पीता, सेनापती, हाकेम, राजा, देवता, कोइ पण हो, इस आवश्यक निर्युक्त्योक्त वचनसें समदृष्टी वा मिथ्यादृष्टी दोनुं असंजतियोकों छठ्ठा गुणठाणावाला वांदे नही, और जो (गुणाऽहियंवंदे) अर्थात् गुणाधिककों वांदना यहभी श्री आवश्यक निर्युक्ति आदि जैन सिद्धांत शास्त्रका वचनहै, वास्ते (नमोतिथ्थस) अर्थात् नमस्कार होजो जंगम तीर्थ चतुर्विध संघ तथा स्थावर तीर्थ शत्रुंजयादिकको तथा (नमो सव्व संघस्स) अर्थात् सर्व संघकों नमस्कार होज्यो, इत्यादि वचन बोलके वंदनादि करना सो तीर्थपद तथा संघ पदकों नमस्कारहै, यह तीर्थपद तथा संघपद है जो छठा गुणठाणावाला हीनाधिकसें अडतालीस गुणसें गुणाधिकहै वास्ते छठा गुणठाणावालेके भी वांदने योग्यहै तथा (नमो समण संघस्स नमो खमासमणाणं) अर्थात् नमस्कार होज्यो श्रमण संघ साधु साधवीकों अथवा नमस्कार होजो क्षमा श्रमण साधु साधवीयां प्रती और (वांदुछुं इच्छकारी समस्त सुश्रावकोरे, खमासमण चौदेइ; श्रावकरे श्रावकरे सुजस इस्यु भणेरे ॥६॥) अर्थात् भगवानादि चार खमासमण देके इच्छकारी समस्तश्रावको वांदुछुं ऐसे अच्छे जसके धणी श्रावक परस्पर कहे, श्रावकका प्रधानपणासें श्राविका श्रावक भणी अथवा परस्पर श्राविका श्राविका भणी कहे ॥ इत्यादि पूर्वबहुश्रुत तथा अंतिम बहुश्रुतोके वचनोसें साधु साधवी श्रावक श्राविका परस्पर अपने अपने संघकों अपने अपने व्यवहार मुजब उत्सर्ग मार्गसें गुणाधिककों वांदे परंतु व्यवहार मार्गमें साधु-साधवीकों न वांदे, साधवी-श्रावककों न वांदे, श्रावक-श्राविकाकों न वांदे, श्रावक श्राविका-साधु साधवीकों वांदे, पण साधु साधवी-श्रावक श्राविकाकों न वांदे, तैसे छठे गुण ठाणे रहे साधु साधवी-चोथे गुण ठाणे रहे देव देवीकों व्यवहार मार्गसें उत्सर्ग मार्गमें

चाहे नही, तथा तीर्थंकर भगवान (नमो तिथ्थस्स) कहके संघकों न-मस्कार करे है, सो श्री संघमें गुणाधिक श्रुतज्ञान रहा है तिसको न-मस्कार करे है, इतनामेंही चारितार्थ हो गया है और इस्का विशेष तथा श्रुतदेवी (जिनवाणी) का विशेष समजना होय तो तर्क वितर्क समाधान सहित अस्मत् कृत "चतुर्थस्तुति निर्णय शंकोद्धार" परि-च्छेद पत्रसें समजना, परंतु पीतांबर मतांतरी जैसी कोइभावधी तर्क वितर्क करे तोभी (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ भावस्ताविंयोके (भावस्तव) सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिकमें करनेकी कदापी सिद्ध होनेकी नही और पृष्ट तीन तथा पत्रमें पीतांबर संघवाले मतांतरी आत्मारामजीकी महत्वता लिखके तिन्की करीहुइ "चतुर्थ स्तुति निर्णय" चोपडीकी सा-क्षीसें सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिकमें चोथीथुइ करनेकी स्थापित करतेहै सोभी "पानथीडामें कथ्थे चूने सोपारी आदि बदले कोयला सुं-र्धण करतेहै" जैसी तुमने आत्मारामजीकी महत्वता लिखी तैसेही तु-मारे विद्वानथे तबही ढुंढकमतकी खानमेंसें निकलके तुमारे पीतांबर म-तकी वडी खोइमें आन गीरे। तिसिसें गुरु कुलवासका अभावसें और ब-हुश्रुतगितार्थोकी परंपराके ग्रंथोका अज्ञातपणासें तथा गितार्थोके वचनका मर्मकी पूरे पूरी माहिती न होनेसें "चतुर्थ स्तुति निर्णय" लिखते कोइ जगे अर्थ विपरित तो कोइ स्थानमें भाव विपरित और कोइ स्थानमें मनकल्प-नाका जूठाही लेख लिखके हरकोइ ग्रंथमें सामान्य वचनसें देववंदन-विधी कही अर्थात् तीन चार थुइका लेख नही तहां लिखदियाकि य-हांभी चार थुइसें देववंदना करनी कहीहै इत्यादि अनेक विपरित विक-ल्पोसें आखी पोथी भरीहै तिनोकी एक मिसाल यहां लिखदर्शातेहैकि श्री पंचाशक वृत्तिकार जीनेतो चोथी थुइको मध्यमा वंदनामें नांवैत संभावना कर फेर तिस्का अग्रहणकर कल्पभाष्यादि गाथासें जघन्य मध्यम उ-त्कृष्ट तीन थुइसें वंदना सिद्ध करी है, तो पंचाशकस्तवसें उत्कृष्ट छ

थुइकी वंदना होनी लिखी चाहिये, तहां "पृष्ट ६ पंक्ति १९ सें लिखाहैकि और कोइकतो पांच शक्रस्तव आठ थुइकी चैत्यवंदना अरु पांच अभिगम तीन प्रदक्षिणा पूजादि संयुक्त इसको उत्कृष्ट चैत्यवंदना मानताहै, और पृष्ट ५ पंक्ति १९ सें लिखाहैकि चोथी थुइ अर्वाचीनहै इसीवास्ते ग्रहण करी नही ॥ ऐसा लिखके फेर पृष्ट १७ पंक्ति १२ सें लिखाहैकि कल्पभाष्य गाथाके अनुसारे मध्यम चैत्यवंदनामें चार थुइ कही अने पंचशक्रस्तव रुप उत्कृष्ट चैत्यवंदनामें आठथुइ कहनी कही."

इत्यादि उक्त लेखपर विचार करोकि प्रथम मध्यम वंदनामें चोथीथुइका अग्रहण लिखके फेर कल्पभाष्य गाथाके अनुसार मध्यम तथा उत्कृष्ट चैत्यवंदनामें चार आठ थुइ लिखदेना! यह गप्पका गोला नहीतो क्या लिखाहै! हां! जेकर कदाचित् व्यवहार भाष्यकी गाथामें (कारणेण परेणवि) इस अतिदेश सूत्रके अनुसार अन्यत्र संबंधमें तथा व्यवहार भाष्यकी गाथाके अर्थ करते लिखदेते तबतो प्रतिष्ठादि कारण परत्व चार तथा आठ थुइका लिखना इन्का यथार्थ हो जाता, परंतु यहां पंचाशक वृत्तिके भावार्थ लिखणेके संबंधमें तथा कल्पभाष्य गाथामें तो वा तथा अपी शब्दका ग्रहणसें पूर्व बहुश्रुतोने मध्यम चैत्यवंदनामें तीनथुइ और उत्कृष्ट चैत्यवंदनामें छ थुइ संपूर्ण परिपूर्ण वंदनामें ग्रहण किइहै तो कल्पभाष्य गाथाके अनुसार चार तथा आठथुइ लिखदेना यह गप्पका गोला नहितो क्या सप्पका गोलाहै! इसी गप्पसप्पका गोलाका लेख देखके "संवत १९५९ जेठवदि १३ वार मंगल तारीख २३ जुन सन १९०३ रोजकी सभामें सुरत पतिांवर संघके अग्रेसरी होके मी. चुनिलाल छगनचंदने आत्मारामजीका लेख रुप गप्प सप्पका गोला सभामें गडगडायाकि आत्मारामजीनी चोपडीमां कल्पभाष्यनी गाथा अनुसारे मध्यम चैत्यवंदनमां चारथुइ अने पंच शक्रस्तवरुप उत्कृष्ट चैत्यवंदनमां आठ थुइ कहीछे, इस गप्पसप्पका गो-

लोकों सभामें गुडतादेस सूरिजीने पकडके कहाकि जो कल्पभाष्यनी टीकामां चार तथा आठ थुइ होय तो राजेंद्रसूरिजीए मानवी, नहीतो समस्त संघे त्रण थुइ करवी, एना उपरे सही करो" तब गप्पसप्पका गोलाकी संपडास (अमितवात) की धसकसें जीव धडकाते भी, चुनिलाल आदि पीतांबरी संघवालोने सही न करी और तिस गप्पसप्पका गोलाको छिपानेकों सु. सं. पी. अ. ठे. चो. पृ. ३. पं. ११ में बक्त गप्पसप्पका गोलाकी वात उडाके लिखाकि आत्मारामजी कृत "चतुर्थस्तुति निर्णय" आवी अनेक वातो बतावबामां "शास्त्रनां तमाम प्रमाणो साथनो" आ ग्रंथ कोइपण बुद्धिवंत अने निष्पक्षपातीने खात्री करवाने बसछे!!

इस लेख रुप पलीता लगाके उक्त गप्पसप्पका गोलाकों उडायाकि आत्मारामजी कृत चतुर्थ स्तुति निर्णयमेंसें अनेक बातों बतावनेमें आछुकि–शास्त्रोका तमाम प्रमाणो साथनो अर्थात् प्रमाणोका साथ जो प्रमाणा मार्गका यह ग्रंथ कोइपण बुद्धिवंत और निष्पक्षपातीके खात्री करवेको पूर्ण है. इत्यादि लेखका पलीतासें प्रथम गप्पसप्पका गोला उडाया तवतो अज्ञातपणासें उडाया था! परंतु पीछे सूरिजीकी तरफसें जाहेरखबर रुप पलीता लगनेसें पीछा अपने पास आन गिरा! तब जाण लियाकी कल्पभाष्यकी गाथाके अनुसारतो चार तथा आठ थुइ सिद्ध होनेवाली नही! जरूर आत्मारामजीने गप्पसप्पका गोला लिखके गडगडा दिया है! परंतु अपने तो इसिकाही आधार है और जैन शास्त्रोंकी युक्ति भांती अपनेकों मालुम नही, वास्ते अपनां पीतांवर मत तो मूलसें असत्यकों ज्यों त्यों कर आज पर्यंत साच मनाते आते है तो अपनेभी इस गप्पसप्पका असत्य गोलाकों सत्य भापन होय तेसा लेख लिखके इस वातकों गप्पसप्प कर दे ऐसा इरादासें पृ. १५ पं. २५ सें पृ. १६ पं २५ तक लिखा है कि "चतुर्थ स्तुति निर्णय वांची समजवानी मल्लामण करीये छीये स्वर्गवासी मुनीश्री आत्मारामजीनुं

नासज तेसणे करेला अनेक ग्रंथोनी महत्वता अने सत्यता सिद्ध करवाने पूरतु छे, इत्यादि यावत् तेमणे लख्युं छे ते शास्त्राधारथीज लख्युं छे." इत्यादि महत्वता सत्यताके ऊपर लिखनेका प्रयत्न करना सो तो सुवर्णकों झोल चडाने सरखा है परंतु उपर लिख आये ऐसा असत्य गप्प सप्पका गोला उपर ऐसी महत्वता लिखनेका प्रयत्न करनां सो तो वेलुकी माटीका गोलाके उपर सुवर्णका झोल चढाने मुजब है कारणकि ऐसी महत्वता सहित तुमकों खात्रीथी तो सूरिजीका कहने मुजब परस्पर लिख करके सूरिजीकों कल्पभाष्य टीका बताके कल्पभाष्य गाथाके अनुसार चार तथा आठ थुइका लेख दर्शाके कबूल कराते तो सूरिजीभी खुशीसें अंगिकार कर लेते, तो तुमकों गप्पसप्पका गोला उडानेकों ऐसा असत्य लेख लिखनेका प्रयासभी नही करना पडता, और पृष्ट १९ पंक्ति ५ सें जूठा लेख लिखा है कि ' ज्यारे सूरिजीने श्री आत्मारामजीवाली चतुर्थ स्तुति निर्णयमांथी चार थुइने आठ थुइ शास्त्रकारे करवी कही छे ते संबंधी पाठो बताव्या त्यारे तेनो जवाब प्रथम पोते एम आप्यो के आ चोपडीमां लखेलुं मान्य नथी करता, मुल ग्रंथमां बतावो. ते वखते भीमसिंह माणेकनुं साडा त्रण रुपैयावालु प्रतिक्रमण सूत्र के जेमां चैत्यवंदन भाष्य आप्युं छे ते सूरिजीने बतावतामां आव्युं " इत्यादि लेख लिखकेभी उक्त गप्पसप्पका गोला उडानेका प्रयास करनेकों साडातीन रुपैयेवाली चोपडी बताके सूरिजीके अमान्य चैत्यवंदन भाष्यादिक संबंधी चार थुइ आठ थुइके पाठ बताके सूरिजीके माथे नही माननेका कलंक दीया तो तुमारे तो आत्मारामजीने लिखा है सो शास्त्राधारसेंहि लिखा है ऐसी दिलमें खरी खात्रीथी तो ओछा दरजेकी चोपडी बताइ तो सूरिजीके मान्य उंचा दरजेकी एकही कल्पभाष्य टीका बताके अपने दिलमें खात्री तो कर लेतेकि आत्मारामजीने सच्चा लिखा है कि जुठा लिखा है परंतु (ग्रामो नास्ति कु-

तः सीमा) अर्थात् गामही नहीं तो सीम कहांसें लावे, तैसे कल्पभाष्य गाथामें तीन थुइकी संपूर्ण चैत्यवंदना सिवाय चार थुइ आठ थुइका नाम निशेषही नहीं तो कल्पभाष्य टीकामें कहांसें लायके बतावे; ऐसी पीतांबर संघका दिलमें खात्री होनेसें कल्पभाष्यटीका सूरिजीकों मताइ रही! और आत्मारामजीका उक्त लेख संबंधी गप्पसप्पका गोला छिपानेकों उक्त असत्य लेख लिख मारे हैं, ऐसा इन्का लेख देखतेही बुध विद्वानोंकों खात्री होती है.

अब विचार करोकि उत्तम प्राणी उत्तमभोजन करनेकों बैठा परंतु प्रथम कवलमेंही मक्षिका आगइ तो वो उत्तम प्राणी उस भोजनकों कैसे ग्रहण करेगा! तैसे आत्मारामजीने चतुर्थस्तुति निर्णय लिखते प्रथम ऐसा बडा भारी गप्पसप्पका गोला गडगडादियातो संपूर्ण चोपडीमें तो कितने गडगडाए होयगें! ऐसी खात्री अपने पीतांबर मतपक्षी मूर्ख दृष्टिरागीही सिवाय निष्पक्षपाती विद्वजनोकोंतो हुयेविना रहेंगे नहीं? यह चोपडी अच्छे अच्छे विद्वजन अमान्य करते सूरजी अमान्य करे इसमें क्या आश्चर्य है!! यह सर्व पीतांबर मत गुरु कुलवासकाहीज प्रभावहै! परंतु पीतांबर मती जैसे श्रीनिशीथ सूत्रमें पीलाकपडा करके साधुकों धारन करनेका लिखाहै तिसिसें हमभी रंगके कपडे धारण करते हैं; इत्यादि अभिनिवेश (जाणके जूठ बोलणा) रूप मिथ्यात्व सेवन करतेहै तैसे श्री आत्मारामजी सेवन नहीं करतेथे क्योंकि वो महात्मापुरुष विद्वान और यथार्थ विचारके ग्राहकथे जबतक अस्मत् कृत "चतुर्थ स्तुति निर्णय शंकोद्धार" इन्के देखनेमें नहीं आयाथा तबतक तो अंतःकरणमें अपना किया लेखका आदरथा, और जब देखनेमें आया तब अपना किया लेखका विचार उलटा लिखा जाणके "चतुर्थस्तुति निर्णय भागदूसरा" में उपरसेंतो अपना पीतांबरमतके गुरुकुलवासीयोंकों भला मनानेकों और अपने कीया ग्रंथका आदर करानेकों मेरेकों कहेतही

हारनाका वियोग हो जाते है और तुम सरीखे पीतांबरमती कदाग्रही तथा सूर्योदय लिखने लिखानेवाले जैसे हठाग्रहीयोका वर्ताव वर्त्तनेसें रागद्वेषका अधिकाधिक वर्ताव बढता देखके अब संतोषकर प्रथम पीतांबर मतांतरी आश्री पूर्वपक्षीका प्रथम प्रश्नोत्तर संपूर्ण करते है कि पीतांबर मतीयोंकी उक्त सूत्र पाठकी कुयुक्तियोके वचनोंसें वंदिता सूत्र तथा पाक्षिक सूत्रका पाठ जैसी निर्वद्यता चोथी थुइका पाठमें अपनी मनकल्पनांसें मानके भावस्तावियोंके भावस्तवमें करनी करानी स्थापतेहै परंतु उक्त सूत्रोका पाठजैसी निर्वद्यता चोथी थुइका पाठमें पाप रहित नही ठहरतीहै; तोभी चोथी थुइका पाठ सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिकमें करते करातेहै तो जिनवचन तथा पूर्वबहुश्रुतोकी आज्ञाकों उत्थापन करते करातेहै इतितत्वम्.

अब दुसरे मतांतरी सूर्योदय लिखने लिखानेवाले उपर निर्णय निजर करते है कि सूर्योदय पृष्ट २ पंक्ति १२ सें २२ तक (असहिज्ज देवा) इत्यादि सूत्र पाठमें चार निकायके देवताओका सहाय लेनां श्रावकोंकों मना किया है, और चार निकायके देवताओकी सहाय वांछनेसें मिथ्यात्व लगता है तथा पृष्ट ११ में (सव्वथ्थेसु भगवया अणिदाण तं पसथ्थंतु) अर्थात् वीतराग भगवाने सघली वस्तुओमां अनिदानपणुं (आशा न राखवी) प्रशस्त कह्युं छे " इस कल्पनिर्युक्ति गाथामें कोइ वस्तुकी आशा न करनी प्रशस्थ कही तो कोइ वस्तुकी आशा करनेमेंभी मिथ्यात्व लगता है, और चोथी थुइमें देवदेवीकी स्हाय तथा आशा करनेकी है वास्ते चोथी थुइ (द्रव्य स्तव) जिन पूजाके अवसरभी निरंतर सर्वथा करनी करानी नही और जो करे करावे तो तिसकों मिथ्यात्व लगे, ऐसा कहके चोथी थुइकों सर्वथा सावद्य स्थापते है" इत्यादि कहना लिखना इन्का जैन शास्त्र विपरीत श्री जैनमत बाह्य मिथ्यात्वका है कि (द्रव्य स्तव) जिनपूजाके अवसर

नित्य निवृत्ति गामिनी पूजामें १ जिन बिंब प्रतिष्ठादि निवृत्ति गामिनी पूजामें २ संघादि कार्य विक्षेप सामिनी निवृत्ति पूजामें ३ इन तीनो मोक्ष गामिनी पूजामें तो समदृष्टी जिन भक्त देवताओंकी (अपौद्गलिक) असंसारिक तथा (पौद्गलिक) संसारिक स्हाय तथा आशा करनेसें इन्के उक्त दोनुं पाठके आसयसेंतो मिथ्यात्वका लवलेशही नही लगताहै तथा अपने स्वार्थ परिवारके लिये विक्षेपसामिनी ॥१॥ तथा अभ्युदय गामिनी॥२॥ इन दोनुं पूजामें समदृष्टी देवोकी पौद्गलिक (संसारिक) स्हाय तथा आशा करनेसेंभी लौकिक भारी मिथ्यात्वका पाप दोष दूर होके एक लोकोत्तर मिथ्यात्वकाही प्रसंग दोष लगताहै, परंतु इन्के उक्त दोनुं पाठके आसयसें एकांत मिथ्यात्वका पाप दोष नही लगताहै, अब इन्का उक्त लिखीत प्रथम पाठका चरितार्थ लिखतेहैकि (असहिज्जदेवासुर नाग सुवन्न जक्ख रक्खस्सकिंनर किंपुरिस गरुल गंधव्व महोरगाइ देवगणेहिं णिग्गंथ्थाओ पावयणाओ अचलणिज्जाओ) इत्यादि अर्थात् देव विमान वासी असुर नाग सुवन्न भवनवासी और जक्ष राक्षस किंनर किंपुरिस गरुड गंधर्व महोरग व्यंतर निकायवासी और आदि शब्दसें ज्योतिष चंद्र सूर्यादि इत्यादि चार निकायके देवगण समूह चलाणेकों (सम्यक्तादिकसें भ्रष्ट करनेकों) आवे तोभी समदृष्टियादि श्रावक निग्रंथ वीतरागका प्रवचन सिद्धांतकी श्रद्धासें चले नही अर्थात् भ्रष्ट होय नहीं, और कोइकी स्हाय वांछे नहीं.

इत्यादि श्री उव्वाई तथा श्री भगवती सूत्रोक्त इन पाठमें सूत्रकारजीने मिथ्यादृष्टी देवोंका स्हाय (साज्य) लेना समदृष्टयादि श्रावकोंकुं वरज्याहै, परंतु चार निकायके समदृष्टी जिनभक्त शासन देवताओंका स्हाय (सानिध्यता) लेनेकी मना नही करीहै, जेकर कहोंगे सूत्र पाठमेंतो समदृष्टी मिथ्यादृष्टिका विवरा कीया नही तो तुम कैसे कहतेहो ? इसका उत्तर यहहैकि सूत्रकारजीने इसी पाठका अतिदेशसूत्रमें वि-

परा करदियांगेकि समदृष्टयादि श्रावकोंकुं चार निकायके देवता चलानेकों आवे तोभी निर्ग्रंथोके प्रवचनमें चले नहीं अर्थात् सम्यक् श्रद्धासें भ्रष्ट होय नहीं, तो सम्यक् श्रद्धासे भ्रष्टता समदृष्टी करावे के मिथ्यादृष्टी करावे ? जेकर कहोंगे समदृष्टीभी करावे तो वो आपही मिथ्यादृष्टी हो-जाय, वास्ते समदृष्टी देवता सम्यक्तादिककी परिक्षा करनेकों आवे तो अनुकूल उपसर्ग करके सम्यक्तादिककी प्रशंसा तथा दृढता करावे, परंतु मिथ्यादृष्टी देवताओंकी तरे प्रतिकूल उपसर्ग कर सम्यक्तादिकसें भ्रष्ट करवाके सम्यक्तादिककी हिलना करावी को करावे नहीं, जेकर हठ क-रके कहोंगेकि सूत्रपाठमें समदृष्टी मिथ्यादृष्टीका विवरा किया नहीं वा-स्ते मिथ्यादृष्टीतो सम्यक्तादिकसें चलावेही परंतु समदृष्टीभी कोइ अव-सर सम्यक्तादिकसें चलावेतो नाकारा कहां कहा कहाहै ? नाकारा नहीं कहातो हाकाराभी तुम कोइ जैनशास्त्रमें बतावोंगेकि अमुक जैनशास्त्रमें अमुक समदृष्टी देवताने अमुक प्राणीकों प्रतिकुल उपसर्ग करके करवाके सम्यक्तादिक भ्रष्ट करवाया ! परंतु अैसा लेख कोइ जैनशास्त्रमें न होने सें तुमारी कल्पना करनी व्यर्थ जूठीहै, वास्ते उक्त अतिदेशसूत्रसें चार निकायके मिथ्यादृष्टी देवताओकाही सहाय लेना सूत्रकारजी निषेध कर-तेहै, परंतु समदृष्टीका निषेध नही करतेहै कारणकि जैनशास्त्रोंमें आगारी अणगारी दोप्रकारके समदृष्टयादि श्रावक लिखेहै तहां आगारीतो राजा भियोगादि छछंडी चार आगार सहित सम्यक्तादिकके ग्रहण करनेवाले और तिसी मुजब पालनेवाले आणंदादि दश श्रावक जैसे अनेक होते-है, और छछंडी चार आगार रहित सम्यक्तादिकके ग्रहण करनेवाले और तिस्मुजब पालनेवाले अर्हन्नकश्रावक विजयराजा पद्मरथ धनपालादिक जैसे थोडेही होतेहै, तहांजो आगारिक सम्यक्तादिक वालेतो (देवाभियो-गेणं) इस आगारका मुक्तपणासें उत्सर्ग मार्गसेंतो समदृष्टी देवादिककी सहीयादि लेनी वांछे, और अपवाद कारण मार्गसें मिथ्यादृष्टी देवादि-

करनीभी स्हायादि लेनी वांछे ओर जो अगगारिक सम्यक्तादि वालेतो (रा-
ाभियोगादि) छछंडी चार आगार अमुक्तपणासें मिथ्यादृष्टी देवादिककी
ो उत्सर्ग अपवाद दोनुं कारणसें स्हायादिक कदापी वांच्छेही नहीं,
ोर समदृष्टी देवादिककीभी उत्सर्ग अपवाद दोनुं कारणसें पौद्गलिक
संसारिक) स्हायादिक तो कदापी वांच्छेही नहीं, परंतु अपौद्गलिक
आत्मिकधर्मकी) स्हायादिक लेनी अवश्य वोभी वांछे, नहिंतो आत्मिक
र्मका भ्रष्टपणा होजाय. वास्ते श्री उववाइ ओर श्री भगवती सूत्रका
क्तपाठ श्रावकवर्णनिय सूत्रहे और जो वर्णनिय सूत्र होताहै सो वस्तुर्ने
थंचित् न्युनताहोतीहै तिस्का सूत्रकारजी गौणपणे ग्रहणकर मुख्यपणे
त्कृष्टताही वर्णन करतेहैं, वास्ते उक्त सूत्रोंका (असहिज्जदेवादि) पाठ
अगगारी सम्यक्तादि उत्कृष्ट श्रावकोंका वर्णनकाहै इसमें आगारिक स-
यक्तादि श्रावकोका गौणपणे ग्रहण कियाहै, जिससें इसपाठमें श्रावकोंका
विशेषणमें ओर देवताका दोनुं विशेषणमें चार निकायके समदृष्टी मि-
थ्यादृष्टी दोनुं देवतादिकका पौद्गलिक संसारिक) स्हायादिक लेना अ-
ागारिक सम्यक्तादि श्रावकोंके आश्री निषेध कियाहे, परंतु आगारिक
सम्यक्तादिक श्रावकोके आश्री निषेध नही कियाहै. और समदृष्टी दे-
वताओकी अपौद्गलिक आत्मिकधर्म संबंधी स्हायादि लेनेका निषेधतो
आगारी अगगारी दोनुंके इस सूत्रमें निषेध नही कीयाहै जेकर कदाचित्
कहोंगेकि इस सूत्रपाठकी एकेला देवताओका विशेषण पाठकी टीकामें
कोइ पाखंडी तिन श्रावकोंकों सम्यक्तादिकसें चलानेकों आवे तोभी
चार निकायके देवताओकी स्हाय न वांछे तो सम्यक्तादिक आत्मिक धर्म
सिवाय फेर कोनसा आत्मिक धर्महै सो आगारिक अगगारी सम्यक्तादि
श्रावक तिस आत्मिक धर्मके लिये समदृष्टी देवताओकी स्हायादि लेनेकी
इच्छा (वांच्छा) करे, इस तर्कका समाधान यहहैकि एकला देवताओका
विशेषण व्याख्या टीकामेंतो (परसाहाऽनपेक्षा) अर्थात् पर पाखंडी सम्य-

क्तादिकसें चलानेकों आवे तोभी चार निकायके देवताओंकी स्हायतो न वांच्छे, परंतु कोइ मनुष्यादिककीभी स्हायादि न वांच्छे, क्योंकि (स्तेस्व-यमेव उत्तरदाने समर्थाः) अर्थात् वे श्रावक आपही तिन पाखंडीयोंकों उत्तरदेनेकों समर्थ है अैसा टीकाकारजीने लिखाहै; इस लेखकी अपेक्षासें आगारी अणगारी सम्यक्तादि श्रावकोका अपने सम्यक्तादि आत्मिक धर्मकी स्हायादि अपने साधर्मि समदृष्टी देवतादिकोंकी पास लेनेकी जो तुम निषेधते हो तो क्या तुंगियानगरीमें सर्व श्रावक समदृष्टी देवतादिककी पौद्गलिक (संसारिक) स्हायादिक वांच्छा नही करनेवालेथे? क्या! सर्व आगारिक सम्यक्तादि धारनेवाले तुंगियानगरीमें वस्तेही नहीथे? जेकर हठाग्रहसें कहोंगेकि सर्व अणगारी सम्यक्तादि वालेही वस्तेथे, तो कोइ पाखंडी तिन्कों आत्मिक सम्यक्तादि धर्मसें चलानेकों आवे सो अपनी उत्तरदानकी समर्थासें तिस पाखंडीकों हटाके अपने सम्यक्तादि आत्म धर्मकी रक्षा करतेथे, तो क्या! अपनेसें अधिक उत्तरदान देने वाले साधर्मिककी स्हायादि लेते देते नहींथे? जेकर अपनेसें हीन अधिक साधर्म्यादिककी स्हायादिक तो देते लेते थे, तो अपने मनुष्यादि साधर्मियोंसें अधिक चारनिकायके समदृष्टी जिनभक्त साधर्मि शासन देवताओंकी आत्मिक धर्मकी स्हायादिकतो अणगारिक सम्यक्तादि श्रावकभी लेतेथे तो आगारिक सम्यक्तादि श्रावकतो अपने साधर्मि मनुष्यादि तथा समदृष्टी शासनभक्त चारनिकायके देवताओंकी पौद्गलिक (संसारिक) अपौद्गलिक (आत्मिकधर्म)की स्हायादिक लेनी तथा वांच्छादि करनेमें कूच्छ आश्चर्य नहीहै, जेकर कदापी फिर कहोंगेकि 'कल्पनिर्युक्ति गाथामें (चरमदेह) तद्भव मोक्षगामी होनादि (पौद्गलिक) आत्मिक धर्मकी तथा (पौद्गलिक) संसारिक सर्व वस्तुओंमें अनिदानपणा (आशा न रखनी) वीतराग भगवंतने (प्रशस्त) अर्थ कहीहै तो समदृष्ट्यादि देवदेवीकी स्हायादिक आशा करनी प्र-

शस्त (अच्छी) कही जायगी" इत्यादि तुमारा लिखना बोलनाही प्रलाप तुवेया मिथ्याहैकि पृष्ट दूसरेमें तुमारी लिखी हुइ कल्प निर्युक्ति गाथाका परितार्थ तो हम आगे (समदृष्टीदेवा) याचनाके संबंध प्रस्तावमें लिखेंगे परंतु यहां किंचित् गाथार्थमात्र लिख तुमको दर्शातेहैके इस गाथामें जो पोद्गलिक (संसारिक) अपोद्गलिक (आत्मिकधर्म) आदि वस्तुओमें अपने संसारिक स्वार्थोपभोगादि इंद्रिय सुखजनित उपचारिक सुखकी अपेक्षा सहित रागद्वेष करके सहायादि आशा (वांच्छा) न करनी भगवंत वीतराग देवजीने प्रशस्त (अच्छी) कहीहै; परंतु पौद्गलिक अपौद्गलिक वस्तुओमें रागद्वेष रहित और अपने संसारिक स्वार्थोपभोगादि अपेक्षा रहित सहायादि आशा करनेमें भगवंत जिनदेवजीने अप्रशस्त (खोटी) नही कहीहै; वास्ते समदृष्टी अपने साधर्मि मनुष्यादि तथा चार निकायके जिनभक्त शासन देवादिककी पौद्गलिक (शरीरादिक)की बहुमान पूजादि भक्ति (अपौद्गलिक) रागद्वेष रहित आत्मिक धर्मकी वांच्छासें सहायादि करने करानेसें प्रशस्त (अच्छी) कही जायगी, परंतु अप्रशस्त (खोटी) नही कही जायगी, जेकर रागद्वेष रहित अपौद्गलिक आशा (वांच्छा)सें सहायादि करनी करानी लेनी लेरानी अप्रशस्त (खोटी) ही मानोंगे तो जिनबिंब जिनमंदिरादिककी प्रतिष्ठा करनी करानी और देवपूजा गुरुपूजा शासनभक्ति प्रभावनादि करनी करानी तथा अपने साधर्मिकोंका बहुमान प्रशंसा पूजा प्रभावना स्वामिवच्छलादि करनी करानी अथवा बडी पूजा प्रतिष्ठा उजमणादिक महोच्छवोमें कंकुपत्रादि भेजके अपने साधर्मिको एकठाकर तिन्को पहेरामणी आदि भक्ती वाच्छल्य करनी करानी तथा सम्यक्त्वादिकमें स्थिरभाव करनां करानां इत्यादि कार्यमें (अपौद्गलिक) आत्मिक धर्म प्रगट करनेकी आशासें सहायादि लेनी लेरानी पडतीहै, सोभी करनी करानी तुमारे तुमारी श्रद्धासें प्रशस्त (अच्छा) नही कहना पडेगा, और उक्त कार्य तुम प्रशस्त (अच्छा) नही मानके करते कराते होतो

तिन कार्योंका फलभी तुमकों अप्रशस्त (खोटा) ही मीलेगा, तिस लिये तुमारे उक्त कार्य करनां करानां योग्य नहीहै, जेकर उक्त कार्य अयोग्य अप्रशस्त (अच्छा नही) जाणके और हमारी इस तर्कके तापके मारे उक्तकार्य करने करानेमें आग्रहसें अप्रशस्त (खोटा) मानने काही इरादा करके करोंगे करावोंगेतो बाइश टोला हूंढकोंके भाइ तेरपंथी ढुंढकोंके मत जैसा तुमारा मतभी कहा जायगा, क्योंकि तेरापंथी ढुंढक लोकभी अपने साधू साधवी सिवाय अपने साधर्मि श्रावकादिककों असंयतीमान तिन्कों खीलाने पीलाने आदि भक्ति करनेमें एकांत पाप मानके फिर तिन्का भक्ती बहुमान करतेहै, तैसे तुमभी उक्त सर्व कार्य (अप्रशस्त) अच्छा नही मानके करते होतो तिन्के भाइ तुल्य जैनाभास होनेकों नित्य निवृत्ति द्रव्यस्तव (जिन पूजा) के अवसर द्रव्य स्तव (चोथीथुइ) करनी करानी प्रशस्त (अच्छी) है; तिस्कों सर्वथा उत्थापन करनेकों जैनशास्त्रोका अन्यत्र भावका पाठ अन्यत्र भावमें लगाके अप्रशस्त (खोटी) करनेकों पृष्ट २ तथा ११ में "यामलकतंत्र शास्त्रादि" मिथ्यादृष्टी शास्त्रोका दृष्टांत देके अप्रशस्त (खोटी) कुयुक्तियां लिखते होकि "देवोथी संसारिक प्रार्थनामां जो पाप न थाततो यामलक तंत्र शास्त्रनी माफक जैन शास्त्रमां पण हजारो अनुष्टान लखत, परंतु जैनशास्त्रमां ए वातनो म्होटो निषेध छे इत्यादि सर्व लेख निकेवल मिथ्यादृष्टी पंडितका लिखा हुवा है कि "यामलक तंत्र शास्त्रादि मिथ्यादृष्टीयोके शास्त्र मुजब जैनशास्त्र नही है" कि यामलक तंत्र शास्त्रादि अन्यमतीयों के शास्त्रादिकमें तो मिथ्यादृष्टी देवताओके अनुष्टान तथा प्रार्थनामें तो मुख्य करके पौद्गलीक (संसारिक) अपने स्वार्थिक कार्य सिद्धकरनेकों ही अनुष्टान प्रार्थनादि बताये है और जैनशास्त्रोमें तो मुख्य आत्मिक धर्म प्रगट करनेकोंही अनुष्टान प्रार्थनादि बताये है कि मनका एकत्र भाव हुवा विना लौकिक लोकोत्तर कोइ कार्यकी सिद्धी होती नही, वास्ते लौकिक शास्त्रमेंतो निःके

यत लौकिक (अपने स्वार्थ संसारिक) कार्य सिद्धीके लियेही मन एकत्र करनेकों मंत्र जंत्र तंत्रादिक अनुष्ठान बताया है. और लोकोत्तर द्वादशांगी जिनवाणीके जैनशास्त्रोंमें लोकोत्तर अर्थात् लिक (आत्मिक धर्म) प्रगट करने रूप कार्यसिद्धीके लियेही मुख्यपणे मन एकत्र करनेको मंत्र जंत्र तंत्रादि अनुष्ठान जिन भगवानने बताया है, तैसेही भद्र (भोले) जिवोंको लोकोत्तर आत्मिक धर्म प्रगट करनेका अभ्यास करनेकों गौणपणे लौकिक संसार स्वार्थ सिद्धीके लियेभी मंत्र जंत्र तंत्रादिक अनुष्ठान जिन भगवानने बताये है, तहां प्रथम भद्र जिव होतेहै वो पौद्गलिक (संसारिक) स्वार्थ सिद्धी करनेमें राते माते होतेहैं, तिसिसें स्वार्थ सिद्धीके लिये मिथ्या दृष्टी देवोका अनुष्ठानादिकमें तत्परहोके सर्वथा आत्मिक धर्मका नाश करदेतेहै, तिन्की दयाके लिये लौकिक मिथ्यात्व छोडानेकों जिनभक्ती जिन अनुष्ठानादि सहित समदृष्टी देवताओका अनुष्ठानादिक लोकोत्तर मिथ्यात्व छोडनेका प्रसंगसें आत्मिक धर्मका प्रसंग करनेकों मनकों एकत्र करनेके लिये प्रथम जिन भगवानका नाम सहित जिनभक्त देवताओका मंत्र अपनेकी विधी गुरुआदिक बतावे तिस प्रमाणे जपे, तिसमें मन एकत्र न हुवा तो (सत्तरिसय) एकसो सीतेर जिनका नामकों कोठायुक्त संख्यांक यंत्रादिक गिणवेकी आम्नायसें मंत्रादिक जपके मन एकत्र करे, तिसिसें मन एकत्र न होयतो आसनमुद्रान्यास धारणादिक तंत्रादि योगसें मन एकत्र करनेसें जब मन वचन काया एकत्र होय तब संसारिक कार्यादिककी सिद्धी होय, और संसारिक प्रशस्त कार्यादिकको सिद्धी होनेसें तत्ववेत्ता होके पीछे भद्र (भोले) जिव आत्मिक धर्म प्रगट करनेकों तत्पर होतेहैं, प्रथमसेंही नहीं होतेहै. तिसके अभ्यासके लिये तथा लौकिक कार्य कारण अप्रशस्त (खोटे) भाव छोडाके प्रशस्त (अच्छे) भाव करने करानेकों जिन भगवानने लौकिक (संसारिक, कार्य सिद्धीके मंत्रजंत्रतंत्रादिक

मन एकत्र करनेकों बतायेहे, तैसेही तत्ववेत्ताओकोंभी द्वादशांग जिन-वाणीके महानिशिथादि जैनशास्त्रोमें अपने पापालोचनादि आत्मिक धर्म प्रगट करनेके लिये मंत्र जंत्र तंत्र बतायेहे सोभी मन वचन कायाका एकत्र करनेकों बतायेहैकि प्रथम कायाशुद्धी करे तब वचन शुद्धी होय और वचनशुद्धी होय तब पीछे मनशुद्धी होय, इन तीन योगशुद्धी करनेके लिये मंत्र जंत्र तंत्र अनुष्ठान अनेक तरेहके जैनशास्त्रोमें बतायेहै, तिस मुजब योगशुद्धी करके पीछे आत्मिकधर्म प्रगट करनेके असंख्य योग जिन भगवंतने कहेहै, तिन्में मुख्य नव पद तथा चौद पूर्वका सार नवकार मंत्रहै, तिसके सिद्धचक्र यंत्रादि अनुपूर्वी, अनानुपूर्वी, नंद्यावर्त, शंखावर्त, दंडावर्त, कमलबंध, छत्रबंधादि मंत्र जपनेके अनेक जंत्रहै, और दंडासन विरासनादि मुद्रा बीज धारणादि अनेक तंत्रहै, ऐसे मतीज्ञान, श्रुतज्ञानादि यावत् केवलज्ञान मोक्ष सिद्धरुप आत्मिकधर्म प्रगट करनेकों जैनशास्त्रोमें लख्खों क्रोडो यावत् असंख्य मंत्र जंत्र तंत्रादि अनुष्ठान लौकिक लोकोत्तर कार्यसिद्धीके लिये जैनशास्त्रमें बतायेहै, तिन्का तुम निषेध लिखतेहो सो महा मिथ्यात्वहै, फिर लिखते होकि "अर्वाचिन कोइक आचार्योए लखवाथीज जो अनवद्य थइ जाय तो सैंकडो अर्वाचिन आचार्योए लखेला जंत्र मंत्रोने पण अनवद्य मानवा जोइए"

इत्यादि यहभी लिखना अज्ञताकाहै कारण के अर्वाचिन आचार्योंके लिखे हुवे मंत्र जंत्र तंत्रादि अनुष्ठान अनवद्य (निर्वद्य) पाप रहित नही मानते होतो प्रथम श्री नेमनाथ वा महाविरस्वामिजीके वर्त्तमानमें श्रीनंदिषेण महर्षिजीने श्री अजितशांति स्तवनमें मंत्र जंत्र तंत्रादि गुप्त लिखेहै, फिरभी श्रीगौतम गणधरकृत ऋषिमंडल स्तोत्र तथा कल्पमें जंत्र मंत्र तंत्रादि लिखेहै, और श्रीगौतम गणधरकृत सूरिमंत्रके पांच प्रस्ताव (पीठ) आचार्यजी महाराज सदा ध्यान करनेमें लौकिक लोकोत्तर आदे कार्य सिद्धीके लिये तिसमें जंत्र मंत्र तंत्रादि लिखेहै, तथा चौदपूर्वधर श्रीभद्रबाहु स्वामीकृत मंत्र

राज अंत्रराज तंत्रराज सत्याविद्या सत्यविद्या पडलके जो कि श्री हेमचंद्राचार्यजी पीछे विच्छेद हुये शास्त्र तिसमें वर्तमानमें नमस्कार कल्प उपसर्गहरकल्प सक्रस्तवादिकल्प तिनमें मंत्र जंत्र तंत्रादि लिखे हुये है, तथा उक्त शास्त्रोके अनुसार श्रीउमास्वाति हरिभद्रसूरि प्रतिष्ठा कल्पोमें उद्धले आये तिन्के अनुसार वर्तमान प्रतिष्ठाकल्प जो कि तुम हम प्रतिष्ठादि कार्य करते कराते हैं, तिन प्रतिष्ठाकल्पोमें जंत्र मंत्र तंत्रादि पूर्वाचार्योंने लेखा है, तिजयपहुतकल्प, श्रीवृहत्शांतिकल्प, श्रीलघुशांतिकल्प, भक्तामरकल्प, नमिउणकल्प, शांतिकराकल्प, जो कि प्राचीन पूर्वाचार्यकृत १ मानदेवसूरि २ मानतुंगसूरि ३ मुनी सुंदरसूरि ४ इत्यादि अनेक प्राचीनाचार्योंने लौकिक लोकोत्तर कार्य सिद्धीके लिये हजारो जंत्र मंत्र तंत्रादि लिखे है, सो तो अर्वाचीन (नाविन) आचार्योंके लिखे हुये नही है, तिनों लौकिक लोकोत्तर अनेक कार्यकी रक्षायादि लेनी केरानी कही है, सो तिन्को तुम अनवद्य (पापरहित) मानते हो कि मिथ्यात्व अपेक्षासें सावद्य (पापसहित) मानते हो? जेकर कहोंगे हम तो उक्त लिखे रक्षायादि आदाके जंत्र मंत्र तंत्र स्तुति स्तोत्रादि अनुष्ठान लिखनां लिखानां करनां करानां सर्व मिथ्या सावद्य मानते है, सो तुमारी श्रद्धा मुजब तो तुमारे श्री नंदिषेण गौतम गणधरादि अनेक प्राचिनाचार्य मिथ्या सावद्य (मिथ्यात सहित) सावद्यके सेवनेवाले तुमारी श्रद्धा प्रमाणे सिद्ध हुये. और उन निश्चय व्यवहार महा सम्यक्ती निर्वद्य (पापरहित) कार्य करने करानेवाले महा पुरुषोंको मिथ्या सावद्यवाले सिद्ध करके तुम तिन्के करे हुये मंत्र जंत्र तंत्र स्तुति स्तोत्रादि अनुष्ठान अपने कार्यकी सिद्धीके लिये तथा प्रतिष्ठादि कारणमें करते कराते हो तो तुम महा मिथ्यात्वी सिवाय और कौन पदके योग हो? सो तो कहो. फिर भी तुम पृष्ट १२ में लिखते हो कि (असतहिज देवा) इत्यादि उपाशक दशा देवासुरादि माग्रथी रहाय न लेनी जोइए चाहे तो मिथ्यादृष्टी होय

चाहे सम्यक्त दृष्टी होय परंतु तेमनांथी आशा न करवी एज मुख्य श्रावक धर्म छे, तथा पृष्ट ३२ में फिर लिखते हो कि "असहि-ज्जदेवा सुर" इत्यादि देवा सुरादिथी स्हाय मांगवु निषेधीने तेने सा-वद्य ठेरवे छे. इत्यादि सर्व लेख महा मिथ्यात्वका है कि मिथ्यादृष्टी देव असुरादिक मात्रकी तो स्हाय न लेनी ठीक है, परंतु सम्यकदृष्टी देवतायोंकी स्हाय न लेनी, तिन्की आशा न करनी, यह कहना तुमारा ठीक नही, क्योंकि अपने साधर्मियोंकी स्हाय आशा न करे तो और कि-स्की करे ? अपने आत्मधर्मकी वृद्धि करनेकों अपने साधर्मिकों स्हाय देनी तथा करनी करानी और तिन्की भक्ति भावकी आशा करनी क-रानी यहही श्रावकका मुख्य धर्म है. तथा (असहिज्ज देवा) इस सूत्र पाठमें आगु देवा सुरादिक मिथ्यादृष्टी देवतायोका स्हाय मांगना निषेध के तिस्कोंही सावद्य ठहराया है; परंतु समदृष्टी देवताओका स्हाय निषेध के सावद्य नही ठहराया है, जो (असहिज्ज) इस सूत्र पाठसें समदृष्टी देवताओका स्हाय लेना निषेध करोंगे तो श्री गौतम गणधरजीकृत सु-रमंत्रका स्हाय सदा निरंतर आचार्य महाराज लेते है यह सुरमंत्रके पांचपीठ है, प्रथम- विद्यापीठ—तिस्का मंत्र वार पदका वर्द्धमान विद्या प्रमुख सूरिमंत्र सवा कोटी जाप पूर्वक जपते साधना साधते कोटी श्रुतका जाण होय ॥१॥ दूसरा सौभाग्यपीठ—पूर्वोक्त मंत्र विधीपूर्वक आराधवे करके सर्व जनके वल्लभ आदेय वचन सिद्धी होय ॥२॥ तिसरा लक्ष्मी-पीठ—तिस्ही मंत्राराधनसें राजादि वस होय महिमावंत होय ॥३॥ चौथा मंत्रराज प्रयोगपीठ—तिस्में अनेक तरेहके मंत्राराधनसें ईत, उपद्रव, कामण, मोहन, वस्यादिक होय ॥४॥ पांचमा सुमेरुपीठ—इंद्रादिकोकेभी मान्य होय गौतमादिककी तरेह लब्धीवंत होय ॥५॥ इन पांच पीठोमें अरिहंतादिक देव मुनी लब्ध्यादि और समदृष्टी देवताओका अनेक तरे-हके स्हायादि लेनेमें आते है तो तुमारी श्रद्धासें तो सूरमंत्रका जपना

भी मिथ्यात्व सावद्य है तो तुमारे नामधारी आचार्य निरंतर जपके मिथ्यात्व सावद्य क्यों लगाते हे ?

यहां कोइ मतांतरी प्रश्न करेगाकि-संपूर्ण भावस्तवि श्री गौतम गणधरादि चौदपूर्वधर, यावत् दो पूर्वधर श्री देवार्धिगणि क्षमा श्रमणादि, तथा वर्त्तमान श्रुतके पारगामी जैनदिवाकर श्री हरिभद्र सूरिजी, श्री शिलांकाचार्यजी, वादिवेताल श्री शांत्याचार्यजी सर्ववादी शिरोमणी वादि श्री देवाचार्यजी, कुमारपाल भूपाल प्रतिबोधक कलिकाल सर्वज्ञ त्रिकोटी ग्रंथकर्त्ता श्री हेमचंद्राचार्यजी, नवांगवृत्तिकारक श्री अभयदेव सूरिजी, बाराह उपांग वृत्तिकारक श्री मलयगिरिजी अनेक ग्रंथ ग्रंथनकला नर्तन नर्तकी नाटयाचार्य श्री सौधर्मबृहत् तपागच्छाधिराज श्री देवेंद्रसूरिजी, यावत् अंतिम बहुश्रुत न्याय सरस्वति बिरुद धारक काशीजित श्रीमद् महोपाध्याय श्री यशोविजयजी, इत्यादि अनेक बडे बडे बहुश्रुत और आज पर्यंतके आचार्य उपाध्याय गितार्थादि नवकार तथा सूरिमंत्रादि मंत्र जंत्र तंत्र और ऋषिमंडलादि स्तोत्र स्तुति करते कराते अरिहंतादिक समदृष्टी देवताओकी सहायादि लेते लेवाते आज पर्यंत आतेहै, तो सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिक भावस्तवमें "द्रव्यस्तव" चौथी थुइ करनी करानी चतुर्विध संघकों पूर्वे बहुश्रुत क्यों निषेध करतेहै ?

इसे वक्त चालना (प्रश्न)का प्रत्यवस्थान (प्रत्युत्तर) समाधान यहहैकि--जैनशास्त्रोंमें आवश्यक दो प्रकारके कहेहै, अेकतो द्रव्य आवश्यक, दूसरा भावावश्यक, तहां द्रव्य आवश्यक दो प्रकारके है अेक लौकिक, दूसरा लोकोत्तर, तहां लौकिक द्रव्य आवश्यकके अनुष्ठान स्नानादि अनेक प्रकारकेहैं तो तिन्के मंत्र जंत्र तंत्र स्तुति स्तोत्रादिकभी अनेक प्रकारके है, और लोकोत्तर द्रव्य आवश्यक दो प्रकारकेहै, एक लोकोत्तर द्रव्य आवश्यक, दूसरा लोकोत्तर भावावश्यक, तहां लोकोत्तर द्रव्य आवश्यकका यहां अनधिकारहै. वास्ते लोकोत्तर भावावश्यक दो प्रकारकेहै, एक

आवश्यक, दूसरा आवश्यक व्यतिरिक्त, तहां भावावश्यक छ प्रकारकेहै, तिन्के मंत्रतो नवकारादि और जंत्र पूर्वानुपूर्वि पश्चानुपूर्वि आदी और, तंत्र खड्गाशन जिनमुद्रादि और स्तुतिस्तोत्र अनुष्ठान अरिहंतादि महाव्रुतिओका निःकेवल आत्मिकगुण और पौद्गलिक अंगपूजा अग्रपूजा शरिरादि वर्णन सहित आत्मिक गुणवर्णनके नमोत्थु वर्द्धमानादि तथा वीरंदसिंदादि श्रीहरिभद्राचार्यादि कृत स्तुति तथा अजितशांती उव्वसग्गहर आदि स्तोत्र इत्यादि अनेक जैनशासनमें करे जातेहै, तिन्में तो निःकेवल तिनकी भक्तिकी वांच्छासें आत्मिक धर्म प्रगट करनेकों अरिहंतादिकके सहायादिकही करेजातेहै तिनवास्ते अरिहंतादिक महाव्रतियोंके मंत्र जंत्र तंत्र स्तुति स्तोत्रादि अनुष्ठान करनेमेंतो मिथ्यात्वादि पंचाश्रवकी अनुमोदनाकाभी पाप प्रसंग नही लगता है परंतु प्रणव अक्षरादि रहित कहना क्योंकि प्रणव अक्षरादि सहित कहनेमें सूक्ष्म पौद्गलिक आशावांच्छा आजातीहै, तबही बहुश्रुतोकी करण सार्गणासें सामायिक सहित प्रतिक्रमणमें वरकनकादि कहा जाताहै, पण ओं वरकनकादि नही कहा जाताहै. तिसिसें चतुर्विध संघकों सामायिक सहित प्रतिक्रमण पौषधादिक भावस्तवमें भावस्तावियोकों भावस्तवही करना पूर्व बहुश्रुतोनें लिखाहै, तथा आवश्यक व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक भावावश्यक दो प्रकारकेहै एकतो जिनपूजादि द्रव्य आवश्यक भावावश्यक, दूसरा जिनपूजादि व्यतिरिक्त आवश्यक भावावश्यक, तहांजिनपूजादि व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक भावावश्यक दो प्रकारकेहै, एक नियत दूसरा अनियत तहां जिनपूज व्यतिरिक्त नियतद्रव्य आवश्यकमें नवकार और सूरिमंत्र कल्पादि कल्पोक्त कितनेक ओंह्रीं पद संयुक्त अरिहंतादिक पद तथा लब्ध्यादि संयुक्त इष्टयादि देवताओके निःकेवल नॉम संयुक्त मंत्र वर्द्धमान विद्यादि बारपद्मादिकका सुमंत्रतो आचार्य तथा उपाध्याय महाराजकेही नित्य जपनेका अधिकारहै, तिन्मे प्रणव अक्षरादि सहित लब्धी संयुक्त तथा जयापराजितादि समदृष्टी देवताओके

निःकेवल नामहै, परंतु रहायादिकका प्रगट शब्द नहीहै ऐसे कितनेक मंत्र जंत्र तंत्रादिहै तिन्कों नित्य स्वाध्याये तथा ध्यानमें जपते भावस्त-वियोकों मिथ्यात्वादिक पंचाश्रवका पाप दोष कुच्छभी नही लगताहै. तथा (ॐ वरकणय शंखविद्रुम और ओंह्रीं नमो अरिहंताणं तथा ओं नमो आमोसहि जिप्पोसहि जयापराजिते) इत्यादि मंत्र और गौमुख यक्ष चक्रेश्वरी समदृष्टी देवताओंके नाम संयुक्त अपने अपने संख्याक ना-मके यंत्र और जिस जिस अनुष्ठानके आसनमुद्रादि तंत्र और प्रणव अ-क्षरादि संयुक्त स्तुति तथा ओं नमिऊणादि स्तोत्र इत्यादि निःकेवल आ-त्मिकधर्म प्रगट करनेकों जिनभक्ति आशा रहित अपने यथायोग्य योग-शुद्धी करके चतुर्विध संघ निरंतर सझाय और ध्यानादि अनुष्ठानमें तथा यथायोग्य अपने पूजादि अनुष्ठानमें नित्य करनेमेंभी जिस्में रहायादिके-नेके प्रगट शब्द न होतेहैं तिसिसें भावस्तवि तथा द्रव्य स्तवियोकों करनेमें मिथ्यात्वादि पंचाश्रवका पाप (दोष)की अनुमोदनाका प्रसंग नही लगताहै, तथा प्रणव अक्षरादि और समदृष्टी देवताओके नामादिक तथा तिन्के शारिरादिक पौद्गलिक गुणवर्णव सहित और रहायादिकके प्रगट अक्षर जिस्में होय ऐसे नवकार कल्प १ सुरमंत्र कल्प २ भक्तामर क-ल्प ३ बृहत्शांतिकल्प ४ लघुशांति कल्प ५ शांति करादिकल्प ६ प्र-तिष्ठाकल्पादि ७ कल्पोक्त अनेक प्रकारके मंत्र जंत्र तंत्रादि और स्तोत्र स्तुतियांजो–संसारदावा–स्नातस्या–कमलमुकरती चरणेनेउर–इत्यादि स्तुति तथा ऋषिमंडल १ बृहत्शांतिस्तोत्र २ लघुशांतिस्तोत्र ३ . तिजयपहुत स्तोत्र ४ शांतिकरादि स्तोत्र ५ नित्य निवृत्ति मोक्षदायनी अंग अग्रादि (द्रव्यस्तव) जिनपूजा अवसर १ तथा अनियत् जिनबिंब प्रतिष्ठादि निवृ-त्तिपूजा २ और संघादिकार्य विघ्नविनाशनी निवृत्तिपूजा ३ इन तीनी पू-जामें उक्त मंत्र जंत्र तंत्र स्तुति स्तोत्रादि करनेसें चतुर्विध गवको मि-थ्यात्व १ प्रमाद २ कषाय ३ अशुभयोग ४ इनचार आश्रवद्वारोंसे पाप

यादिक शब्द और (पौद्गलिक) संसारिक कार्य सिद्धीके शब्दसें याचनादि करी होय अथवा जिसमें समदृष्टी देवताओके नामादि सहित तिन्का शारिरादिक ऋद्धि परिवारके गुणवर्णव जिसमें किये जाते होय. ऐसे मंत्र जंत्र तंत्र स्तुति स्तोत्र आचार्यादि द्विविध संघ साधु साध्वी करे करावे अनुमोदे तो लोकोत्तर मिथ्यात्वादि पांचों आश्रवका पाप दोषही लगे, परंतु निर्जराका लवलेश होय नही. तैसेही श्रावक श्राविका द्विविध संघभी लिस निवृत्ति (द्रव्यस्तव) द्रव्य जिनपूजाके अवसर बिगर सामायिक प्रतिक्रमण पौषधादिक भावस्तवमें उक्त प्रगटादि लक्षणवाले मंत्र जंत्र तंत्र स्तुति स्तोत्र करे करावे अनुमोदे तो लोकोत्तर मिथ्यात्वादि पांचो आश्रवका पाप दोषही लगे, परंतु निर्जराका लवलेश होय नही. वास्ते (कारणेण परेणवि) इस सूत्रका अति देश वाक्यसें आगम व्यवहारी और श्रुतव्यवहारी पूर्वधर उत्कृष्ट गीतार्थोंकी वारमेंतो आगम व्यवहारी तथा श्रुतव्यवहारी पूर्वधरोकी आज्ञा मुजब चतुर्विध संघ प्रतिष्ठादि कार्यके अवसरही समदृष्टी देवताओका बहुमानादि करनेकों (द्रव्य स्तव) चोथी थुइ करते करातेथे; कारण के जैसे लोकमें अपनी संग वालेसरी सगासोइ प्रत्यक्ष अपने सन्मुख होते है तिन्के गुणवर्णव और तिन्के योग कार्यका उपयोग दानादि प्रत्यक्षही किये जाते है, परंतु कागद पत्रादि लेख करके नही किये जाते है. और वो सेग साधर्मि परोक्ष होय और अपने घरमें व्यावसादी प्रमुख कार्यमें तिन्का बहुमानादि कार्य करनां करानां होय तो कंकुपत्रादि लेख लिखकेभी करनां करानां पडतां है; तैसे पूर्वधरोकी वखतमें तिस अवसर समदृष्टी देवताओका आवागमन प्राये बहुलतासें था, तिसिसें तिन्के बहुमानादि गुणवर्णव तथा तिन्के कृत्योंका उपयोग दानादि प्रत्यक्ष (सन्मुख) हो जाता था, तिसिसें प्रतिष्ठादि अवसरमेंही तिन्के बहुमान वात्सल्यादि किये जाते थे, और जब आगम व्यवहारी तथा संपूर्ण श्रुत व्यवहारी पूर्व-

परोक्षा व्यवच्छेद कालके अवसर श्रीमहानिशिथोक्त सिद्धांत वादि दश पूर्वधर श्री जिनभद्रगणी क्षमाश्रमण तथा श्रीसिद्धसेन दिवाकरादि पूर्वधरोकी आज्ञासें श्री हरिभद्रसूरि तथा जिनदासगणी; प्रमुख व्होत वर्तमान वहुश्रुत एकत्रहोके पूर्वधरोकी आज्ञा धारणा जित मुजब बहुश्रुतोकि आज्ञा धारणा व्यवहार प्रवर्त्तनाकेलिये कितनाक जित (आचिर्ण) व्यवहार कियाके पूर्वधरोकी वारमें श्रीकालकाचार्यजी पाहिले पांचम और पिछे चोथकी संवत्सरी करतेथे, अब जैनी टीपणाका विशेष कारणसें प्रतिक्रमण पवास छठका संक्रमण होनेसें तिर्थंकरोकी आज्ञाभंग दोष प्राप्तहोताहै, वास्ते अब वहुश्रुतोकी आज्ञा धारणा मुजब यहही जित (आचीर्ण) हैकि चतुर्विध संघको चोथकीही संवत्सरी करनी, परंतु पांचमकी नही करनी ॥१॥ तथा पूर्वधरोकी वारमें प्रत्यक्ष सम्यक्तदृष्टी देवताओका आयागमन था, तिसिसें चोथीथुइ सहित तीनथुइके अर्थात् चार अथवा आठथुइकेदेववंदन प्रतिष्ठादि कार्यके अवसरही चतुर्विधसंघ करते होतेथे, अब खर तर काल दोषसें समदृष्टी देवताओका आयागमनहोनेका नहीं; वास्ते तिन्का वहुमानादि भक्तिके लिये द्रव्य क्षेत्र काल भावका अवसर अपने श्रुतज्ञानसें देखके पूर्वधरोकी आचरणा सहित उसी अवसरमें बहुश्रुतोने (द्रव्यस्तवि) श्रावकोंके (द्रव्यस्तव) जिनपूजा अवसर (द्रव्यस्तव) समदृष्टी देवताओका बहुमान गुणवर्णनादिकका भव्योंके लाभ होनेकों चोथी थुइ करनेका जीत (आचिर्ण) किया, अर्थात् द्रव्यजिनपूजाके अवसर चार तथा आठ थुइकी चैत्यवंदना (देववंदना) करनेका आचरण किया, तथा सामायिक रहित प्रतिक्रमणमेंभी पूर्वधरोकी आचरणा मुजब चार थुइ तथा श्रुतदेवी भुवन देवतादिकका कावोत्सर्ग थुइ विघ्नविनाशनार्थ आचरणकिया ॥२॥ तथा भावस्तविओंके (भावस्तव) प्रतिक्रमण पौषधादिकमें (जे अइयाजि अभिगओ वंदिजा) इत्यादि श्री आवश्यक चूर्णी

तैसा रिद्धी परिवार अमुकका वरमें होता तो ठीक था, अमुकके वरमें अच्छी चाल चलनेमें चतुर दारा शोभनिक घोडा हाथी वेल्लादिक हैं, तैसा अमूक अपने भाइ सज्जनके होता तो ठीक, इत्यादि (पौद्गलिक) संसारिक सरागभावमें गुनवर्णन करे तो अवश्य एक मिथ्यात्व टाल अव्रतादि चार आश्रवका पाप दोष सब वचनसें करने करानेमें तथा पाप दोषकी अनुमोदना करने करानेमें सामायिकमें दोष लगता है, तैसेही (द्रव्यस्तव) चोथी थुइयोमें-कोइ थुइमें तो अव्रति समदृष्टी देवताका (पौद्गलिक) शरिरादिकका वर्णन किया है, और कोइ थुइमें तिस देवताका वाहनका वर्णन, और कोइकमें तिन्का शिणगारका वर्णन, और कोइकमें तिस देवताका रिद्धी परिवारका वर्णन, फिर कोइकमें (पौद्गलिक) संसारिक सहाय याचनादि लेनी देनी करनी करानी कही है, तिसिलेंही पूर्व बहुश्रुतोने थुइ कहनेके वखत सकल संघका बीज (वंदण वत्तिआए) इत्यादि पाठ कहनेका निषेध करके यह सूचन किया कि वह देवता अव्रति अपचख्खाणी है वास्ते अरिहंतादिक महाव्रतियोके मुजब वांदने पूजने योग्य नही है, और तिन्के योग्य तिन्का वंदन पूजन है, सो द्रव्यस्तव है, वो द्रव्यस्तव जिनपूजाके अवसरही करनी, परंतु भावस्तवियोके भावस्तवमें नही करनी. कारणकि अरिहंतादिक महाव्रतियोके (द्रव्यस्तव) द्रव्यपूजाका फलकी अनुमोदना तथा तिन्के द्रव्य (पौद्गलिक) शरीरादि रूद्धी आदि वर्णनका फलकी अनुमोदना तो भावस्तवमें करी जाती है, परंतु अव्रति अपचख्खाणी द्रव्यस्तवियोका (द्रव्यस्तव) द्रव्यपूजाका फलकी अनुमोदना तथा तिन्का (पौद्गलिक) शरिरादि रिद्धि परिवारादि गुणवर्णनका फलकी अनुमोदना भावस्तवमें नही करी जाती है, और जो करे तो एक मिथ्यात्वाश्रवकी अनुमोदनाका फल (मिथ्यात्व) तो नही लगता, परंतु

अव्रतादि चार आश्रवकी अनुमोदनाका फल अव्रतादि चार आश्रवका पाप दोष तो अवश्य लगे विना रहेंगे नहीं. और जो अव्रतादिकका पाप दोष लगे विना रहेगा नही तो भावस्तवभि खंडित. हुये विना रहेगा नही. इसी उक्त आसयसेंही पूर्व बहुश्रुत चैत्यवंदन महाभाष्यादिकमें लिखते है कि (उक्कोसा तिविहा विहु कायव्वा सत्ती उभयकालं ॥ स-ड्ढेहिं ऊ सविसेसं जम्हाते_सिइमं सुत्तं ॥ ६१ ॥) अर्थात् उत्कृष्ट तीन भेदकी तीन तथा चार थुइकी चैत्यवंदना शक्तिके हुये भावस्तवि द्रव्य-स्तवियेोके उभयकालमें संध्या प्रातः प्रतिक्रमणके आद्यंतमें तो तीन थुइका भेदकी और प्रातःसंध्याकी द्रव्य जिनपूजामें चार थुइके भेदकी करना योग्य है. पुनः श्रावकोने तो सविशेष अर्थात् विशेष सहित करनी चाहिये, क्योंकि श्रावकोके वास्ते ऐसा सूत्र कहा है ॥ ६१ ॥ (वंदइ उभय कालंपि चेइयाइं थयथुइ परमो जिणवर पडिमागर धूव पुप्फ गंध च्चणं जुत्तो ॥ ६२ ॥) अर्थात् श्रावक जन उभय कालमें (स्तोत्र स्तुति) चार तथा आठ थुइ करके मध्यम उत्कृष्ट छठा भेदसें यावत् नवमा भेदकी उत्कृष्ट उत्कृष्ट चैत्यवंदना (देववंदना) करे, कैसी किस प्रकार करे कि जिनप्रतिमाकी—अगर धूप पुष्प गंध इत्यादि पूजा युक्त हुवा थका करे, अर्थात् अगरादि एक. प्रकार तथा अनेक प्रकारकी पूजाकी बखतही करे शेष जघन्यके तीन अरु. मध्यमके तीन मिलके छ भेद तीन थुइकी चैत्यवंदनाके जो रहे है सो देशकाल देखके साधु श्रावकने चैत्य प्रवाडी आदिमें करणे आदि शब्दसें कालग्रहण तथा मृतक साधुके परठवे पीछे जो चैत्यवंदना करीये है इत्यादिमें करणे ॥ ६३ ॥ जहां महाभाष्यमें तीन तथा चार थुइके नव नव जूदे जूदे भेद बताये है तिनमें तीन तथा चार थुइ दोनुके भेद छठा भेदसेंही शरु होते है, तिनमें इस उक्त पाठमें महाभाष्यकारजीने (स्तोत्र स्तुति) जो चार

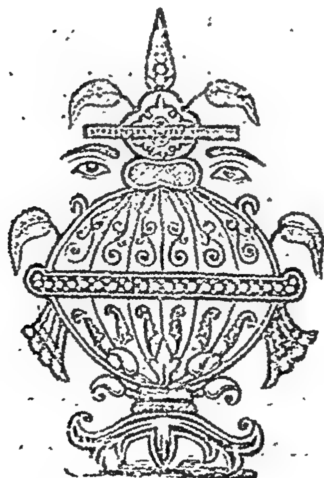
थुइकी चैत्यवंदना छठा भेदसें यावत् नव भेद पर्यंत श्रावकोंकों (द्रव्य स्तव) द्रव्य जिनपूजाके अवसरही (द्रव्यस्तव) जो चोथी थुइ करणेकी लिखी तो अर्थातही तीन थुइकी सातमा भेदकी चैत्यवंदना (देववंदना) सें यावत नव भेद पर्यंत तीन तथा छ थुइकी चैत्यवंदना उभय काल संध्या और प्रातःकाल प्रतिक्रमणके आद्यंत तो तीन थुइसें उत्कृष्ट जघन्य सातमा भेदकी चैत्यवंदना और पर्वादिक तथा पोंपधादिकमें भावस्तवि साधु श्रावकके मध्यम उत्कृष्ठ तथा उत्कृष्ट उत्कृष्ट छ थुइसें आठमा नवमां भेदकी चैत्यवंदना भावस्तविओके भावस्तव चारित्रानुष्टानमें करनेकी महाभाष्यकारजीने शक्ति छते उभयकाल "प्रसिद्ध" करनेकी लिखी, तो तीन थुइसें आदिके छ भेद तो चैत्य प्रवाडी आदिमें भावस्तवि द्रव्यस्तवि साधु श्रावक दोनुके करनेका प्रगट लिखा है, परंतु चोथी थुइका कोइ भेदकी वंदना करनी भावस्तवमें लिखी नही, ऐसेही पूर्व वहुश्रुतोने अपने कृतिके सर्व ग्रंथोमें जहां जहां (स्तोत्र स्तुति) जो चार थुइकी विधी युक्त चैत्यवंदना (देववंदना) लीखी है वो सर्वत्र (द्रव्य स्तव) द्रव्य जिनपूजाके अवसरही करनेकी लिखी है, परंतु भावस्तवमें करनेकी कहांभी लिखी नही, किंतु यत्नाभक्तिसें द्रव्य जिनपूजा करती वखतही पांच थावरका (असंजम) हिंसाका पाप दोप फल दूर होके निःकेवल पुन्यानुबंधी व्होत निर्जराका फलकी देनेवाली द्रव्य जिनपूजा भावस्तवका कारणभूत अरिहंतादिकका द्रव्यस्तव जिस्का फलकी अनुमोदना भावस्तवमें करी जाती है ऐसा द्रव्यस्तवभी सामायिकादि भावस्तवमें करनां योग शास्त्रादि अनेक वहुश्रुतोका ग्रंथोमें निषेध किया है तो अव्रति अपच्चखाणी समदृष्टी देवताओके (द्रव्यस्तव) द्रव्यपूजा और तिस्का फलकी अनुमोदनाकी (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ तो सामायिकादि भावस्तवमें करनेकी अर्थातही बहुश्रुतोने निषेध करी है,

और जो करे तो द्रव्य जिनपूजाके अवसर तो करनेमें एक अव्रताश्रव-
काही पाप दोष लगता है, तिस्कीभी निवृत्ति होके जिनभक्ति आदि
तिन्का कृत्योका उपयोग देनेका फलकी अनुमोदनासें व्होत निर्जराका
फल मिलता है, अरु भावस्तवमें (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ करनेसें तो
निःकेवल अव्रतादि चार आश्रवका पाप दोषकाही फल मिलता है, परंतु
निर्जराका फल नही मिलता है, वास्तेही पूर्व बहुश्रुतोने भावस्तवमें
द्रव्यस्तव करनेका निषेध सूचन करके भावस्तवमें चोथी थुइ द्रव्यस्तव
करनीभी चतुर्विध संघको निषेध सूचना करी है.

अब पूर्वपक्षिका-प्रश्नका उत्तर संपूर्ण करके इस प्रस्तावका निगमन
करतेहैंकि पीतांवर संघवालेतो वंदिता तथा पाक्षीक सूत्रमें सम-
दृष्टी देवताओका आत्मिक याचना तथा आत्मिक गुण वर्णनकी निर्वद्य
याचना और निर्वद्य गुणवर्णन स्तुतिका दृष्टांतसें सावद्य याचना और
सावद्य गुण स्तुति जो (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ (द्रव्यस्तव, द्रव्य जिनपू-
जामें करनेकी उथापके जिनपूजामें करने योग्य तिस्कों सामायिकादि
भावस्तवमें करनी करानी स्थापके पूर्वधर तथा पूर्व बहुश्रुतोकी भाव-
स्तवमें तीनथुइकी चैत्यवंदना (देववंदना) करनेकी आचरणाकों सर्वथा
उथापतेहै और "सूर्योदय" लिखने लिखानेवाले (असहेज्ज देवासुर) तथा
कल्पचूर्णि गाथा इन दोनुं पाठमें मिथ्यादृष्टी देवताओकी स्हायादि तथा
पौद्गलिक (संसारिक) आशा (वांच्छा समदृष्टी साधु श्रावककों करनी
निषेधीहै तिस्का दृष्टांत देके समदृष्टी देवताओका आत्मीकधर्मकी स्हाय
तथा याचना आशा (वांच्छा) करनेका साधु श्रावकोकों सर्वथा निषेध
करके (द्रव्यस्तव) जिनपूजाके अवसर (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ अल्पपाप व्होत
निर्जरा फलकी देनेवाली पूर्वधरोकी आज्ञासें पूर्वबहुश्रुतोने आचरण करी
तिस अवसरमें करने करानेसें मिथ्यात्वका लवलेश लगता नही, तिस्कों तिस

अवसर करने करानेमें मिथ्यात्व लगनेका कलंकदेके मुखसें भद्र (भोले) जीवोकों कारणसें करनेका भ्रम डालके सर्वथा चोथी थुइ उत्थापन करतेहैं, तिसीसें उक्त दोनु मतवादी पूर्वधर तथा पूर्व बहुश्रुतोकी आचरणाकों उत्थापके अपने मनमानी आचरणा करतेहैं, वास्ते अपेक्षासें जिनवचनो थापक दोनु विपरितद्रष्टी (विपरित मिथ्यात्वी) जैनशास्त्रोके न्यायसें कहे जाते हैं.

(इति त्रिक चतुर्थ स्तुति निर्वद्य सावद्य निदर्शन निर्णय तृतिय प्रस्तावः संपूर्णम्)



॥ अथचतुर्थप्रस्ताव. ॥

सु. सं. श्र. ठे चोपडी पृष्ट २ पंक्ती १८ सें पृष्ट ३ पंक्ती ७ तक फिरभी लिखतेंहैकि "आगल चालतां एवणे (सूरिजीए) जणाव्युं के देवदेवीनी स्तुति करवी ए तो सावद्य करणी छे" त्यारे प्रश्न करवामां आव्यो के श्रावकनां वंदिता सूत्रमां (सम्मदिठी देवा दिंतु समाहिंच बोहिंच) ए पाठ केम होइ शके! त्यारे संघनी मोटी ताजुथी वच्चे राजेंद्रसूरि तरफथी एम कहेवामां आव्युं केवंदितासूत्र छ आवश्यकनां पडिक्कमण आवश्यकमां नथी, श्रावको देवशी पडिक्कमणमां पडिक्कमण आवश्यक तरिके किंयुं सूत्र भणे छे? एम फरिथी प्रश्न थतां "अतिचार आलोवे छे" एम जवाब मल्यो, अतिचार आलोवे छे तेनो पाठ कीयो ? त्यारे तेनां जवाबमां "पढ्मे अणुव्वयंमि-वहबंध छविछए-यिये अणुव्वयंमि-सहस्सा, रहस्स दारे" विगेरे अनेक गाथाओ कही बतावी के जे वंदितानीज गाथाओ हती, वली आगल चालतां "सूरिजी" वंदित्तुतो बरबरतुं छे" इत्यादि यावत्" वंदित्तु सूत्र पडिक्कमणाना छ आवश्यकमां नथी एम बोलतेज नही. "इत्यादि पर्यंत लिखाहै."

इसि उक्त लेखका उथ्थला "जाहेर खबर"में लिखाहैकि चुनीलाल कहे चोथी थुइ शा मांटे नथी कहेतां ? सूरिजी कहे ए सावद्य छे बीजा देवनी आस्ता करवी सूत्रमां नथी. चुनीलाल कहे वंदिता सूत्रमां देव पासे याचना करवी-ते शुं ? सूरिजी कहे सूत्र पीस्तालीशमां नथी

ए पाछलथी कोइये वनाव्युं छे. त्यारे चुनीलाल लोको
सामु जोईने कहेवा लाग्या के जुवो! एने सूत्र नथी क-
हेतो. सूरिजी कहे तमे लोकोने गुचवणमां नाखोछो, ते
सारु नथी. चुनिलाल कहे अरे महाराज तमे गुचवण जा-
णशो नही, जे जैनमां गुचवण करशे ते संसारमां वुडशे,
एम कही बोल्या के वंदितु आवश्यकमां होय तो केम?
सूरिजी कहे आवश्यकपंचांगीनो लाख ग्रंथ छे, तेमां ए
वंदित्तु छेज नही, चुनिलाल कहे पडिक्कमणामां श्रावक
शुं करे? सूरिजी कहे अतिचार आलोवे एवुं मूलमां लखे
छे. चुनिलाल कहे शुं लखे छे? सूरिजी कहे "वहवंध"
इत्यादि लखे छे, चुनिलाल कहे पचाश गाथा आवश्यक-
मां छे. सूरिजी कहे बावीश हजारीमां होय तो हमारे
चार थुइ करवी, अने न होय तो संघ त्रण थुइ करे, चु-
निलाल कहे हुं लखुं? सूरिजी कहे लखो. चुनिलाल ल-
खवामां गोटालो करवा लाग्या, सूरिजी कहे गोटालो शा
माटे करोछो? दशकत करो, त्यारे दशकत कर्या नही!
तथा वंदिताने माटे जे सूरिजीए कह्युं ते पचाश गाथानुं
वंदितु तमारा घरमां छे! बीजाना घरमां तो त्रेतालीश
गाथा छे, अने लोकोमां एम समझाववामां आवे छे के
घर घरनी कहे छे! पण आवश्यक टीकामां पचाश गाथा
होय तो महाराजश्रीये चार थुइ मानवाने कवुल कर्युं छे
तो तमो केम बतावता नथी?

अब उक्त दोनुं लिखे लेखकी समालोचना लिखतेहैं
कि सु. सं चोपडी और सूरिजीका जाहेर खबर पत्रमें
दोनुके परस्पर लिखनेकी रीतीका फेरफारहै, परंतु एक मुद्दा-
की बातका फेरफार विना और कुच्छभी फेरफार नहीहैकि

"संघकी वडी ताजूची विचमें राजेंद्रसूरिजी तरफसें औसे कहनेमें आयाकि वंदित्ता सूत्र छ आवश्यकका पडिक्कमण आवशकमें नही" यह मुद्दाकी बात सूरिजीने "जाहेरखबर" में छपवा के प्रसिद्ध किइ नही, जब जाहेर खबर पत्र प्रसिद्ध होने बाद ॥ सु. सं. अ. ठे. चो. पृष्ट १८ पंक्ती १६ सें पृष्ट १९ पंक्ती ५ तक लिखके जताव कियाकि "जाहेर खबर"में वली लख्युं छे के "चुनीलाल कहे वंदित्ता सूत्रमां वाचना करवी ते शुं" आवो प्रश्न कदी पूछवामां आव्यो नहोतो, परंतु ज्यारे सूरिजी एम बोल्या हता के "देव देवीनी स्तुति करवी ए तो सावद्य करणी छे" त्यारे प्रश्न करवामां आव्यो हतो के वंदित्ता सूत्रमां "सम्मदिठी देवा दितु समाहिंच बोहिंच" ए पाठ केम होई शके? "इत्यादि यावत्" अने जे खरुं कहुं हतुं ते याद आपीये तो वंदित्ता सूत्र देवशी पडिक्कमणमां, कहेवाना छ आवश्यकमां छेज नही, ने तेज प्रमाणे काशीवाला पंडितजी संघनी सभामां पण जणावी गया हता, ने तेथीज जेठ वद १३ ने रोज संघना तमाम लोक ताजूब थया हता. इत्यादि जतावके लेख देखते कातो सूरिजीने (वंदित्ता सूत्रको) छ आवश्यकका पडिक्कमण आवश्यकमें पडिक्कमण आवश्यक तरीके सही मानके जाहेर खबर पत्रमें प्रसिद्ध नही छपवायाकि अपने मुखसें अजाणपणासें सभामें स्वाल निकलनाथा सो तो निकल गया, परंतु पकडमें आनेसें अपने मतका अभिमान रखनेकों औरकी और जूक्तीयां लिखवा छपवा के प्रसिद्ध करी, इन दोनुं कारण सिवाय दूसरा कोईभी कारण उक्त मुद्दाकीबात गुप्त रखनेका प्रयोजन मालुम नही देताहै.

अब उक्त समालोचना और उपर लिखे हुये दोनुं लेखका निर्णय लिखतेहैंकि प्रथम सूरिजीने देव देवीकी स्तुति करनी सावद्य कही, तव पीतांवरी संघकी तरफसें स्वाल जवाव करनेवाला आगेवानकों ऐसा पीछा स्वाल करनाथाकि–महाराज देवदेवीकी स्तुति करनी किस न्यायसें सावद्य कहते हो ? परंतु वंदिता सूत्रमें (सम्मदिठी देवा दिंतु समाहिंच वोहिंच) यह पाठ कैसे हो शके ? ऐसा प्रश्न नही करनाथा, क्योंकि इस पाठमें तो भवनवासी आदि चार निकायके समदृष्टी देवी देवके पास (समाधि) आत्मिक धर्ममें चित्तका स्वस्थपणा और परलोकमें (जैनधर्म) आत्मिक धर्मकी प्राप्ती रूप एकांत निर्वद्य याचना करीहै, ऐसी निर्वद्य याचना भावस्तवमें करनेसें भावस्तव खंडन नही होता है, और (एकवीत्तीसि लोइयाओ थुइयो अओ परंथयं) अर्थात् एक दो तिंन श्लोक पर्यंत थुइ कहलाती है तिस पिछे चार श्लोकादि स्तव (स्तोत्र) कहलाता है, इत्यादि व्यवहार भाष्यादि वचनसें अरिहंतादिक महाव्रतिओकी तीनस्तुति सहित समदृष्टी देवदेवीकों (स्तोत्र स्तुति) चोथी थुइमें तो (पौद्गलिक) आत्मिक दोनुं तरांकी सावद्य निर्वद्य याचना है परंतु वंदिता सूत्रका पाठ जैसी एकांत निर्वद्य याचना नही है तथा चोथी थुइमें अव्रती अपच्चखाणी समदृष्टी देवदेवीका शरीर वाहन रिद्धी परिवारादिकका वर्णन करनेसें एक मिथ्यात्व रहित अव्रतादि चार आश्रवका सावद्यपणा लगताहै, तिससें भावस्तवि साधु श्रावक दोनोंकों (भावस्तव) सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिक चारित्रानुष्टानमें (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ करनी पूर्व वहुश्रुतोने भावस्तवमें करनेकी निषेध सूचन करीहै,

तो जैसे सूरिजी वंदिताका पाठकी आत्मिक एकांत निर्वद्य याचनाकों अपनी मन कल्पनासें एकांत सावद्य याचना ठहराके (समदिठी देवा) पाठकों उत्थापन करतेहैं, तैसेही तुम पीतांबरी संघवालेभी (समदिठी देवा) इस पाठकी एकांत निर्वद्य आत्मिक याचनाका व्हानेसें सावद्य निर्वद्य याचनाकी और अव्रती अपच्चखाणीओका (पौद्गलिक) शरिरादि गुणवर्णवकी सावद्य स्तुतीकों अपनी मनकल्पनासें एकांत निर्वद्य ठहराके द्रव्यस्तवमें द्रव्यस्तव करनेकी पूर्वधर तथा पूर्व बहुश्रुतोकी आचरणाकों उत्थापके भावस्तवियोंके भावस्तवमें (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ करनेकी एकांत स्थापतेहो, और पूर्वधर तथा पूर्व बहुश्रुतोकी एकांत निर्वद्य भावस्तवियोंके भावस्तवमें अरिहंतादिक महाव्रतियोंकी तीन स्तुति करनेकी आचरणाकों एकांत उत्थापतेहो ॥ अब अपने मन मानी कल्पनाकी समाचारी करनेवाले एकांत हट्टग्राही सूरिजीकों और अपने मनकल्पित अपने पूर्वजोकी समाचारी करनेका एकांत हट्टग्राही पीतांबर संघ इन दोनोंकों कांटेमें बैठाकर तोलनेसें कोनभारी और कोन हलका होताहै। ऐसी सज्जन तथा विद्वज्जनोकों परीक्षा करनी चाहिये ? मेरेकोंतो ऐसा भापन होताहैकि " सूरिजीका तकडीका चेलावा भारी होनेसें नीचा जाय इस्में तो क्या अधिकाइ। परंतु पीतांबर संघकाभी चेलावा भारके प्रभावसें सूरिजीका चेलावासें कुच्छ अधिक नीचाही जानेका पण तिलमात्र उंचा चढनेका नहीं। कारणके सूरिजी तो अपनी मन कल्पनाका हठके जोरसें (सम्मदिठी देवा)का एकांत निर्वद्य पाठकों एकांत सावद्य ठहराके इस पाठका

उत्थापन करके और चोथी थुइका सर्वथा उत्थापन कर पूर्वधर तथा बहुश्रुतोकी पंचांगी आद्य ले अनेक ग्रंथोका पाठ उत्थापन करते अनेक पूर्वधर तथा पूर्व बहुश्रुतोकी आशातना करनेमें रक्त हो रहेहैं तैसेही पीतांबर संघवालेका पूर्वजोनेभी श्री बृहत्तपागच्छिय स्वेतांबराचार्यके साथ जूठा हठ कदाग्रह करके स्वेतांबरोकी न्युनता जतानेकों और अपने मतकी उत्कृष्टता बतानेकों पीला कपडा धारनकर स्वेतांबर साधुओका लींग छोडके (स्वेतांबर मर्यादासें सर्वथा अलग होनेकों) द्रव्यस्तव जिन पूजाके अवसर, द्रव्यस्तव-चोथी थुइ करनेकी मर्यादा सर्वथा उत्थापके भावस्तावियोके भावस्तव सामायिक सहित प्रतिक्रमणादिक चारित्रानुष्टानमें तीनथुइ करने आदि समाचारी उत्थापके श्रीबृहत्तपागच्छकी कितनीक समाचारी आगु लिख आये तिस्मुजब बदलके अपनी मनकल्पित समाचारिका वर्त्ताव किया, तिसि वर्त्तावका हठ कदाग्रह पकडनेसें जैसे सूरिजी भद्र भव्यो के भरमानेकों कहते लिलिखतेहैकि "हम कारण परत्व चोथी थुइ मानतेहै" तिस कारणका खूलासा अपनी सूर्योदयसें कहांभी जताया नही ! तैसेही वर्त्तमान पीतांबर संघवालेभी अपने पूर्वजोका हठ कदाग्रहसें वर्ताइ समाचारीकों चलानेकों कहते लिखतेहै कि "हमारे पूर्वजोने किसी कारणसर स्वेतांबरपणा छोड पीतांबरपणा धारण कियाहै, परंतु वो कारण बताते नही ! कि हमारे पूर्वजोने अमूक कारणके लिये पीले कपडे धारन कियेहै. जो ढुंढीयोंका मत खंडन करनेका व्हाना बतावे तो इन्के पूर्वजोने पीला कपडा धारण किया तिस अवसरमें स्वेतांबर वाचनाचार्य न्याय सरस्वती विरुद-

धारक काशीजीत, अंतिम बहुश्रुत महाराजने जितनां गुर्जर देशादिकमें ढुंढीयोंका मत हठाके स्वेतांवर किये, तिस्का एकांसभी आज तक कोइ पीतांवरीने किया नही, और जो कहेंगेकि-यशोविजयजी उपाध्यायजीनेभी पीले कपडे धारन कियेथे, यह कथन करनेवाला महा मिथ्या दृष्टी स्वेतांवराचार्यके माथे जूठा कलंक देनेवालाहै. महोपाध्यायजीने दोढसो ग्रंथ बनाये तिन्मे कोइ ठेकाणे ऐसा नही लिखाकि "मैने पीले कपडे धारनकर क्रिया उद्धार करा" किंतु पीला कपडा धारन करनेवाला कपटी और पाखंड मतीहै ऐसा लेखतो देखनेमें आताहै !! तिस वास्ते पंचमकाल करालके सच्चे उत्कृष्ट साधु तो हम पीले कपडे वालेहै ! और स्वेत कपडे धारनेवाले तो ढीले पासथ्थेहै ! इत्यादि स्वेतांवरोकी निंदा करने कराने सिवाय दूसरा कोइभी कारण पीलाकपडा धारन करनेका दिखता नहीं ! तोभी श्रीसौधर्म बृहत्तपागच्छके तथा श्रीसौधर्म बृहत् खरतर गच्छादि ८४ गच्छोके हमारे स्वेतांवर भाइ तथा स्वेतांवर संघ अपनी स्वस्थ निद्रामें सोते हुये जराभी आंख खोलते नही ! अपनां जैन धर्म वितराग मार्गमें वीतराग भावसें आगु चौराशी गच्छोमें अपने अपने गच्छके आचार्योने अपने गच्छके शिष्यादिककी गुणवृद्धिके लिये कोइ कोइ मर्यादा (समाचारि) वीतराग भावसें भिन्न करी वो वो समाचारी अपने अपने गच्छमें साधु साध्वी द्विविध संघ करते करातेथे, तिस्कों परस्पर कोइ गच्छवाले निंदते निषेधते नहीथे, परंतु सामायिक चैत्यवंदन प्रतिक्रमणादि चारित्रानुष्टानादि विधीतो सर्व चौराशी गच्छके जैन समुदाय पूर्वधरोकी आज्ञा मुजब पूर्व

बहुश्रुतोंने जिसमुजब जीत (आचरणा) करीथी, तिसमु-
जब चतुर्विध संघ करते करातेथे, और कोईके परस्पर
निंदा इर्षा नहीथी, और एकेकको गुणोन्नति करतेथे, तिस
अवसर धन्य धान्यादि सुख वृद्धि सहित जैन धर्मका
अभ्युदय कैसाथा? जैसे सिंहको देख सियाल डरे! तैसे
परमतवाले जैनोंसें डरतेथे! और अवसें वृहत्तपागच्छ
खरतर गच्छादिक (८४) गच्छोंमेंसें तपामती खरतरमती
पीतांबरादि दश मत निकसें तबसेंही पूर्व बहुश्रुतोंकी आ-
चरित समाचारिका भेद कर अपने मन मानी कल्पित
समाचारियां जूदी जूदी चलानेसें और परस्पर रागद्वेष-
का राज बढानेसें परस्पर एकको एक निंदा इर्षा करने
करानेसें तर तर जैन समुदायमें परस्पर विरोध पाडनेसें
अवी वर्त्तमानकालमें तो जैनका फन (फाकस) करनेको
इर्षा रूप अग्नि बुजी रूपी धूंवेका गोटागोट जिसमें उ-
छाला उछल रहा होय ऐसा धगधगायमान जलता हुवा
क्रोध मान माया लोभरूप अग्नी तपामती खरतरमती पी-
तांबरादि मतांतरीयोने जहां देखो तहां सलगादिया देख-
नेमें आतेहै, और वृहत्तपागच्छादि चोराशी गच्छोंके पूर्व
बहुश्रुतोकी आचरित समाचारी रूप अमृत वेलकोंतो बा-
लके भस्म करडालीहै, अरू इर्षा मत्सर रूप जलका छं-
टकाव जहां तहां करके अपने मन कल्पित समाचारी (आ-
चरणा) रूप वृक्षोका उद्गम (उगाव) ठोर ठोर कर दि-
येहै, फिरभी कोइतो कहतेहै हम तपागच्छके संवेगीहै,
और कोइ कहतेहै हम खरतरगच्छके संवेगीहै, और को-
इकतो ऐसेही कहतेहैकि हमतो कोइभी गच्छकी लचपच
नही रखतेहै! हमारा तो सुधर्मही गच्छहै! इत्यादि ग-

च्छोंके नामरूप माया जालके छायारूप मंडपमें अपने अपनें कल्पित समाचारीके पेढ (वृक्ष) वढा रहेहै-वृद्धीकर रहेहैं, तथा कोइ कहतेहै हमतो सूत्रही मानतेहै पंचांगी नही मानतेहै, और कोइ कहे सूत्रसें मिलती पंचांगी मानतेहै, कोइ कहे हमतो सूत्र पंचांगीही अकेली मानतेहै, पण बहुश्रुतोंके प्रकणादि ग्रंथ नही मानतेहै, और कोइ कहे हमतो हमारे पूर्वजोकी परंपराही मानतेहै, फिर कोइ कहतेहै हमतो हमारे गुरु कहे तैसें करतेहै, इत्यादि अनेक अपने अपने मुखकी लचारीरूप माया जालमें फसाके भद्र (भोले) जीव रूपी मृगोंके प्राण हरण कर स्वेतांवर मार्गको बहोत पायमाल कर दिया अरू करते जातेहैं, तथापी तुंम स्वेतांवर संघ प्रमाद निद्रा अलग नही करतेहो? और तपा खरतरमती पीतांवरादि मतांतरीयोंसें मिलाय रखब श्री वृहत्तपागच्छादि चौराशी गच्छोंके पूर्वधर तथा पूर्व बहुश्रुतोंकी आचरित (सर्व जैन समुदायकी) समाचारीकों छेद भेद कर लुप्त करातेहो? तिसिसें तुमारा तपगच्छ खरतर गच्छादि स्वेतांवर संघका थोडे दिनोंमें सर्वथा नाशतो भगवतके वचनसें नही होनेका! परंतु नाम मात्रही वर्त्तमानमें रह गया! पीछेभी रह जायगा! देखो (८४) गच्छके श्रावक श्राविका द्विविध संघ वर्त्तमानमें विद्यमानहै, तिन्कोंभी जिस जिस गच्छके अधिपती आचार्यादिकका विच्छेद होनेसें तपा खरतर पीतांवरादि मतवादियोने अपने अपने मताधीन करके और सर्व गच्छोका नाम निशेषाकोंभी जलांजली दिलादीइहै.

तैसेही श्रीवृहत्तपागच्छ श्रीवृहत् खरतरगच्छ इन दोनुं गच्छके अधिपती आचार्यादि स्वेतांवर चतुर्विध संघ विद्य-

मान छतेभी इन दोनुं गच्छका नामके आश्रयसें पीतांबरादि मतवादियोंने अपनी अपनी मनकल्पित समाचारीयोंका वर्त्ताव कर उक्त दोनुं गच्छके पूर्व बहुश्रुतोंकी समाचारीकों तो जलांजली दिलादींहै, अब थोडेही कालमें दोनुं गच्छका नाम निवेशकोंभी श्रावकोंमें जलांजली दिलानेकी कोशिष कर रहेहै ? मेरी देखनीमें दोनों गच्छके अधिपती आचार्यादिकोंका जैसा मान सन्मानादिक श्रावकोंमेंथा तैसा मान सन्मानादिकका एक अंसभी वर्त्तमानमें रहा नहीं ! तिस्का कारण तुम अपनां प्रमाद पोपनेके लिये मतांतरीयोकी पक्षदारी कर मतांतरीयोंके अनुयायी वर्त्त रहेहो ? और पूर्व बहुश्रुतोंकी आचरित समाचारीकी हित शिक्षाकर सर्व जैन संघ समुदाइक समाचारिका एकत्र कर प्रवर्त्तन नही करतेहो यह तुमारा प्रमाद तुमकोंही खाताहे ? श्रीवृहत्तपागच्छ तथा श्रीवृहत् खरतर गच्छके अधिपती श्रीहीरसूरिजी महाराज प्रमुख आचार्योंको श्री अकबर बादशाहने म्याना पालखी आदि लवाजमा जैन धर्मकी उन्नतीके लिये समर्पण किये ! पिछे जब तक जैनाचार्य चारित्रका दावा रखतेथे और म्याना पालखी आदिमें बैठते नहीथे, तब तकतो जैन शासनकी उन्नतीके लिये शोभा तरीकसें छडी चम्मर आपदागीरी आदि लवाजमा जैन स्वेतांबर श्रीसंघकी अनुमतीसें जैनाचार्योंके आगे चलतेथे, और जबसें म्याना पालखी आदिमें बैठने लगे तब स्वेतांबर श्रीसंघने चारित्रका दावा उठाकर जैन स्वेतांबर धर्म मर्यादाकी रक्षाका दावाकी अनुमती सहित श्रीपूज्य पद देकर पधरामणी करने आदी लवाजमाका खर्चका बंदोबस्त कर जबतक जैन स्वेतांबर धर्मकी रक्षाका

दाया रख्खा तवतकतो (८४) गच्छके स्वेतांवर श्रीसंघमें वडा आदर सत्कार पूर्वक खर्चका निर्वाह चलाया, और जबसें प्रमाद वस होकर पीतांवरादि मतीयोंके पक्षदार वनकर जैन संघ समुदाइक स्वेतांवर संघ समाचारीकी रक्षाका अनादर करने लगे तबसेंही जैन स्वेतांवर संघकी हानी होते होते तो पीतांवरादि मतांतरीयोका संघ तो वढ गया, और स्वेतांबर संघतो न्होतही कम देशावरोंमें नाम मात्र रह गया! अवतो तुम दोनुं गच्छके अभिपती श्रीपूज्य स्वेतांवरादि साध्वादि एकत्र होके सोचो- कि स्वेतांवर संघका अभ्युदयथा तव तुमारा आदर सत्कारादि कैसा था? और वर्त्तमानमें आदर सत्कारकी कैसी दशाहै? तिस्कों अपनी दिलमें विचारकर अच्छी तरेह समजके कुच्छ प्रमाद निद्रासें अलग होके जैन स्वेतांवर संघकी रक्षाका दावा जाहिरमें प्रगट कर दोनुं गछके सर्व स्वेतांवर एकत्र होके जैसे वने तैसे पीतांवरादि मतवादियोंको हितशिक्षा देकर स्व स्व मनकल्पित पीतांवरादि समाचारिका त्याग करवा कर सर्व जैनसंघ समुदाय स्वेतांवर समाचारिका पीछा अभ्युदय करोंगे तवतो तुमारा टट्टु अच्छी तरेह चल्या करेगा? नहितो तुमारा टट्टु ठेकडेठे हो जायगा! हमतो चेतनी कर देतेहै अव तुमारी जैसी इच्छा!

पूर्वपक्षः—वंदिताका सूत्र पाठमें (सम्मदिठी देवा) चार निकायके सम्यक्त दृष्टी देवादिकोंके विषे प्रार्थना वहु मानादि करनेसें तुमारी श्रद्धा मलीन क्यों नहीं होवेगी? अपीतु होवेगीही. और देवादिकोंके पास समाधी बोधी मोक्षका कारणकीही याचना करते होतो मोक्ष कार्यकीही याचना क्यों नहीं करतेहो? क्योंकि मोक्षकार्यहैसो सर्व

आत्मिक धर्मसें अती उत्कृष्ट आत्मिक धर्महै उसकीही या-
चना करनी श्रेष्टहै.

उत्तरपक्षः—तुमारी प्रथमकी तर्कका समाधान तो प-
हिलेही श्रावकके आवश्यककी अर्थदीपीकामें श्रीरत्नसे-
खर सूरिजी बहुश्रुत महाराज कर गयेहैं, तिस्का पाठ ग्रंथ
गौरवके भयसें नही लिखाहै, परंतु तुम्को समजानेके लिये
उत्तर पक्षकी टीकाका भावार्थ लिखदर्शातेहैंकि "वो दे-
वता हमको मोक्षदेवेंगे इस वास्ते हम तिन्की प्रार्थना ब-
हुमान नही करतेहै, किंतु (समाधि बोधी आदि) आत्मिक
धर्म ध्यान करनेमें जो कदापी (सम्यक्तादिक आत्मिक
धर्ममें मलिनता रूप) विघ्न (अंतराय) आकर पडे तो
तिन्के (सम्यक्त मलिनतादिरूप) विघ्न दूर करतेहैं, अर्थात्
सम्यक्तादिक आत्मिक धर्ममें मलिनतादिक होनेका दोष
अपने अजाणमें लगता होय तो सम्यकदृष्टी देवताओंकी
प्रार्थना (याचना) दि बहु मानता करनेसें सम्यक्त सुद्धी
करने आदि बुद्धी देके तिन्का मलिनतादि होनेका दोष
निवर्त्तन करतेहै."

इस वास्ते प्रार्थना करतेहैकि-पूर्वश्रुत धारीयोने इस्का
आचरणसें और आगमसें कहनेसें ऐसे कारणमें कोइभी
दोष नहीहै, आवश्यक चूर्णिमें श्रीवज्रस्वामीके चरित्रमें
ऐसे कहाहै, वहां निकट अन्य पर्वत था वहां गये तहां
(अवग्रह याचनार्थ) देवताका कायोत्सर्ग करा सो देवदेवी
जाग्रित भये, अरु कहने लगेकि तुमने मेरेपर बडा अनुग्रह
करा, ऐसें कहके आज्ञा दीनी, तथा आवश्यक कायोत्सर्गे
निर्युक्तिमेंभी कहाहैकि चातुरमासी संवत्सरीके प्रतिक्रमणमें
(अवग्रह याचना निमित्त) क्षेत्र देवताका कायोत्सर्ग क-

रनी, केइक चातुर्मासीमें भुवन देवताका कायोत्सर्ग करते हैं; बृहद्भाष्यमेंभी (द्रव्यस्तव) जिनपूजाके अवसर कहा हैकि कायोत्सर्ग पारके और पंचपरमेष्टीको नमस्कार करके "वैयावच्च गराणं" वैयावृत्यादि करणेवाले यक्षदेवतादिककी थुइ कहे, तथा चौदहसें चुंवालीस (१४४४) प्रकणके कर्त्ता श्रीहरिभद्र सूरिजीनेभी (द्रव्यस्तव) जिनपूजाके अवसर "ललित विस्तरावृत्ति" में कहाहैकि (द्रव्यस्तव) चोथी थुइ वैयावृत्य करनेवाले देवताओंकी कहनी, इस वास्ते आत्मिकधर्मकी प्रार्थना करनेमें कोइभी अयुक्त नहीहै, "यह छैंतालिसमी गाथाका उत्तरार्द्धका पीछला भावार्थ है" इस उक्त गाथार्थमें आचार्य महाराजजीने यह आसय जतायाकि लोकोत्तर समदृष्टी देवोंकी याचना तथा बहुमानादि लौकिक (संसारिक) पौद्गलभावसें प्रार्थना याचना तथा बहुमानादि करे तबतो लोकोतर मिथ्यात्व लगनेसें सम्यक्त मलीन होय, परंतु लोकोत्तर देवोंकी लोकोत्तर अपौद्गलिक आत्मिक धर्मकी याचनादि करनेमें मिथ्यात्वका प्रसंगही नही, तो हमारा सम्यक्तमें, मिथ्या मलिनतादि दोष कहांसे प्राप्त होगा? जेकर सम्यक्तदृष्टी देवताओंकी याचनासेंही तुमको मिथ्यात्व लगताहै तबतो तुमको अवग्रह याचना निमित्त क्षेत्र भूवन देवादिकका कायोत्सर्गभी करना न चाहीये! क्योंकि क्षेत्रभूवन देवतादिकतो मिथ्यादृष्टीभी होतेहै तो मिथ्यादृष्टीयोकी याचना करनेमेंतो तुमको मिथ्यात्व नही लगता! और सम्यक् दृष्टीयोकी याचनामें मिथ्यात्व लगताहै! यहही बडी आश्चर्य बातहै!! फिर कहोगेकि अवग्रह (वस्ती) आदि चार प्रकारकी उपधी याचनातो समदृष्टी मिथ्यादृष्टी दो-

नुंकी कीयीजातीहै सोतो तीसराव्रतकी रक्षा करनेसें उलटी चारित्र शुद्धी होतीहै, परंतु मिथ्यात्व नही लगताहै. तो हम तुमको हीत शिक्षा करते हैकि मिथ्यादृष्टीयोंकी याचना करनेसें तिसराव्रतकी रक्षा होके चारित्र शुद्धी होतीहै, और मिथ्यात्व नही लगताहै, तो सम्यक्त दृष्टीयोंकी याचनासें समाधि बोधि अर्थात् ज्ञान दर्शन चारित्रकी शुद्धी क्यों नही होयगी ? जरुर होयगी. और सम्यक् दर्शनादिककी शुद्धी होनेसें मिथ्यात्व लगनेका हेतु प्रसंगही नहीतो मिथ्यात्वका लगनां कैसे होयगा ? यह दिलमें विचारना चाहिये. फिर कहोंगेकि-अवग्रहादि याचनातो मिथ्यादृष्टी या सम्यक्दृष्टी हर किसीके पास होशक्तिहै. परंतु समाधि बोधि आत्मिक धर्मकी याचनातो एक वीतराग सिवाय दूसरेकी पास होशक्ति नही, तो यहभी तुमारा कहनां मिथ्या प्रलापहै, क्योंकि एक वीतराग भगवंत सिवाय दूसरेकी पास समाधी बोधीकी याचनां नही करनी, ऐसा लेख कोन जैनशास्त्रमें पूर्वधर या बहुश्रुतोकाहै सो बताना चाहिये ? सोतो बताते नही. तो शास्त्रका लेख विना तुमारा मुखकी लवारी कोन सज्जन विद्वजन प्रमाण करेगा ? अपीतु कोइभी प्रमाण नही करेगा. और हमतो तुमको आवश्यक निर्युक्ति १ आवश्यक चूर्णि २ आवश्यकवृहद्वृत्ति ३ आदि पूर्वधर तथा बहुश्रुतोका अनेक वचन लेख सहित श्रुतास्थवर (पूर्वधर) कृत श्रीश्राद्ध प्रतिक्रमण वंदिता सूत्रकी साक्षिसें वीतराग भगवंत तथा सम्यक् दृष्टी देवता दोनुके पास समाधी बोधी याचनेका प्रगट लेख बतातेहै कि (समाहि मरणंच बोहि लाभोअ) अर्थात् रागद्वेष रहित भवांतकारी देहीका त्याग रूपतो स-

माधी मरण और बोधीजो सम्यक्त्व चारित्रादिक तिस्का लाभ हे वितरागदेव मेरेको भवोभव देना, इत्यादि वीत-राग देवके पास समाधि बोधि आत्मिकधर्मकी याचनाका लेखहै, तैसेही सम्यक्त्वदृष्टी देवताओके पासभी समाधि बोधि आत्मिकधर्मकी याचना करनेका प्रगट लेखहै, जेकर हठाग्रहसें कहोंगेकि वंदिता सूत्रका पाठतो हम नही मानते! तो आवश्यक निर्युक्ति आदिका पाठतो मानतेहोकि नही ! जेकर मानतेहो तो क्षेत्र भुवनादिक देवदेवीके पास अवग्रहादि याचनाके निमित्त तुम कायोत्सर्ग करते हो तो तुम तुमारे चारित्रादिककी समाधि बोधि आत्मिक धर्म कार्यके लिये याचना करतेहो? कि(पौद्गलिक) संसारिक कार्यके लिये अवग्रहादिककी याचना करतेहो ! जेकर कहोंगेकि हमतो संसारिक कार्यकेलिये करतेहै, तबतो तुमको लौकिक लोकोत्तर मिथ्यात्वादि पांचोआश्रवका पाप (दोष) लगके तुमारा भावस्तव (चारित्र)काही खंडन होजायगा, और जो कहोंगेकि हमतो चारित्ररूप आत्मिक धर्मकी (समाधि) जो चारित्रमें चित्त स्थिरतारूप, और बोधिजो चारित्र शुद्धीकी प्राप्तीके लिये अवग्रह याचनाका कायोत्सर्ग करते हैं तबतो तुमने तुमारे मुखसेंही वीतराग भगवंत सिवाय दूसरे देवतादिकके पासभी समाधी बोधीकी याचना करनी सिद्ध करदियी, तो वंदिता सूत्रका पाठ उत्थापन कर यह भव परभव विगाडकर वृथा संसार वधारनेकी क्यों उमेद रखतेहो ? अब तुमारी दूसरी तर्कका समाधान करते हैकि याचना दो प्रकारकी होतीहै, एकतो सम्यकभाव याचना, दूसरी मिथ्याभाव याचना, जो जिसिके पास जो चीज विद्यमान होय, और देनेकी उत्साह शक्ति होय तिसिके

पास उसी चीजकी याचना करनी वो प्रथम सम्यक् भाव याचना कहावे १ और जिस्के पास जो चीज विद्यमान न होय, तब देनेकी उत्साह शक्ति तो उस्को कहांसे होय! उसीके पास उसी चीजकी याचना करनी वो दूसरी मिथ्याभाव याचना कहावे २ जैसे राज्य लक्ष्मिवान दातार पुरुषोंके पास राज्य लक्ष्मिकी याचना करे तबतो राज्यलक्ष्मि मिलनेकी संभव हो सके, परंतु दरिद्र कृपणके पास राज्य लक्ष्मिकी याचना करे तो कहांसे मिले? तैसे मोक्षकार्यकी प्राप्तिवंत वीतराग भगवंतके पास मोक्षकार्यकी याचना करनी यहतो सम्यक् भाव याचनाहै, और संसारि सरागीयोंके पास मोक्षकार्यकी याचना करनी सो मिथ्या भाव याचनाहै इसी वास्ते जिनशासन भक्त शासनदेवता आपही समाधि बोधिवंत होतेहै, तिन्के पास समाधि बोधिकी याचनाकरनी सोतो सम्यक्भाव याचना है, और अती उत्कृष्ट आत्मिकधर्म मोक्षकार्य तिन्के प्रगटमान हुवा नहीं तो तिस्की पास मोक्षकार्यकी याचनाकरनी सो मिथ्याभाव याचनाहै. ऐसी मिथ्याभाव याचना शासनभक्त देवतायोंकी करनेसें मिथ्यात्वही लगता है.इसवास्ते वीतराग सिवाय दूसरेके पास मोक्षकार्यकी याचना नहीं करते है.

पूर्वपक्षः--सम्यक्त्वदृष्टी देवताओंके पास आत्मिक धर्मकी आशा करके यह लोकार्थतो समाधि चित्त स्थिरताकी याचना करनी, और परलोकमें जैनधर्म प्राप्तीकी याचना करनी तो यह प्रत्यक्ष नियाणा करना हुवा, और नियाणा करना दशाश्रुतस्कंधादि जैनशास्त्रमें निषेध किया है. तथा सूर्योदय लिखने लिखानेवालेभी कल्पनिर्युक्ति निदानपणासें सर्व देवदेवीकी प्रार्थना (याचना)

को सावद्य लिखतेहैं, और तुम समाधि बोधि याचनाकों एकांत निर्दोष नियाणा (निदान) रहित किस न्यायसें कहते हो सो पूर्वबहुश्रुतोकी सम्मति सहित लिख दर्शानी चाहिये ?

उत्तरपक्षः—लौकिक (पौद्गलिक) संसारिक आशा (वांच्छा) सें लोकोत्तर सम्यक्त्वदृष्टी देवताओकी यहलोक परलोकार्थं याचना करे तवतो वह नियाणा कहलाताहै, और नियाणाका फलकों प्राप्त होताहै, परंतु लोकोत्तर आत्मिक धर्मकी आशासें लोकोत्तर देवोकी समाधि बोधि आदि आत्मिक धर्मकी याचना यहलोकार्थ परलोकार्थ करनेसें वो नियाणा नही कहलाता है, और नियाणाका फलकी प्राप्तीभी नही होशक्ति है, क्योंकि आत्मिक धर्मके आशा (वांच्छा) की समाधि बोधि याचनामें (पौद्गलिक) संसारिक कामभोगादिककी आशा वांच्छा नहीहै. यहही अनिदानपणा आशा न रखनी कल्पनिर्युक्ति गाथामें प्रशस्त (प्रशंसनिय) कही है, तथाहि (इह परलोग णिमित्तं अवितिथ्य गरत्त चरिम देहत्तं ॥ सव्वथ्थेसु भगवया अणिदाणत्तं पसथ्थंतु) अर्थात् इह लोकमें चक्रवर्त्यादि भोग और परलोकमें इंद्रसामानिकादि पद मिलनेके लिये फेर तिर्थंकर पद और तद्भव मोक्षगामी होनेके लियेभी रागद्वेष भावकी आशा न करनी चाहिये. क्योंकि वीतराग भगवानने सर्व वस्तुओमें अनिदानपणा (रागद्वेष सहित पौद्गलिक भावकी आशा न रखनी) प्रशस्त (प्रशंसनिय) कहीहै. ॥ १ ॥ इस कल्पनिर्युक्ति गाथामें तीर्थंकर पद तथा तद्भव मोक्षगामी होनेकी आशा (वांच्छा) वरजी है सो सराग भावसें (पौद्गलिक) संसारिक सुखकी आशा (वांच्छा) सें वरजिहै, कारणकि समवसरणादिक ऋद्धिका पौद्गलिक

सुख भोगवके फेर तद्भव मोक्ष होनातो यह पद प्राप्त होना ठीक है, तथा संसारमें शरिर मानसादिक दुख भोगवणापडे वास्ते चरमदेह (तद्भव मोक्ष) हो जाय तो ठीक. इत्यादि अभिसंग (सराग) भावकी आशासेंभी तीर्थंकरपद तथा तद्भव मोक्ष होता नहीं, इसिसें निस्संगभाव वीतराग भावकी आशा करनी यहही मोक्ष हेतु है, और असी वीतरागभाव आत्मिकभावकी आशा वांच्छाकरनी सो प्रशस्तही कहाती है, परंतु अप्रशस्त नही कहाती है. यथा (ठाणस्स पाविउ कामस्स) अर्थात् मोक्ष पामनेकी इच्छाहै जिनोके असी आत्मिक (वीतराग) भावकी आशातो वीतरागभी करतेहै, और श्री ज्ञातासूत्र प्रमुख जैनसिद्धांतोमें वीसस्थानक पदकी आराधना करनेसें तीर्थंकरपद प्राप्ती होनेका नियम बताया, तथा अंतगडे दशांग प्रमुखमें तप करनेसें कर्म क्षय करनेका नियम बताया तो तीर्थंकरपद तथा कर्मक्षय करनेका आलंबन किये विगर कौन भव्य प्राणी तिसपदकी आराधना तथा तप प्रमुख करनी अंगिकार करेगा? अपितु निर्भिसंग (वीतराग) भावकी आशा करे विना (कोइभी धर्मकरणी) विण आलंबन होशक्ति नही. और आलंबन निर्पक्ष द्रव्य क्रिया समुर्छिम प्राय निश्चयसें अल्प फलकी देनेवाली जैनशास्त्रोमें कहीहै, वास्ते निरभिसंग (आत्मिक) भावकी आशा (वांच्छा) कर समाधि बोधि आदि आत्मिक धर्मकी समदृष्टी देवोंके पास याचनी करनेमें नियाणाका एकभी लक्षण नही मिलताहै—यदुक्तं चैत्यवंदन बृहद्भाष्ये (जंसंसार निमित्तं पणिहाणं तंख्खु तस्सइ नियाणं ॥ तंतिविहं इयलोए परलोए काम भोगेसु ८५६) अर्थात् संसार निमित्त प्रणिधान मन

वचन कायाका एकत्र करनां वह निश्चे नियाणा (निदान) कहलाता है, वो तीन प्रकारका है, एक तो यह लोक, दूसरा परलोक, तिसरा कामभोग विषयिक ॥ ८५६ ॥ (सोहग्ग रज्ज वल रूव संपया माणुसंमि लोगंमि ॥ जंपच्छिज्जइ धम्माइहलोय नियाण मेयंतु ८५७) अर्थात् इस धर्मकर्णिके प्रभावसें सौभाग्य राज्य वल रुप संपदा मेरेकों मनुष्य लोकमें होना (ऐसी याचनाकरे) वो यहलोक नियाणा कहलाताहै ८५७ ॥ (वेमाणि याइरिद्धी इंद्त्ताईण पथ्थणा जाओ ॥ परलोय नियाण मिणं परिहरियव्वं पयत्तेण ८५८) अर्थात् इंद्रादिक वैमानिक देवताओकी रिद्धी इस धर्मके प्रभावसें होना (ऐसी जिस्कों प्रार्थना) वह परलोक संबंधी नियाणा कहावे, तिस्कों वडा यत्नसें दूर करनां. ८५८ ॥ (जोपुण सुकय सुधम्मो पच्छा मग्गइ भवे भवे भोत्तु ॥ सद्दाइ काम भोगे भोग नियाणं इमं भणियं ८५९) अर्थात् जो फेर सुकृत्य सुधर्म करके पीछे शब्दादिक काम भोग भवोभवमें मागे वो काम भोग नियाणा कहावे ८५९ (तहजं कोवाइसया वह वंधण मारणाइ पणिहाणं ॥ दीवायण पमुहाणं तंपि नियाणं महापावं ८६०) अर्थात् तैसेही धिपायन प्रमुख ऋषीयोंकी परे कोपादिकजो क्रोध मान माया लोभादिकके अतिसय वस होके ताडन वंधन मारणादिकका प्रणिधान त्रिकण योग करे वो भी महा पापकारी नियाणा जाणना ८६० ॥ इन उक्त नियाणाका लक्षण सम्यक्त्वदर्शी देवताओकी समाधि वोधि आत्मिक याचनामें एकभी नहीहै, तो सूर्योदय लिखणे लिखाणेवाले नियाणाका जूठा कलंक देके एकांत निर्वद्य याचनाकों सावद्य ठहराते है. यह कौनसी अन्याय ?

तीर्थंकरादिकके पास आत्मिकधर्मकी याचना करनेसें (आत्मिक निश्चय धर्म प्रगट होनेका संभव शिवाय) अप्रशस्त दोष लगनेका संभव नहीं होताहै. जेकर हठाग्रहसें कहोगेकि "वीतराग तीर्थंकरादिकके पास याचना करनी हैसो नीचा दरज्जाकी है, तो देवोंके पास याचना करनीं सो तो यथार्थ सावद्यही है" यह कहनां लिखनां तुमारा महामिथ्या भावका हैकि वीतराग तीर्थंकरादिकके पास (समाधि बोधि) आत्मिक धर्मकी याचना बडे बडे महाऋषी गौतम गणधरादिक करते करातेथे तो तुमारे कहेवे लिखवे मुजवतो वो महापुरुषभी नींचा दरज्जाके भये! नहीं नहीं वो महापुरुष कदापि नीचा दरजाके नहीं कहे जायगें, किंतु तुमही नीचा दरजाके कहे जाओगें! साधुनें अपनेसें गुणाधिक और नीचा दरजेकी साधवीके पास और श्रावक अपनेसे गुणाधिक अरु नीचा दरजेकी श्राविकाके पास (समाधि) आत्मिक धर्मकी चित स्थिरता और (बोधि) आत्मिक जैनधर्मकी प्राप्तीकी याचना अपनेसें उक्त नीचा दरजा वालोंके पास याचना (मांगना) करनेसें तो तुम उंच्च दरजेके साधु वन जातेहो! और अपनेसें उंच्च दरज्जावाले जो वीतराग तीर्थंकरादिक और सम्यक् दृष्टी देवतादिकके पास (समाधि बोधि) याचनेसें नीचा दरजाके साधु वन जाते हो! वाहजी वाह!! "जैसी तुमारी करणी तैसी पार उतरणी" परंतु वीतराग तथा समदृष्टी देवतादिकके पास (समाधि बोधि) आत्मिक धर्मकी याचना करनेवाले पुरुषतो कदापी सावद्य कार्यके कर्त्ता तथा नींचा दरजावाले कहेजाते नहीं, किंतु वीतराग तथा समदृष्टी देवतादिकोंके पास (समाधि बोधि) आत्मिक ध-

मकी याचना (मांगना) करनी छोडके नित्य सरागी वीतरागी देवोके पास (पौद्गलिक) संसारिक याचनाके करने वाले तथा (भावस्तव) चारित्रानुष्टानमें निरंतर (द्रव्यपूजा) द्रव्यस्तव (स्तोत्रस्तुति) चोथी थुइके करनेवाले यहदोनुं मिथ्याभावके करनेवालेही सावद्यकर्मि और नीचा दरजा वाले जैनशास्त्रोके न्यायसें कहे जातेहे.

पूर्वपक्षः—कितनेक मतांतर वादी वंदितासूत्रकी त्रैतालीश गाथा कहनेवाले अपने पडावश्यक समाचारी टबामें लिखतेहेकि (तस्सधम्मस्स) इस गाथामें सत्य मंगल होचूका, तिसिसें वंदिता मूलसूत्र इतनाही है, और इसी गाथाके आगे " जावंति चेइआइं " आदि कितनीक गाथा हे सो पीछेकी करी हुइहे, मूलसूत्र गणधरका किया इतनाही है फीर जो सूत्रमें मिले वोही प्रमाण " सम्मदिठी देवा दितु समाहिंच वोहिंच " इतनां सूत्रसें नही मिलता तिसिसें यह सावद्य जानते है. अर्थात् वंदिताका उक्तपाठकी भाषा सावद्य (पापसहित) जानतेहे, कारणकि देवता वोधि देनेका उपक्रम करे तहां सावद्यहे, जैसे पोटिल देवताने तेतली प्रधानकों मानसीक गाढ पीडा उपजाके प्रतिवोध दिया, इत्यादि दष्टांत व्होत ठीकाने हे. और श्री वीतरागकों " आरुग्ग वोहिलाभं तथा समाहिवर मुत्तमं दितु " ऐसा कहना यह व्यवहार भाषा निर्वद्यजाननी वास्ते एकपद छोडके दूसरापद कहेतो विवाद होयकि एक पद छोड और पद कहनां यह कौनसा ज्ञान तस्मात् मूल गणधरका कराहुवा कहेतां कोइ कुच्छ न कहे, फिर इन गाथाओंके करनेवालेने चत्तारि मंगलं इरियावहि यह दोनु पाठ कहनेके दूर किया, और अविरती देवदेवीकी स्तुति

स्थापिहै, ऐसी ऐसी कुयुक्तियां कर आगेकी सात गाथ उत्थापन करतेहै, तथा सूर्योदय लिखने लिखानेवाले पृ १२ पंक्ति ६ सें लिखते हैकि चूनिलाल कहे-वंदितासूत्रम देवोथी याचना करवानी कहीछे ते केम? सूरिजी-वंदि सूत्र पीस्तालीसमां नथी, पाछलथी कोइ श्रुतस्थिवरें रच् छे. इत्यादि यावत पृष्ट १५ पंक्ति १२ से पृष्ट १६ तक लिखा हैकि "वंदितु सूत्र गणधर रचित नथी, नके कोइ पूर्वधर रचित छे, किंतु कोइ श्रुतस्थिवरनुं रचेलुं छे." इत्यादि सर्व आलजाल जैनशास्त्र विपरित लिखके अपनं मतिकल्पनासें श्री वंदिता सूत्रकी ४७ मी गाथाका तिसरापद "सम्मदिठी देवा" इस पदकों सर्वथा उत्थाप करनेकों "सम्मत्तसय सुद्धिमू" और ठोरकापद उक्तपदक ठीकाने कहनेका सर्वथा स्थापन करनेकों जैनशास्त्र विपरित युक्तियां करीहै. इन उक्त दोनुं मतांतरीयोमें उप श्री सात गाथा उत्थापन करनेवाले मतांतरी वंदिता सूत्रके सर्वथा उत्थापक हैकि एक पदका फेरफार करनेवाला सर्वथा उत्थापक है?

उत्तरपक्षः--लौकिकोक्तिमें तृणका चोर सो पूलाका चोर कहलाताहै, तैसेही जैनशास्त्रमें जिनवचन तथा जैनसूत्रका एक काना मात्र उत्थापने वालेकों अनंत संसारी लिखाहै, तो वंदितासूत्रकी सात गाथाका उत्थापककी तथा एक पदका फेरफार करनेवालेकी संसार वृद्धिकी गति भांतितो ज्ञानी महाराजही जानतेहै; हमकुच्छ नही कह शक्ते है. परंतु जो "कणकी चोरी करेगा वो मणकी चोरीभी करेगा" और मणकी चोरी करेगा वो मणांबंधकी चोरी करेगा, इत्यादि उत्तरोत्तर महाचोरकी गिणतीमें गिना

जायगा. तैसेही गणधर तथा श्रुत स्थिवर कृत सूत्रपदमें अपनी मतिकल्पनाकी संका कर कोइ किसीने एक पदका फेरफार कियातो कोइ किसिने सात गाथाका उत्थापन किया. एक पदका फेरफार करनेवाला और सात गाथाका उत्थापन करनेवाला दोनु पूर्ण सूत्रका उत्थापक है, कहाहैकि हजारो मण उत्तम रसवतीमें एक विंदू मात्र झेर पड गया होय तो सर्व भोजन विष सदृश कहा जाता है, तैसेही सूत्रका एक पद तथा सात गाथा मतांतरियोके अपनी मतिकल्पनासें गणधरादि श्रुतधरकृत नही, तिसिसें मानने योग नहि, तो प्रथमकी (४३) गाथाभी तिन्के मानने योग्य नहीं है कि कोइ किसिने एकपद तथा उपरकी सात गाथा सूत्रमें प्रक्षेप कर दीइ, तैसे प्रथमकी (४३) गाथामेंसी कोइ किसिने कोइ गाथा प्रक्षेप करादि होयगी, तो गणधरादि कृत कैसे मानी जायगी. जेकर कहोगे उपाशक दशांगादि गणधरादि श्रुतधर कृत सूत्रोसें मिले वो गाथाही हमतो प्रमाण करते है तो वंदिता सूत्रकी छठी गाथा सहित नवमी गाथासें तेतीस गाथा तक अर्थात् उक्त (२६) गाथा तो उपाशक दशांग सूत्रसें मिलती है असा तुम मानते हो? और तेंतालीसमी, ओगणपचासमी, अरु पचासमी, यह तीन गाथा साधु प्रतिक्रमण सूत्र (पगामसिझाय) की है. अरु चुम्मालिस, पिस्तालिसमी, गाथा चैत्यवंदन सूत्रकी है, तथा छेतालीस, अडतालीसमी गाथा, आवश्यक निर्युक्तिकी है, तैसेही (४७) मी गाथाका आद्य दो पद तो पाक्षिक सूत्रसें मिलता है, और तिसरा एकही पद तैसेही चोथाभी एकहीपद तथा तिसरा चोथा दोनु संयुक्त पद श्रीभगवती आवश्यक सू-

आदि श्राद्धप्रतिक्रमण सूत्रसें मिलते है, इसमुजब तुमारी मान्य करी हुइ (४३) गाथाओमेंसें प्रथमकी (२६) गाथायों तो श्रीगणधर कृत सूत्रसें तथा (४३)मी गाथासहित उपरकी सातगाथा श्रुतस्थिविरकृतसूत्रोसें मिलतीहै परंतु (४३) गाथा उपरकी सात गाथाओ प्रक्षेप (पीछेकी) करी हुइ है, ऐसा कोइ जैन सूत्र तथा वहुश्रुतोके ग्रंथोमें लेख नहीं है. तो भी तुम प्रक्षेप (पीछेकी) करी हुइ मानते हो तो उपर लिखी हुइ सर्व (३४) गाथा उपरांत वाकी रही ४३ गाथा मांहेली (९) गाथाओ कौन गणधरकृत सूत्रसें मि· लती मानतेहो ? अर्थात् अर्थांस भेदसें जैसे सर्व सूत्र मि· लते है, परंतु रचना भेदसें परस्पर कोइ सूत्र कोइ सूत्रसें नहीं मिलता है, रचना भेदसें कुच्छ ने कुच्छ फेरफार ही होताहै तैसे वंदितासूत्रकी (४३) गाथाकी (९)गाथाओ रचना भेद सें कोइ गणधर कृत सूत्रसें नहीं मिलती है, सोतो तुम मानते हो ! और अर्थांस भेद तथा रचना भेद दोनुंसें उपरकी सात गाथा मिलती है तिन्कों तुम नहीं मानते हो! यहही तुमारी बडी भूल है. जेकर गणधर कृत सूत्र मानते हो तो यह वंदिता सूत्र भी गणधर कृतही है, क्यों कि जैनशास्त्रोके न्यायसें गणधर दो प्रकार के कहे जाते है, एकतो त्रिपद लब्धि के धारक जो द्वादशांग रचनाके करनेवाले मुख्य गौतमादि गणधर, दूसरे गण (गच्छ) के धारक श्रुतस्थविरादिक तीर्थंकरोके हाथ दिक्षित तथा श्रीभद्रबाहु आदि जो द्वादशांगसें उद्धारकर वारा उपांगादि अध्रुवश्रुत उत्तराध्ययनादि सूत्रोके रचनेवाले श्रुतस्थिविरभी गणधर कहे जाते है, कारणकि श्रीमहावीरस्वामीजीके हाथ दीक्षित श्रुतस्थविर [पूर्वधर] महारा·

जजीने उत्तराध्ययन और आवश्यक सूत्रकी रचना करीहै, तिन्हीं श्रुतस्थविर महाजजीने श्राद्धप्रतिक्रमण [वंदिता] सूत्रकी भी रचना करी है, और श्रुत स्थविरोंका किया आवश्यक मुख्य गौतमादि गणधरभी प्रमाणकर उसीमुज ब आवश्यक क्रिया करते है, तो तुम्कों भी उसी मुजब मान्य करना चाहियें ? और श्रुतस्थविरोंके किये सूत्र तुमारे प्रमाण नही तो उत्तराध्ययन और आवश्यक मूलसूत्रादि तथा बार उपांगादि सर्व जैनसूत्र तुमारे प्रमाण करने योग्य रहे नहीं, क्योंकि द्वादशांग सिवाय सर्व जैन सूत्र श्रुतस्थविर (पूर्वधर) केही करे हुये हैं, मूल गणधरो के करे हुये नहीहै. जेकर कहोगेकि " हमतो श्रुतस्थविर (पूर्वधर) के किये उत्तराध्ययनादि सूत्र मूल गणधरके किये मुजबही मान्य करतेहै, परंतु (सम्मदिठी देवा दिंतु समाहिंच बोहिंच) यह सावद्य भाषा कोइ सूत्रसें मिलती नहीं वास्तेयह ४७ मी गाथाश्रुतस्थविर (पूर्वधर) कृत नहीहै" यहकहना तुमारा तुमारी अज्ञताकों प्रगटकरतेहै! जो समदृष्टी देवताओ केपास व्यवहारभाषासें आत्मिकधर्मकी याचनाकों तुम सावद्य पापकारीभाषा मानोंगे तयतो "आरुग्ग बोहि लाभं समाहि वरमुत्तमं दिंतु " यह व्यवहारभाषा एक आवश्यकसूत्र सिवाय और कोइ सूत्रमें मिलती नही, वास्ते व्यवहारभाषासें श्री वीतरागके पास याचना करनेमी, तुम्कों सावद्य पापकारी भाषाही माननी पडेगी, और वीतरागके पास आत्मिकधर्म याचना व्यवहारकों पापकारी मानोंगे तो तुमकों तुमारी श्रद्धामुजब आवश्यकसूत्रभी श्रुतस्थविर (पूर्वधर)का किया नहीं मानना पडेगा, और जो कदाच आवश्यकसूत्रकों श्रुतस्थविरका किया निर्वद्य (पापरहित)

व्यतिरेकेण शेषाणां निर्युक्त्य भावा दौपपातिकाद्यंगानांच
चूर्णि रण्य भावादनार्षत्व प्रसंग स्तस्मान्न किंचिदेतत् श्राद्ध
प्रतिक्रमणसूत्रस्य च विक्रम ११८३ वर्षे श्रीविजयसिंहसूरि
श्रीजिनदेवसूरिकृते चूर्णि भाष्येपि सूत्र वृत्तयश्च वह्व अत
श्रुतस्थविर कृतत्वेन सर्वातिचार विशोधकत्वेन च श्राव
कै रेतदुपादयमेव साधुभिः स्व प्रतिक्रमण सूत्रमिव एवं
सति ये स्वकदाग्रह मात्रा भिनिविष्ट दृष्टयः पश्चात्येन के
नचित्कृतं सर्वथानुपादेय मिदमिति ब्रुवते नाविज्ञ स्तेषां
कागतिः सर्वज्ञ प्रणित प्राचीन स्थविरा चरितः सम्यग
मार्गस्योपमर्दनात् तदुक्तं रन्नोआणाभंगे इकच्चिअनिग्गहो ह
वईलोए सव्वन्नाणाभंगे अणंतसोनिग्गहं लहई ॥ १ ॥

भावार्थः—तैसेही श्रीरत्नशेखरसूरि पूज्यश्री श्राद्ध प्र-
तिक्रमण सूत्रवृत्तिमें कहतेहै ॥ वादि कहताहैकि-यह प्र-
तिक्रमणसूत्र (वंदितासूत्र) किस्ने किया? आचार्य कहते
हैकि-जैसे दूसरा प्रतिक्रमणसूत्र (आवश्यकसूत्र) करेमी-
भंते लोगस्स वंदन (खामणा) दि श्रुतस्थविरजीने किये
है, तैसे श्राद्धप्रतिक्रमण (वंदिता) सूत्रभी श्रुतस्थविर (पू-
र्वधर) का किया हुवाहै; तैसेही आवश्यक वृहद्वृत्तिमें
(अख्खरसन्नी) इस गाथाका व्याख्यानमें कहाहैकि आचारां-
गादि अंगप्रविष्ट जो अंग बाहिर सूत्रजो आवश्यकादि (उ-
पांगादि) सूत्र श्रुतस्थविरोंके करे हुयेहै. फिर वादि प्रश्न
करताहै कि—श्राद्ध प्रतिक्रमण (वंदिता) सूत्र (आर्षत्वं)
श्रुतस्थविर कृतहै तो तिस्के निर्युक्ति भाष्यादि क्यों नही
है? आचार्य कहतेहैकि—आवश्यक दशवैकालिकादि दश
शास्त्र (सूत्र) विगर और सूत्रोंकी निर्युक्तिका अभावहै,
और उववाइआदि उपांग तथा कितनेक अंगोकी चूर्णिका

भी अभावहै, तो इन उक्त सूत्रोकाभी अनार्षत्व प्रसंग होयगा. तिसीसें तुमारा कहना अयोग्यहै, और इस श्राद्धप्रतिक्रमण (वंदित्ता) सूत्रके तो विक्रम संवत (११८३) वर्षमें श्रीविजयसिंहसूरि और श्रीजिनदेवसूरिजीके करे हुये अनुक्रमसें चूर्णि भाष्यभीहै, और इस्का सूत्रकी वृत्ति(टीका) तो बहोतहीहै, इस कारणसें श्रुतस्थिविरकृतपणा करके सर्व अतिचारकी शुद्धीके लिये जैसें साधुवोंकों अपना प्रतिक्रमणसूत्र (पगामसिझाय) अंगिकार करने योग्यहै, तैसे श्रावकोंकोंभी यह वंदितासूत्र अंगिकार करने योग्यही है, ऐसे हेतु युक्ति सूत्र साक्षि सिद्धहै, तोभी अपना कदाग्रहमात्रमें दृष्टीहै जिनोकी, अर्थात् जाणके जूठ बोलणेवाले ऐसे अभिनिवेशक मिथ्यादृष्टी कहतेहैकि यह श्राद्ध प्रतिक्रमण (वंदिता) सूत्र पीछाडीसें कोइकने कियाहै, वास्ते सर्वथा अंगिकार करने योग्य नहीहै, "न मालुम ऐसा बोलतेहै तिनोकी क्या गती होयगी" सर्वज्ञका कहा हुवा प्राचीन स्थिविरोका आचिर्ण (अंगिकार) किया हुवा अच्छामार्गका उपमर्दन (नाश) करनेसें यहही वात सिद्धांतमें कहीहै कि राजाकी आज्ञा भंग करनेसें तो एकवार लोकमेंही निग्रह (दंड) पाताहै, और सर्वज्ञकी आज्ञा भंग करनेसें अनंत जन्म मरणरूप निग्रह (दंड) जीव पातेहै१

अब विचार करोकि—इत्यादी उक्त पूर्व बहुश्रुत गीतार्थलो अपने कृतिके ग्रंथोमें आवश्यक सूत्रके और वंदिता सूत्र दोनुके कर्त्ता श्रुत स्थिविर (पूर्वधर) की करी हुइ पचास गाथाकी वृत्ति (टीका) लिखते है, और तीन तथा चार चूलिका स्तुति देववंदनके उत्थापक लुंपक १ पार्श्वचंद्र २ अंचलमती ३ आदि मतांतरी अपनी मनकल्पनासें

(४३) गाथाका पूर्ण वंदितासूत्र मानते है, सो चूर्णि और भाष्यादिकसें विरुद्ध हैकि चूर्णिकारादि (तस्स धम्मस्स) इस (४३) मी गाथाका पर्यवसान अंत पद करीके प्रतिक्रमण निर्गमन तिसिका उत्तरोत्तर वृद्धि निमित्ते इष्टदेवताका नमस्कार रुप प्रतिक्रमण आलोचन अवसान (अंत) मंगल व्याख्यान किया और (एवमहं) आलोइय निंदिय इस [५०] मी गाथाका पर्यवसान (अंत) पद करीके उत्तरोत्तर धर्म वृद्धर्थे अवसान (अंत) मंगल व्याख्यान किया तिसिसें इन मतांतरीयोका मतका निकालके पहिलेही इस वंदिता सूत्रकी चुर्ण्यादिकमें वंदितासूत्र पढनेकी विधी लिखी है, तिसी मुजब वर्त्तमानमें श्रावकादि कहते है; परंतु साधुवत् चत्तारि मंगल और इरियावहि कहनेका अधिकार श्रावककों मूलसें नही है, वास्ते उक्त मतांतरीयोकी मन कल्पित कुयुक्तियां सर्वथा मिथ्या प्रलाप मात्र है, तथा वर्त्तमानके सूर्यांदय लिखने लिखानेवाले मतांतरी वंदिता सूत्रकों गणधर तथा पूर्वधर रचित नही मानते है, तो श्रुतस्थविर रचित क्यों लिखते है? और जो श्रुतास्थविर रचित लिखते है तो ठाणांग समवायांग सूत्रका संपूर्ण ज्ञान पूर्वधर विगर नही हो शक्ता है, और ठाणांग समवायांग सूत्रका पूर्ण ज्ञानवानकों ही श्रुतास्थविर कहा जाता है, वास्ते इन्के हस्त लेखसेंही पूर्वधर (गणधर) का रचा हुवा सिद्ध होता है. "वंदितुसूत्र पीस्तालीस में नही है पीछेसें कोइ श्रुतस्थविरने रचा है,१छ आवश्यकका पडिकमण आवश्यकमां नही है २ आवश्यक पंचांगिका लाख ग्रंथ है तिस्मे वंदितु नहीं है;३पचास गाथाका वंदिता तुमारा घरमें है दूसरे के घरमें तो तेतालीश गाथाकाहे ॥४॥

ललित विस्तरासें देव याचना संग्रहित करी है ५ तेंता-लीश गाथाओके पीछे जो गाथायो जोडणेमें आइ है सो ललित विस्ताराके पीछें की है ६ " इत्यादि इन्का लेख लिखना सर्व प्रमाण विनाका सर्वथा अप्रमाणही है. कारण कि सूर्योदय पृष्ठ १५ पंक्ति २ में लिखा है कि "हीर प्रश्न मैं शंका करवामां आवी छे के ए ग्रंथ कुंभारनो बनावेलो छे " इस हस्त लेखसें प्रथम यह सिद्ध होता है कि श्री महावीर भगवंतका स्वहस्ते प्रतिबोधक कुंभकार ज्ञातिय सकडाल श्रावक शिवाय जैन मतमें आज पर्यंत कोइ प्रसिद्ध कुंभार श्रावक हुवा नही, और "हीरप्रश्नमें" शंका करनेमें आइके वंदित्ता सूत्र कुंभारका बनाया हुवा है,इसी शंकाका श्रीहीरसूरिजीने श्रीपंचाशकवृत्ति शाक्षीसें समाधान कियाकि कुंभारका किया हुवा नहीं है, किंतु ऋषिभाषित अर्थात् अतिशय ज्ञानी श्रुतस्थविर (पूर्वधर) का किया हुवा है, यह उक्त शंका और समाधान दोनु श्री महाविर भगवंत विद्यमान अवसरका संभवे है, वास्तेश्री वंदिता सूत्र श्रीमहावीर भगवंतका हस्त दिक्षित श्रुतस्थविरका रचा हुवाकों " पीछेसें कोइका रचा हुवा.. लिख देना " यह अयोग्यहै, क्योंकि पीछेसें कोइने रचाहै ! तो आणंद कामदेवादिक भगवंतके श्रावक कोनसा सूत्र भणके प्रतिक्रमण करतेथे ? कहोंगेकि—उपासकदशा पढके करते थे. तो आवश्यक और दशवैकालिकके चार अध्ययन शिवाय और सूत्र भणणे पढणेका श्रावककों अधिकार नहीं तो सप्तमांगके पाठ पढके प्रतिक्रमण कैसे करते थे ? कहोंगे कि—आवश्यक निर्युक्ति तथा चूर्णि पढके करते थे, तो यह दोनुं भगवंतजीके पीछे भद्रबाहु तथा देवर्द्धि

र्णि क्षमा श्रमण रचित है? हठाग्रह करके कहोंगेकि-प्रथम गणधर कृत आवश्यक निर्युक्ति चूर्णिसें भद्रबाहु देवर्द्धि गणिजि रची है. तो पहीलेही श्रुतस्थविर महाराजजीने साधु श्रावक दोनुका आवश्यक सूत्र रचन करा तिस्कों निर्युक्तिमें साधु प्रतिक्रमण आवश्यक योग्य साधु प्रतिक्रमण सूत्र स्पर्शक निर्युक्ति और श्रावक प्रतिक्रमण आवश्यक योग्य श्रावक प्रतिक्रमण सूत्र स्पर्शक निर्युक्ति गाथाओ लिखी है, और जिस गाथायोका सूत्रसेंही चरितार्थ होजाता है, निर्युक्तिका मुतलव नही, तिनसूत्र गाथायोकों निर्युक्तिमें नही लीखी है. वास्ते चूर्णिकार वृत्तिकारभी सूत्र स्पर्शक निर्युक्तिकाही अर्थ लिखते चले आते है. जेकर तो भी हठाग्रहसें आवश्यक निर्युक्ति ओर उपाशक दशांगादि ग्रंथोसें संग्रहकर वंदितु शब्दादि पचास गाथा कोइ श्रुत स्थविरने पिछेसें रचना करी मानोंगे तोभी नंदीसूत्रकी रचनासें वंदिता सूत्रकी रचना पहेली भइ तो अवश्य तुमकों माननीही पडेगी. क्योंकि नंदीसूत्र देवर्द्धिगणिजीका रचा हुवा है, और तिस्में अंगोपांगादि सूत्रकी गणनामें (इसिभासियाइं) अर्थात् ऋषि भाषित आदि श्रुत स्थविर रचित वंदिता सूत्रादिककी गणना करी है? जेकर कहोंगे "वंदिता सूत्रका" नंदि सूत्रमें नाम नही. तो पाक्षिकसूत्रकाभी नाम नही? जब पाक्षिकसूत्रकी रचना भइ मानो! तब वंदितासूत्रकी भी रचना भइ मानो? जो कि पाक्षिकसूत्रकी पंचांगि आवश्यक सूत्रसें जूदी है? तैसे वंदितासूत्रकीभी पंचांगी आवश्यकसूत्रसें जूदीहै? जो पाक्षिक सूत्रकी रचना भगवंतके विद्यमान छते भइ मानोंगेतो वंदिता सूत्रकी रचनाभी भगवंतके विद्यमान छते

ही माननी पडेगी ? और जो आवश्यक पंचांगीमें "श्री श्रावक प्रतिक्रमण वंदिता सूत्र अनुसारे करे" ऐसा नही लिखा ! तैसेही साधुभी पंच महाव्रतकी आलोयणा तथा सूत्रोत्किर्त्तना पाक्षिकसूत्र अनुसारे करे, ऐसाभी आवश्यक सूत्रकी पंचांगीमें नहि लिखा है ? तोभी पाक्षिक सूत्रकी रचनाका पहिले पिछेका कुच्छ विचार न करके पाक्षिकसूत्रकों प्रमाणकर प्रतिक्रमणमें कहते कहलाते होतो वंदिता सूत्रकी इतनी अमान्य पणेकी शंका क्यों करतेहो? जेकर कहोंगे "देव याचना करनी और सूत्रसें नही मिलती" वास्ते इतना शंकादि परिश्रम करना पडता है. तबतो श्रीपन्नवणासूत्रमें साधुकों चारुं (४) भाषा बोलतां आराधक पणेका वचन भी कोइ सूत्रसें मिलता नही ? इत्यादि सूत्रोके पाठ भी तुमकों तुमारी शंका प्रमाणे उत्थापन करने पडेगा !! और सूत्रमें जैसें साधुके चार मूलसूत्र मान्य है, तैसे श्रावकके भी यह श्रावकावश्यक मूलसूत्रमेंही मान्य है १ तथा छ आवश्यकका पडिकमण आवश्यकमें जैसे साधूके पगामसिझाय है, तैसे श्रावकका पडिकमण आवश्यकमें श्राद्ध प्रतिक्रमण (वंदिता) सूत्र है २ और आवश्यक पंचांगीका सवा लाख ग्रंथ है, तिस्में श्रावकावश्यकमें वंदितासूत्र विद्यमान हैं ३ फिर एकका घरमें ५० गाथा कहनी, और दूसराका घरमें ४३ गाथा कहनेसें अर्थात् ही घरघरका वंदिता भया ! तैसे मूलसें है नही. मूलसेंही वंदिता सूत्र पचास गाथाकाही है ४ तथा ललित विस्तारामें तो समदृष्टी देवोका वैयावच्चादि करनेका गुण है, तैसा तिन्के गुणोका अनुवाद किया है ? परंतु कोइ तराकी देव याचना करनी लिखी नही. ने "ल-

पद कहेवुं युक्तछे. इत्यादि यह लेख देखके उक्तपद कह-
नेकाही व्यामोह नही करनां, क्योंकि जबतक तत्वका अ-
ज्ञातपणा होताहै तबतक मतांतर प्रसंगसें मतांतरियोका
अनादर वचनका आदर होजाताहै, परंतु तत्वका ज्ञातप-
णा होने पीछे भवभीरु पुरुषोकों गद्धेकापुंच्छ पकडणेम्वा-
फिक अनादर वचनका आदर करनां योग्य नहीहै, वास्ते
उक्त पृष्टकी पंक्ती १६ सें तथा परिच्छेद १३का पृष्ट(५१३)
पंक्ति १९सें जो लेख लिखाहै, तिसका आदरकर अन्यस्थ-
लजो "आराधनाविधीमार्ग पयन्नाका" (सम्मत्तस्सयसुद्धि)
यह अन्यार्थपदका कहना छोडके स्वस्थलजो श्रीवंदिता-
सूत्रमें (सम्मदिठीदेवा) यह स्वार्थ आत्मिक याचनाका
श्रुतस्थविर महाराज कृत पदही कहनां युक्तहै. इत्यादि
शंकोद्धारका पूर्वापर वचनका विचार करनेसें मेरा इरादा
"समदिठीदेवा" पद स्थापन करनेकाहै. परंतु सूर्योदय
लिखने लिखानेवालेका लेख मुजब उत्थापन करनेका नही
है. जेकर शंकोद्धारादिकमें पाठांतर लिखनेसेंही मेरेकों
"सम्मदिठीदेवा" पदका उत्थापक सूक्ष्म अपक्षपाती श्वतां-
बर विद्वजन सिद्धकर देंगे तो (सूरिराजेंद्र) अर्थात् सूरि
कहते पंडित तिन्के राजा जो वाचनाचार्यादि सामान्या-
चार्य तिन्के इंद्र जो भूत भविष्य वर्तमानमें विचरनेवाले
युगप्रधानाचार्य जो मेने द्रव्यभावसें विद्यमान गुरु धारन
कियेहै, और तिन्की समाचारि मेरी शक्ति मुजब में धा-
रन प्ररूपणा कर रहाहूं, और बाकी श्रद्ध रहाहूं, तिन्क
शाक्षीसें श्वेतांबर संघ एकत्र होके जो मेरेकों दंड फरमा-
वेंगे वहही दंड में धारन करुंगा, नही तो में मेरे अंतःक-
रनका इरादा म्वाफिक सदा शुद्धहीहुं. यहां कोइ मिथ्या

वाद करेगाकि "चतुर्थस्तुतिनिर्णयशंकोद्धार"की प्रस्तावना में तो प्रथम तुम "राजेंद्रसूरिजीकों" दिक्षोपसंपद (क्रियोद्धार) गुरु लिखते हो, और अब यहां (सूरिराजेंद्र) वर्त्तमान युगप्रधानाचार्यजीकों गुरुपदमें धारन किये लिखते हो, तो यह तुमारा दोनुं लेख हमकों तो पूर्वापर विपरीत भापन होतेहै. इत्यादि मिथ्यावादका समाधान सहित उत्तर यहहैकि जैसे काचकांवल (पीलिया) रोगवालेकों सपेत शंखभी विपरीत रंगके दिखते है! तैसे विपरीत श्रद्धावालेकों विपरीत लेख भापन होताहै! परंतु दोनुं लेख मेरी आत्मासें मेरे विपरीत नहीहै. कारणकि श्रीयुगप्रधानाचार्यजी तो सर्व आत्मिकधर्मि (जैनधर्मि,ओंके सदा सास्वत गुरु है, तैसे मेरेभी पहिले वोही गुरुथे, और अभभी वोही गुरुहै, परंतु जैनमें और दूसरेमें गुरु करनेमें आतेहै, वो तो गुणदोष देखकर ग्रहण करनेमें और त्यागनमें आतेहै, जबतक जैनसूत्रोंकी श्रद्धा प्ररूपणामें भेद नहीहै तबतक तो वो गुरु त्यागने योग्य नहीहै, और जैनसूत्रोंकी श्रद्धा प्ररुपणामें भेद पडने पीछे तो अवश्य वो गुरु जैनमें त्यागने योग्यहीहै, तैसेही जबतक श्रीविजयराजेंद्रसूरिजीके और मेरे जैनसूत्रोंकी श्रद्धा प्ररूपणामें भेद नही था, तबतक तो मेरे दीक्षोपसंपद (क्रियोद्धार) गुरु शिरके मुगटसमानथे, और अब सूर्योदय लिखने लिखानेवालेके लेख देखते श्रुतस्थविर (पूर्वधर) तथा बहुश्रुतोंके किये जैनसूत्रोंकी उत्थपाक बुद्धी राजेंद्रसूरिजीकी ज्ञात होनेसें जबतक यह उत्थापक बुद्धी रहेगी तबतक त्रिविध मन वचन कायासें तिन्का गुरुपदकों वोसराताहुं, और विद्यमान जंगमजुग प्रधान श्रीविजयसूरि राजेंद्रजी महाराज

का गुरुपदकों स्विकार करताहुं. अहो भव्यजिवो स्याद्वाद शैली अलंकृत अनादि कालका प्रचलित हुआ परमपवित्र जैनमतमें जैनसिद्धांतहै, परंतु इस हुंडाअवसर्पिणीकालमें भस्मग्रहादि अनिष्ट निमित्तोंके मिलनेसें अशुभ मिथ्यात्व मोहादि निबिड कर्मोके उदयसें कितनेक बहुलकर्मि जीव तो अपने कुविकल्पके प्रभावसें अशुद्ध परंपरासें भावस्तवमें द्रव्यस्तव करनेकी अशुद्ध प्रचलित रीतीका स्थापन करनेको शुद्ध आत्मिक याचनाका सूत्रको अशुद्ध पौद्गलिक याचनासें संलग्नकरके सामायिक सहित भावस्तवके प्रतिक्रमणमें द्रव्यस्तव (चोथीथुइ) स्थापनकर श्रुतस्थविरोका सूत्र वचन उत्थापनकर अपना भावस्तव खंडन कर रहेहै, और कितनेक तो परभवका भय न रखनेसें मात्र अपने मुखसें जो कोइ वचन निकाला होवे तिसको कोइ असत्य प्रपंचसेंभी सत्यकरके अपौद्गलिक सूत्र याचनाको जबरजस्तीसें पौद्गलिक ठहराके श्रुतस्थविरोका सूत्रवचन उत्थापके अपने मनमाने उत्सूत्र वचन स्थापन कर रहेहै. फिर कितनेकतो कोइ दूसरेने कोइके हितके अर्थ कहाकि द्रव्यस्तव (जिनपूजाके) अवसर द्रव्यस्तव (चोथीथुइ) सर्व बहुश्रुत करनेकी अपने ग्रंथोमें प्रतिपादन करतेहै तो सर्वथा चोथीथुइ उत्थापन करनेसें अपने मतमें क्या फायदा होनेकाहै? इत्यादि हितशिक्षा वचनको ईर्षा होनेसें उसको जूठा बनाकर अपना नाम बडाकरनेके लिये हठकदाग्रहसें दूसरेका हितवचनको लोकोके हृदयमें अहित स्थापन कर रहे है. और कितनेकतो अपने अरु अपने पक्षवालोके तरफ धर्म माननेवाले व्होत मनुष्योका समुदाय मिले तो पेट भराई अच्छी चले!!

इस्वास्ते पीतवस्त्रादिकका लिंगभेदकरके यह शुद्ध आत्मधर्म प्रकाशक जैनमतके नामसेंभी प्रस्तुत पुरुषोंने अनेक तरेहके मत उत्पन्न करेहै, और करते जातेहै, इन मतांतरीयोके मतकी जालसें बचके जो भव्यजिव जैनसूत्रोकी श्रद्धा प्रतिति रख पूर्वे बहुश्रुतोके लेख मुजब श्रुतस्थिविरोका सूत्रके अनुयायि वर्त्तेगा वोही परम पवित्र जैनधर्मके आराधक होके संसार भ्रमणसें बच जावेंगे. नही तो श्री जैनसूत्रोके उत्थापनेसें जमाली जैसे बडे बडे महापुरुषोकोंभी कितना दीर्घ संसार हो गया है! उन्पुरुषोके आगे आपण तो कुच्छभी गिणतीमें नही! फिर हम ज्यादा कहा कहे. यह मेरी परम मित्रतासें हितशिक्षाहै, सो अवश्य मान्य करोगे, जिस्सें आप सम्यक्तका आराधक होके श्री जिनप्रवचनानुसार चलोगे तो शिघ्रही अपना पदकों पावोगे. इस्वातमें कुच्छभी संशय रखना नही. "समजुकी घडी और मूर्खका जन्मारा" इस कहाणी मुजब समजुको ज्होत क्या कहना-पीछे जैसी जिस्की मरजी.

इति श्राद्धप्रतिक्रमण (वंदिता) सूत्र पचास गाथा श्रुतस्थविर (पूर्वधर) रचित निदर्शन चतुर्थ प्रस्ताव संपूर्णम्.



॥ अथ पंचम प्रस्ताव. ॥

सु. सं. अ. ठे. चोपडी पृ. ३ पं. २७ सें लिखाहेकि संघ समस्तें राजेंद्रसूरिजी तथा मी. चुनीलाल छगनचंदने एकांतमां जइ विचार करी योग्य निराकरण लाववानुं सुचव्याथी तेम करवामां आव्युं अने छेवटे वपोरनां अढी वागते समग्र भेगा थयेलां संघे तथा राजेंद्रसूरिजीए निचेनी मतलबनो लेखीत ठेराव कर्यो, आ प्रमाणे सात कलाकनां परिश्रमनुं संतोषकारक परिणाम आव्युं जोइ सघला घणा खुसी थया.

लेखीत ठरावनीं मतलब—पन्यासजी चतुरविजयजीने उपाश्रये तेमनी समक्ष राजेंद्रसूरिजीए पधारेला हता तथा संघ समस्त मलयो हतो, तेमनी वच्चेनो त्रणके चार थुइनो झगडो कांरे मुकी राजेंद्रसूरिजीने संघे विनंती करवाथी तेमणे चार थुइ मान्य करी छे अने तपगच्छनी समाचारी प्रमाणे जो वर्त्ते तेमने साधु मानवा, संवत १९५९ ना जेठवद १३ ने वार भोम.

☞ आ ठराव उपर राजेन्द्रसुरिजीए पोते तथा संघना पधारेला ग्रहस्थों शेठ नगीनदास झवेरचंद, देवचंद लालभाइ, खुशालभाइ फुलचंद, तथा सवाइचंद सुरचंद विगेरे घणा सख्सोए सहीओ करी छे; ने ए ठराव सर्वनी जाण मांटे तेमां विशेषे करीने ज्यां ज्यां "त्रण थुइ" नो मत प्रसरवा पाम्यो होय ते सर्व स्थले छपावीने मोकली आपवांनी भलामण करी समस्त संघ आदीश्वर भगवाननी जय बोलावी छुटो पड्यो हतो. "गुजरातमित्र— ता. २८ जुन १९०३"